वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

Vocational/Work Education
व्यावसायिक/ कार्य शिक्षा

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

संरक्षक	अध्यक्ष
प्रो. अशोक शर्मा	**प्रो. एल.आर. गुर्जर**
कुलपति	निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

संयोजक एवं सदस्य

** संयोजक	* संयोजक
डॉ. अनिल कुमार जैन	**डॉ. रजनी रंजन सिंह**
सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ	सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

प्रो. (डॉ) एल.आर. गुर्जर
निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रो. जे. के. जोशी
निदेशक, शिक्षा विद्या शाखा
उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

प्रो. दिव्य प्रभा नागर
पूर्व कुलपति
ज.रा. नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर

प्रो. दामीना चौधरी (सेवानिवृत्त)
शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रो. अनिल शुक्ला
आचार्य शिक्षा ,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

डॉ. रजनी रंजन सिंह
सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

डॉ. अनिल कुमार जैन
सह आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

डॉ. कीर्ति सिंह
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

डॉ. पतंजलि मिश्र
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

डॉ. अखिलेश कुमार
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

*डॉ. रजनी रंजन सिंह ,सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ 13.06.2015 तक

** डॉ. अनिल कुमार जैन, सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ 14.06.2015 से निरन्तर

समन्वयक एवं सम्पादक

समन्वयक (बी.एड.)
डॉ. कीर्ति सिंह
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सम्पादक
डॉ. अखिलेश कुमार
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम लेखन

1.	**डॉ सपना जोशी** (इकाई 1, 2,5) JLNTT कॉलेज, कोटा	2.	**डॉ. सुषमा सिंह** (इकाई 3) रीडर, JLNTT कॉलेज, कोटा
3.	**डॉ. मूलचन्द मीणा** (इकाई सं 4) सहायक आचार्य महाराणा प्रताप टी.टी. कॉलेज, कोटा	4.	**डॉ. पतंजलि मिश्र** (इकाई सं 6, 10) सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
5	**डॉ. अनिल कुमार जैन**(इकाई सं. 7) सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय**,** कोटा	6	**डॉ. प्रीति सिंह** (इकाई सं. 8) सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
7.	**डॉ. बी.एस. गौतम** (इकाई सं 9, 11) JLNTT कॉलेज, कोटा	8.	**डॉ. वीना यादव** (इकाई सं.12) सहायक आचार्य महाराणा प्रताप टी.टी. कालेज, कोटा

आभार

प्रो. विनय कुमार पाठक
पूर्व कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. अशोक शर्मा
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

प्रो. एल.आर. गुर्जर
निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

प्रो. करण सिंह
निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

डॉ. सुबोध कुमार
अतिरिक्त निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा

उत्पादन 2016, ISBN : ISBN : 978-81-8496-539-1

इस सामग्री के किसी भी अंश को व.म.खु.वि.वि., कोटा, की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। व.म.खु.वि.वि., कोटा के लिए कुलसचिव, व.म.खु.वि.वि., कोटा (राजस्थान) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अनुक्रमणिका

इकाई सं.	इकाई का नाम	पेज न.
1	भारत में व्यावसायिक शिक्षा का इतिहास : व्यावसायिक शिक्षा से संबंधित नीतियॉं	1
2	व्यावसायिक शिक्षा : प्रकृति, अर्थ, आवश्यकता तथा महत्व	14
3	शिक्षा और कार्य, वैश्वीकरण, कार्य और ज्ञान, जैंडर एवं विकलांगता संबंधित मुद्दे	26
4	कार्य एवं पाठ्यक्रम, शिक्षा में कार्य के प्रकार , क्षेत्रीय अनुभवों से सीखना/अधिगम ,सामुदायिक कार्य और सामाजिक सहभागिता	37
5	सम्प्रेषण एवं कोमल कौशल	50
6	श्रवण कौशल	67
7	प्रबंधन के मूलाधार	80
8	स्व प्रबंधन एवं समयप्रबन्धन	105
9	व्यक्तित्व का विकास	112
10	Functional English	123
11	औद्योगिक संघ और अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाऐं- आईएलओ वर्ल्ड बैंक, एफआईसीसीआई, एएसएस ओसीएचएएम, CII और एनएसडीएस	142
12	व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण से सम्बंधित नीतियाँ	158

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठकों से आग्रह

प्रिय पाठकों,

शिक्षक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2009 एवं 2010 में शिक्षक प्रशिक्षण के लिए दी गई अनुशंसाओं के क्रम में एनसीटीई द्वारा 2014 में तैयार किये गये पाठ्यक्रम की अनुपालना में विश्वविद्यालय ने अपनी विद्या परिषद् की स्वीकृति के पश्चात अन्तिम रूप में बने बी.एड. (ओडीएल) पाठ्यक्रम के अनुसार प्रथम वर्ष की स्व-अधिगम सामग्री (SLM) तैयार की है। यह पाठ्यसामग्री विश्वविद्यालय के शिक्षा संकाय के सदस्यों और विश्वविद्यालय से जुड़े हुए अन्य शिक्षाविदों के अथक प्रयास से तैयार की गई है। यह एनसीटीई द्वारा 2014 में सुझाये गये नये पाठ्यक्रम के प्रकाश में किया गया प्रथम प्रयास है। आप प्रबुद्ध पाठक हैं। आपको इस SLM के किसी विषय, उप विषय, बिन्दु या किसी भी प्रकार की त्रुटि दिखाई पड़ती है या इसके परिवर्द्धन हेतु आप कोई सुझाव देना चाहते हैं तो शिक्षा विद्यापीठ सहर्ष आपके सुझावों को अगले संस्करण में सम्मिलित करने का प्रयास करेगा। आप अपने सुझाव हमें निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा, रावतभाटा रोड, कोटा - 324010 या मेल soe@vmou.ac.in पर भेजने का कष्ट करें।

धन्यवाद

(डॉ. अनिल कुमार जैन)

निदेशक

शिक्षा विद्यापीठ

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

इकाई - 1

भारत में व्यावसायिक शिक्षा का इतिहास : व्यावसायिक शिक्षा से संबंधित नीतियाँ

History of Vocational Education in India: Policies related to Vocational Education

इकाई की रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 व्यावसायिक शिक्षा का इतिहास

- 1.3.1 वैदिक काल में व्यावसायिक शिक्षा
- 1.3.2 बौद्धिक काल में व्यावसायिक शिक्षा
- 1.3.3 मुस्लिम काल में व्यावसायिक शिक्षा

1.4 ब्रिटिश काल में व्यावसायिक शिक्षा

1.5 स्वतंत्र भारत में व्यावसायिक शिक्षा

- 1.5.1 विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग
- 1.5.2 माध्यमिक शिक्षा आयोग
- 1.5.3 कोठारी शिक्षा आयोग

1.6 कोठारी आयोग की निम्न सेकेण्डरी स्तर तथा उच्च सेकेण्डरी स्तर पर सिफारिशें

1.7 अंशकालीन व्यावसायिक शिक्षा

1.8 व्यावसायिक शिक्षा का प्रबंध

1.9 व्यावसायिक शिक्षा के कार्यक्रम

1.10 व्यावसायिक शिक्षा के लिए विशेष गुण

1.11 व्यावसायिक शिक्षा की समस्याएँ

1.12 सारांश

1.13 अभ्यास प्रश्न

1.14 संदर्भ ग्रंथ

1.1 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप निम्न बिन्दुओं को सकेगे -

- व्यावसायिक शिक्षा के इतिहास से परिचित होगे।
- ब्रिटिश काल में व्यावसायिक शिक्षा की अवधारणा को जानेगें।
- स्वतंत्र भारत में व्यावसायिक शिक्षा का प्रभाव देखेगे।।

- विभिन्न आयोगों के व्यावसायिक शिक्षा संबंधितसुझावों को जानेगे।
- व्यावसायिक शिक्षा के प्रबंधको समझ सकेंगे।
- व्यावसायिक शिक्षा से संबंधितसमस्याओं से अवगत होगे।

1.2 प्रस्तावना (Introduction)

व्यावसायिक जीवन का प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में सर्वाधिक महत्व होता है। किसी भी व्यवसाय में हम रोजगार प्राप्त किये बिना अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकते है। वस्तुत: जीवन का निर्माण किसी भी व्यवसाय से प्राप्त धन पर ही प्रमुख रूप से निर्भर करता है। व्यक्ति के रहन सहन के स्तर, कार्य की गति एवं समाज से संबंधितकार्यों पर किसी न किसी रूप में धर्नोपार्जन के स्त्रोत एवं प्राप्त धन की मात्रा का प्रभाव पड़ता है।

कहा जाता है कि ''जीविका-निर्माण से जीवन निर्माण अधिक महत्वपूर्ण है।'' यह कहावत व्यवसाय के महत्व को घटा देती है, लेकिन यह कहावत दार्शनिक अधिक है तथा व्यावसायिक कम/ जीवन निर्माण एवं जीविका निर्माण कभी भी अलग अलग नहीं हो सकते साथ ही जीवन निर्माण जीविका पर प्रत्यक्ष रूप से निर्भर है, जीवन निर्माण शून्य में नहीं हो सकता, जीवन निर्माण समाज में रहकर ही हो सकता है। व्यक्ति अपने व्यवसाय के माध्यम से ही सामाजिक कल्याणार्थ कार्य करता है तथा इसी से उसे व्यक्तिगत संतोषप्राप्त होता है। व्यवसाय का मनुष्य के सामाजिक जीवन पर तो प्रभाव पड़ता है साथ ही व्यवसाय का प्रभाव मनुष्य की विचार शक्ति, भावना एवं उसके व्यक्तित्व पर भी स्पष्ट रूप से पड़ता है। अत: आवश्यक हो जाता है कि व्यक्ति उचित व्यवसाय का चयन करें। उचित व्यवसाय का चयन करने हेतु व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है।

1.3 व्यावसायिक शिक्षा का इतिहास (History of Vocational Education)

आधुनिक भारत मे व्यावसायिक शिक्षा का जिस रूप में विकास हो रहा है, वह पाश्चात्य देशों के ग्रहण किये जाने के कारण पूर्णतया नवीन है। किन्तु प्राचीन भारत में इसका जो पुरातन रूप था, वह आज के रूप में सर्वथा भिन्न था। उस रूप की कल्पना मात्र से ही हमारी चेतना गुनगुना कर कहने लगती है कि प्राचीन काल में हमारा देश व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में चरम उत्कर्ष पर था। उस स्थिति में इस शिक्षा का अपकर्ष क्यों हुआ? किन्तु प्रतिकूल परिस्थितियों में जूझती हुई यह अतीत के गर्त में अदृश्य हो गई। किन कारण वश यह नवीन रूप धारण करके पुन: प्रकट हुई और प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रही है? इन प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए हमें भारत मे व्यावसायिक शिक्षा के इतिहास पर दृष्टिपात करना आवश्यक हो जाता है।

1.3.1 वैदिक काल में व्यावसायिक शिक्षा

वैदिक काल में व्यावसायिक शिक्षा का सुनियोजित विस्तार करके ही आर्य लोगों ने सभ्य जीवन की सभी वस्तुओं को अपने लिए उपलब्ध किया। इस शिक्षा से प्राप्त होने वाले ज्ञान के प्रमाण हमें इस काल के ग्रंथों में मिलते है। उदाहरण के लिए ऋग्वेदद में बांधों तथा नहरों का उल्लेख है। वैदिक साहित्य में सूती और ऊनी वस्त्रों, रंग साजी, कसीदाकारी, आभूषण, शास्त्रों, नौकाओं, पाषण की प्रतिभाओं, सौ पतवार वाले जलयानों आदि के विवरण मिलते है।

वैदिक युग में श्रम का विभाजन था और सब जातियों के व्यक्तियों के लिए विभिन्न प्रकार के कार्य एवं व्यवसाय निर्वादित थे। इन व्यक्तियों में से कुछ अपने शिल्पों और व्यवसायों का उच्च कोटि का ज्ञान रखते थे। यही व्यक्ति अपने पुत्रों एवं शिष्यों को व्यवसायों में शिक्षा प्रदान करते थे। इस प्रकार, व्यावसायिक ज्ञान एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होता रहता था। व्यावसायिक शिक्षा का यह अटूट क्रम राजपूत काल तक विधवत् चलता रहा। इस अवधि में भारत ने इस शिक्षा के क्षेत्र में चमत्कारी उन्नति की।

1.3.2 वैदिक काल में व्यावसायिक शिक्षा

वैदिक काल में धार्मिक एव आध्यात्मिक शिक्षा की प्रधानता थी। इसके विपरीत बौद्ध काल में धार्मिक शिक्षा के साथ साथ सामान्य शिक्षा एवं वैधानिक शिक्षा की भी मांग थी। अत: इस युग में व्यावसायिक शिक्षा के रूप में व्यवस्था में परिवर्तन होना स्वाभाविक था। बौद्ध काल में प्रचलित 19 शिल्पों का वर्णन ''मिलिन्द पान्हा'' में मिलता है। जिनमें से 10 की शिक्षा तक्षशिला विश्वविद्यालय में दी जाती थी। शिशुओं के लिए मठों में विभिन्न प्रकार के हस्तशिल्पों की शिक्षा की व्यवस्था थी। बौद्धधर्म के अनुयायियों और जनसाधारण के लिए अनेक लाभप्रद व्यवसायों की शिक्षा का उत्तम प्रबंध था। बौद्ध काल में चित्रकला, मूर्तिकला एवं भवन निर्माण कला की असाधारण प्रगति हुई।

1.3.3 मुस्लिम काल में व्यावसायिक शिक्षा

मुस्लिम शासकों के संरक्षण में ललित कलाओं और शिल्प कलाओं को आर्थिक प्रोत्साहन मिला। उत्तम कारीगरों को पारितोषिक भी दिये जाते थे। इस काल मे ललित कला और शिल्प कला में प्रशिक्षण देने के लिए व्यवस्थित विद्यालयों का प्रभाव था। दक्ष कारीगर अपने शिष्यों को इन कलाओं का प्रशिक्षण दिया करते थे। भारत के लगभग सभी मुस्लिम शासक शौकीन थे और उनके पास धन का अभाव नहीं था। अत: देश के समस्त व्यवसायों को उनका संरक्षण प्राप्त था। यही कारण है कि मुस्लिम काल में व्यवसायिक शिक्षा की चतुर्मुखी उन्नति हुई। इस काल का सबसे महत्वपूर्ण व्यवसाय वस्त्रों का बनाना था। इन वस्त्रों में साटन, मलमल और जरीदार, सूती, ऊनी, एवं रेशमी वस्त्र सम्मिलित थ।

भारत में मुस्लिम शासकों को अपने राज्य की सुरक्षा एवं सुदृढता के लिए समय समय पर युद्ध करने पडते थे। इसका स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि बारूद, भालों, बछियों, बन्दूकों आदि युद्ध सामग्री से संबंधित व्यवसायों की आसाधारण प्रगति हुई। अधिकांश मुस्लिम शासक और विशेष रूप से मुगल सम्राट ऐश्वर्य एवं विलासिता का जीवन व्यतीत करते थे। अत: इस जीवन से संबंधित स्थापत्य कला, चित्रकला, ललित कलाओं की शिक्षा कारखानों में दी जाती थी। अकबर के समय सब कारखाने एक सरकारी विभाग की अधीनता में थे। इन कारखानों में लड़के को विशिष्ट कलाओं एवं दस्तकारियों में शिक्षा प्राप्त करने के लिए किसी शिल्पकार का शिष्य बना दिया जाता था।

1.4 ब्रिटिश काल में व्यावसायिक शिक्षा

भारत मे ब्रिटिश काल का आरंभ सन् 1957 में प्लासी के युद्ध में अंग्रेजों की विजय के समय से माना जाता है। 1757 में 1947 तक अंग्रेजों ने भारत पर अखण्ड शासन किया । व्यापार के उद्देश्य से इस देश मे आने के कारण उनका ध्यान अपने आर्थिक हित पर केन्द्रित होना स्वाभाविक था। अत: उन्होंने एक क्रमबद्ध योजना के अनुसार भारतीय उद्योगों का विकास किया और ब्रिटिश उद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं को अपने मूल्य पर विक्रय करके, भारत के समस्य आर्थिक स्त्रोतों को शुष्क कर दिया।

जिस समय भारत के शासन का सूत्र अंग्रेजों के हाथ में आया, उस समय यहाँ व्यावसासिक शिक्षा प्रदान करने की पिता पुत्र एवं गुरू शिष्य की परम्परागत पद्धति प्रचलित थी। इस पद्धति ने भारत के उद्योग धंधों को चरम उत्कर्ष पर पहुंचा दिया और भारतीय वस्तुऐं यूरोप की मंडियों में भी पहुंचती थी। ईस्ट इंडिया कंपनी के धन लोलुप व्यापारियों ने उस पद्धति का गला घोंटकर, इसके अस्तित्व का एक चिह्न भी देश में नहीं रहने दिया। सुन्दरलाल के अनुसार इस असाधारण पतन का मूलभूत कारण था - ''अंग्रेजों का अपनी निर्धारित नीति के अनुसार भारत की ग्राम पंचायतों, शिक्षा प्रणाली, हजारों लाखों पाठशालाओं और हजारों साल से उन्नत उद्योग धंधों का नाश कर डालना।'' इन उद्योग धंधों में सर्वप्रथम नष्ट किया गया - भारत में सबसे अधिक उन्नतिशील वस्त्र उद्योग को। उसके पश्चात बारी आई काँच, कागज, धातु, जल पोत आदि उद्योगों की। इस प्रकार अंग्रेजों ने भारत को भारतीय वस्तुओं से रिक्त करके अंग्रेजी वस्तुओं में भर दिया।

भारतीय उद्योगों के विनाश का एक भयावह परिणाम यह हुआ कि लाखों शिल्पी बेरोजगार हो गये। उस समय का एक वीभत्स दृश्य हमें भारत के तत्काल गर्वनर जनरल, 'लार्ड विलियम बेटिक' के इन शब्दों में देखने को मिलता है - ''वाणिज्य के इतिहास में ऐसे दुर्भाग्य का अन्य उदाहरण मिलना कठिन है। जुलाहों की हड्डियों ने भारत के मैदानों को सफेद कर दिया है।''

इस प्रकार, चिरकाल से चली आने वाली व्यावसायिक शिक्षा की परम्परागत पद्धति सदैव के लिए काल में समा गई। एक लम्बे समय के बाद उसका स्थान ग्रहण किया - व्यावसायिक शिक्षा की पाश्चात्य पद्धति ने। परिणामत: इस शिक्षा के इतिहास में एक नया अध्याय प्रारंभ हुआ।

1- **1800 से 1857 तक व्यावसायिक शिक्षा** - इस अवधि में ईस्ट इंडिया कम्पनी ने व्यावसायिक शिक्षा की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। उसने कुछ ऐसी संस्थाऐं स्थापित की जिसका मुख्य उद्देश्य शासन की आवश्यकताओं की पूर्ति करना था। इन संस्थाओं में उल्लेखनीय है -

   1 रूड़की का टॉमसन इंजीनियरिंग कॉलेज, (1847)

   2 पूना का इंजीनियरिंग स्कूल (1854)

   3 कलकत्ता का इंजीनियरिंग कॉलेज (1856)

2- **1857 से 1902 तक व्यावसायिक शिक्षा** - सन् 1866 में पूना के इंजीनियरिंग स्कूल को विस्तृत करके कॉलेज का रूप दे दिया गया। सन् 1887 में महारानी विक्टोरिया की हर एक जयन्ती के अवसर पर बम्बई में ''विक्टोरिया जुबली टेकनिकल इन्स्टीट्यूट'' की स्थापना की गई। इस प्रकार ईस्ट इंडिया कम्पनी ने व्यावसायिक शिक्षा की तो कुछ व्यवस्था कर दी पर अपने औद्योगिक शिक्षा पूर्ण अपेक्षा की। इस शिक्षा के प्रति उनका ध्यान सर्वप्रथम 1877-78 के ''दुर्भिक्ष आयोग'' द्वारा आकर्षित किया गया, पर उसने इस शिक्षा में किसी भी प्रकार की रूचि प्रकट नही की।

   1882 में हंटर कमीशन ने व्यावसायिक शिक्षा के महत्व को समझकर सबसे पहले हाई स्कूल के पाठ्यकम में व्यावसायिक शिक्षा को स्थान दिया। कमीशन ने सुझाव दिया कि इस पाठ्यकम को दो वर्षों में विभाजित कर दिया जाए। पहला पाठ्यक्रम साहित्यिक हो और उन छात्रों के लिए हो जो विश्वविद्यालयों में प्रवेश करना चाहते हो। दूसरा पाठ्यक्रम व्यावसायिक हो, और उन छात्रों के लिए हो, जो विश्वविद्यालय में प्रवेश करने की बजाय किसी व्यावसायिक कार्य को अपनी जीविका का उपार्जन करने का साधन बनाना चाहते हो। इस सुझाव को सरकार की तत्काल

स्वीकृति तो प्राप्त नहीं हुई, पर कुछ समय के पश्चात हाई स्कूल के पाठ्यक्रम में व्यावसायिक विषयों को सम्मिलित कर दिया गया। सन् 1902 में संपूर्ण अंग्रेजी भारत में 80 व्यावसायिक स्कूल थे और उनमें छात्र संख्या 4804 थी।

3- **1902 से 1937 तक व्यावसायिक शिक्षा** - इस अवधि में व्यावसायिक शिक्षा की पर्याप्त प्रगति हुई। इसके अनेक कारण थे -

a) भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने प्रत्येक अधिवेशन में व्यावसायिक शिक्षा की मांग की। अत: सरकार को इस शिक्षा की ओर ध्यान देने के लिए बाध्य होना पड़ा।

b) भारत के अनेक उद्धार महानुभावों ने इस शिक्षा के लिए दान दिए और इसका आयोजन करने के लिए अनेक भारतीय सार्वजनिक संस्थाओं को संगठन हुआ।

c) भारतीय विश्वविद्यालयों ने इस शिक्षा के विभिन्न विषयों में डिग्री और डिप्लोमा के कार्यक्रम आरंभ किये।

d) सन् 1917 के सैडलर कमीशन ने इस शिक्षा के विकास के लिए दो मुख्य सुझाव दिए - पहला इण्टरमीडिएट स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जाय तथा दूसरा विश्वविद्यालयों में व्यावसायिक शिक्षा के कार्यक्रम आरंभ किए जाए।

e) सन् 1929 की हर्टाग समिति ने अनुरोध कया कि हाई स्कूल के पाठ्यक्रम में औद्योगिक एवं व्यापारिक विषयों को स्थान दिया जाय।

सरकार और जनता दोनों के सम्मिलित प्रयासों के फलस्वरूप इस काल में व्यावसायिक शिक्षा की विकास प्रक्रिया में तेजी आ गई। इसका प्रमाण यह है कि भारतीय छात्रों को इस शिक्षा की सुविधाएं प्रदान करने के लिए निम्न संस्थाओं का निर्माण किया गया -

1- इण्डियन स्कूल ऑफ साइंस, धनबाद
2- गवर्नमेंट स्कूल ऑफ टेक्लोनॉलाजी, मद्रास
3- इंडियन इंस्टीट्यूट साइन्स, बंगलौर
4- हाई स्कूल टेक्नोलॉजी इंस्टीट्यूट, कानपुर
5- स्कूल ऑफ केमिकल टेक्नोलॉजी, बम्बई
6- कॉलेज ऑफ इंजिनियरिंग एण्ड टेक्नोलॉजी, जावदपुर

4. 1937 से 1947 व्यावसायिक शिक्षा

इस अवधि में व्यावसायिक शिक्षा को तीन घटनाओं में प्रेरणा प्राप्त हुई जिसके फलस्वरूप उसके प्रसार में तीव्रता आ गई।

a) शिक्षित व्यक्तियों में बेरोजगारी की समस्या की बाढ के कारण भारतवासियों का ध्यान इस शिक्षा की ओर विशेष रूप से आकृष्ट हुआ।

b) भारतीयों में इस शिक्षा के प्रति अब तक जो संकीर्ण विचार थे, उनमें परिवर्तन हो गया।

c) द्धितीय विश्व युद्ध ने इस देश की व्यावसायिक शिक्षा में क्रांति उत्पन्न कर दी।

द्धितीय विश्वयुद्ध के दौरान ब्रिटिश सरकार को इस बात का प्रत्यक्ष अनुभव हो गया कि भारत में व्यावसायिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था की जानी अनिवार्य थी। अत: उसने एक देश व्यापी शिक्षा योजना का सूत्रपात किया, जिसके प्रमुख अंग इस प्रकार थे -

a	सन् 1940 में अनुसधान कार्य में सहायता देने के लिए ''वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद की स्थापना की।

b	1941 में ''दिल्ली पॉलिटेकनिक'' की स्थापना।

c	1945 में उच्चतर व्यावसायिक शिक्षा के आयोजन के विषय में परामर्श देने के लिए निलिनीरंजन सरकसा करी अध्यक्षता में ''सरकार समिति'' की नियुक्ति।

d	1945 में ''अखिल भारतीय प्राविधिक शिक्षा परिषद् की स्थापना

e	1947 में संपूर्ण देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विभिन्न स्तरों के वैज्ञानिक कार्यकर्ताओं की सूची तैयार करने के लिए 'वैज्ञानिक मानवीय शक्ति समिति' की स्थापना।

1.5 स्वतंत्र भारत में व्यावसायिक शिक्षा

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से ही हमारे राष्ट्रीय नेता भारत का औद्योगिक विकास करने के लिए कटिबद्ध है। यह तभी संभव है जब देश के प्रत्येक उद्योग को अपनी आवश्यकता के अनुसार प्रशिक्षित व्यक्ति उपलब्ध हो। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए व्यावसायिक शिक्षा का सुनियोजन अनिवार्य है। इस विषय में स्वतंत्र भारत में नियुक्त किए जाने वाले शिक्षा - आयोग ने अत्यन्त महत्वपूर्ण सुझाव दिये है। 'योजना आयोग' ने अपने विचारों से इन सुझावों को समृद्ध बनाया है।
भारत के प्रशासकों ने इन सुझावों, विचारों और अपने स्वयं के अनुभवों के आधार पर पंचवर्षीय योजनाओं में व्यावसायिक शिक्षा से संबंधित अनेक प्रकार के कार्यक्रम संचालित किये है। इनके परिणामस्वरूप, इस शिक्षा की आश्चर्यजनक प्रगति हुई। विभिन्न शिक्ष आयोगों ने व्यावसायिक शिक्षा से संबंधितसुझाव प्रस्तुत किये है।

1.5.1 विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-49) - ने व्यावसायिक शिक्षा के महत्व को स्वीकार करके अनेक सुझाव दिये जिनमें से निम्न उल्लेखनीय है।

a)	प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा में कृषि की शिक्षा सर्वप्रथम स्थान दिया जाना चाहिए।

b)	वाणिज्य की शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को 3 या 4 प्रकार की विभिन्न व्यावसायिक फर्मों में व्यावसायिक कार्य करने का अवसर दिया जाना चाहिए।

c)	वर्तमान इंजीनियरिंग एवं टेक्नोलॉजी की संस्थाओं को देश की राष्ट्रीय सम्पत्ति समझा जाना चाहिए और उनकी उपयोगिता में वृद्धि की जानी चाहिए।

d)	देश की विभिन्न आवश्यक्ताओं को पूर्ण करने के लिए इंजीनियरिंग की विभिन्न शाखाओं में विभिन्न प्रकार की संस्थाओं का शिलान्यास किया जाना चाहिए।

e)	उच्च व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने के लिए टेक्नोलॉजीकल संस्थाओं को शीघ्र सृष्टि की जानी चाहिए।

1.5.2 माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) - ने माध्यमिक शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य छात्रों में व्यावसायिक कुशलता की उन्नति करना बताया। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए माध्यमिक शिक्षा आयोग ने जो सुझाव दिये, उनमें महत्वपूर्ण है -

a)	माध्यमिक शिक्षा में औद्योगिक एवं व्यावसायिक विषयों को स्थान दिया जाना चाहिए।

b)	ग्रामीण स्कूलों में कृषि शिक्षा की सुविधाओं में विस्तार किया जाना चाहिए। अत: इन स्कूलों की व्यवस्था की जाना चाहिए अत: इन स्कूलों में उद्यान – विज्ञान, पशुपालन एवं कुटीर उद्योग-धंधों की शिक्षा व्यवस्था की जानी चाहिए।

c) औद्योगिक क्षेत्रों में टेक्नीकल स्कूलों की बहुत बड़ी संख्या में स्थापना की जानी चाहिए।

d) बड़े नगरों में टेक्नॉलॉजिकल इंस्टीटयूट का निर्माण किया जाना चाहिए।

e) उद्योगों पर ''शिक्षा कर '' लगाया जाना चाहिए और इस पकार प्राप्त होने वाले धन को ''व्यावसायिक शिक्षा का विस्तार करने में व्यय करना चाहिए।

1.5.3 कोठारी शिक्षा आयोग (1964-66) - ने देश के औद्योगिकीकरण को सफल बनाने के लिए व्यावसायिक शिक्षा की उत्कृष्ट व्यवस्था को आवश्यक बताया और इस संबंधमें अधोलिखित मुख्य सुझाव प्रस्तुत किये -

a) विद्यालय स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा के पाठ्यक्रम अपने आप में संपूर्ण होने चाहिए , ताकि छात्रों को उच्च शिक्षा संस्थाओंमें शिक्षा ग्रहण करने में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव न हो।

b) औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थओं में सर्वेक्षण के आधार पर प्रशिक्षण की सुविधाओं का अधिक से अधिक विस्तार किया जाना चाहिए।

c) विद्यालय शिक्षा समाप्त करने वाले छात्रों को व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए पत्राचार पाठ्यक्रमों, अल्पकालीन पाठ्यक्रमों एवं संक्षिप्त सघन पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जानी चाहिए।

d) टेक्नीकल स्कूलों एवं औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं में व्यावहारिक कार्य पर विशेष बल दिया जाना चाहिए एवं उनको उत्पादनोन्मुखी बनाया जाना चाहिए।

e) उच्चतर माध्यमिक स्तर पर शिक्षा को अधिक से अधिक व्यावसायिक बनाया जाना चाहिए। इस स्तर पर वैज्ञानिक एवं औद्योगिक कार्यों के विभिन्न पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जानी चाहिए।

1.6 कोठारी आयोग की निम्न सेकेण्डरी स्तर तथा उच्च सेकेण्डरी स्तर पर सिफारिशें

a) निम्न सेकेण्डरी स्तर पर (Lower secondary stage) – इसके अन्तर्गत कमीशन द्वारा निम्न सिफारियों दी जाती है

1- **टर्मिनल प्रोग्राम -** इसके अंतर्गत तकनीकी स्कूलों, दोनों प्राथमिक व उच्च विद्यालयों में टर्मिनल कार्यों का आयोजन किया जाना चाहिए। जिसमें विद्यार्थियों को उद्योगों में शामिल होने में समर्थता प्राप्त हो सके।

2- **ग्रामीण बालकों की शिक्षा -** व्यावसायिक धंधे तथा सामान्य शिक्षा में सुधार लाने के लिए ग्रामीण बालकों की शिक्षा का प्रबंध किया जाना चाहिए।

3- **दाखिले की आयु घटाना -** इसके अंतर्गत दाखिले की आयु घटा दी जाये, जिससे विद्यालय छोड़ने वाले विद्यार्थी इन संस्थाओंके अन्तर्गत दाखिला प्राप्त कर सकें।

4- **लड़कियों की शिक्षा -** लडकियाँ अधिकतर स्कूल छोड देती है इसलिए उन्हें सामान्य शिक्षा के साथ गृह विज्ञान में अधिक शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए।

5- **आंशिक समय के पाठ्यक्रम -** विद्यार्थियों को अपनी कुशलता बढ़ाने के लिए आंशिक समय के आधार पर बहुत से पाठ्यक्रमों का प्रबंध किया जाना चाहिए, जिससे सातवी व आठवी के बाद विद्यालय छोड़ने वाले बालकों को घरेलू काम में नौकरी देनी चाहिए।

b) उच्च सेकेण्डरी स्तर पर (Higher secondary level) – इसके अंतर्गत शिक्षा के व्यावसायीकरण के संदर्भ में आयोग ने विचार किया - 'हम जो सुधार करना चाहते है उसमें बड़ा सुधार यह है कि उच्च सैकेण्डरी शिक्ष को व्यावसायिक शिक्षा बनाया जाना चाहिए व व्यावसायिक कोर्सों कें दाखिले को सारे दाखिले का 50 प्रतिशत बनाया जाए।''

" One of the major reforms we envisage is to vocationalise higher education and to raise the enrolment in the vocational course at this stage of 50% the total enrolment. "

आयोग द्वारा निम्न सिफारिशें प्रस्तुत की गयी -

1- **उद्योग के अंतर्गत व्यावसायिक कोर्स -** अंशकालीन व्यावसायिक कोर्स की उद्योग में लगे व्यक्तियों के लिए व्यवस्था की जानी चाहिए।
2- **व्यावसायिक संस्थाओं में कोर्स का विस्तार -** व्यावसायिक संस्थाओं के अन्तर्गत (I.T.I) में अत्यधिक कार्यों की व्यवस्था की जानी चाहिए।
3- **लघुकालीन पाठ्यक्रम -** नौकरी कर रहे विद्यार्थी अपनी योग्यता में वृद्धि कर सके, इसके लिए लघुकालीन पाठ्यक्रमों का प्रबंध किया जाना चाहिए।

1.7 अंशकालीन व्यावसायिक शिक्षा (Part time vocational Education)

अ) निम्न सैकेण्डरी स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा

आयोग की सिफारिश के अनुसार अंशकालीन व्यावसायिक शिक्षा इस स्तर पर प्रदान की जानी चाहिए। इस प्रकार की शिक्षा उन बालकों के लिए होनी चाहिए जिनकी इस स्तर पर पढ़ाई छूट गयी है। लड़कों के लिए कृषि के अन्तर्गत व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। लड़कियों के लिए इसके अंतर्गत अंशकालीन, गृहविज्ञान, सिलाई, कला आदि की व्यवस्था होनी चाहिए।

b) उच्च सेकेण्डरी स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा

उच्च सेकेण्डरी स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा में निम्नलिखित पाठ्यक्रम शामिल होगे -

1- आंशिक समय का पाठ्यक्रम दस्तकारी कार्य करने वालों के लिए।
2- कृषि के कार्य को अपनाने वाले के लिए आंशिक समय का कृषि पाठ्यक्रम।
3- जिनकी सिफारिश उच्च स्तर पर भी गई लडकियों के लिए उन पाठ्यक्रमों के नमूने।
4- उन व्यक्तियों के लिए विशेष अंश कालीन कोर्स की व्यवस्था की जानी चाहिए जो व्यक्ति स्वरोजगार में उलझे है।

1.8 व्यावसायिक शिक्षा का प्रबंध (Administration of vocational Education)

अंशकालीन एवं पूर्णकालीन व्यावसायिक शिक्षा कुशल प्रबंधन पर निर्भर करती है। इस विषय पर आयोग द्वारा सिफारिश की गई कि राज्य के शिक्षा विभाग के अंतर्गत विशेष सेक्शन खोले जायेगे जो उद्योग के निकट सहयोग में कार्य करेंगे। केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्य सरकारों को विशेष ग्राण्ट देना चाहिए। कमीशन के द्वारा कहा गया -''संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा संघीय ग्राण्टों के द्वारा ही

सेकेण्डरी स्कूलों में शिक्षा का व्यावसायीकरण संभव है। और वह यह प्रयोग भारत में मूल्यवान पाठ है।''

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के द्वारा व्यावसायिक शिक्षा पर निम्न विचार प्रकट किये गये है -

1- व्यावसायिक संस्थानों और पाठ्यचर्याओं को स्थापित करने का दायित्व सरकार पर और सार्वजनिक व निजी क्षेत्र के सेवा नियोजको पर होगा जिसके अन्तर्गत सरकार, स्त्रियों, ग्रामीण/जनजातियों के विद्यार्थियों व समाज से वंछित वर्ग व विकलांगों के लिए समुचित कार्यक्रम शुरू किये जायेगे।
2- व्यावसायिक शिक्षा अपने में एक विशिष्ट धारा होगी जिसका उद्देश्य हर क्षेत्रों के चुने गये विद्यार्थियों को तैयार करना होगा।
3- व्यावसयिक पाठ्यक्रमों के स्नातकों को अवसर दिये जायेंगे, जिनके फलस्वरूप वे पूर्ण निर्धारित शर्तों के अनुसार व्यावसायिक विकास कर पायेगें। कैरियर में उन्नति पा सकेगे व सामान्य तकनीकी एवं उच्च स्तरीय व्यवसायों के कोर्सों में प्रवेश पा सकेंगे।
4- उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में शैक्षिक धारा के स्नातकों के लिए उच्च स्तरीय व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का प्रबंध किया जाएगा।
5- व्यावसायिक शिक्षा पाकर निकले विद्यार्थियों में से अधिकतर को या तो नौकरी मिले या वे अपना रोजगार स्वयं अपना सके। व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को पुननिरीक्षण नियमित रूप से किया जा सके।

1.9 व्यावसायिक शिक्षा के कार्यक्रम (vocational Education Programmes)

1 **8+स्तर के लिए** - व्यावसायिक शिक्षा पर राज्य विभागों द्वारा अलग अलग राज्यों में 8 + के विद्यार्थियों के लिए प्रयोगात्मक विधियों द्वारा छोटे स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा का प्रबंध किया जाये।

2 **10 + के स्तर के लिए** ' NCET द्वारा बताई गई बातों को मध्यस्थ रखते हुए SCERT द्वारा 10 + स्तर के लिए कार्यक्रमों की रचना की जायेगी।

3 **इंजीनियरिंग व तकनीकी में व्यावसायिक श्रेणियाँ (Vocational courses in Engineering and Technology) -** इंजीनियरिंग व तकनीकी में 10+ स्तर के विद्यार्थियों को अनेक सुविधाएं देने के लिए 100 से अधिक व्यावसायिक संस्थाऐं स्थापित की जायेगी।

4 **विशिष्ट कार्यक्रम (Tertiany level programme) -** चुने हुए बहुत से तकनीकी संस्थाओं, अधीनस्थ कॉलेजों, विश्वविद्यालयों तथा विशिष्ट संस्थानों में व्यावसायिक विषयों में डिप्लोमा, एडवान्स डिप्लोमा कार्यक्रम तथा स्नातक कार्यक्रम चलाये जायेगें।

1.10 व्यावसायिक शिक्षा के लिए विशेष समूह (Special Group for vocational Education)

1- **ग्रामीण क्षेत्रों के लिए बनाये गये कार्यक्रम (For rural sector) -** औपचारिक कार्यक्रमों के माध्यम से भागों में अविभाजित रूप से ITI , अन्य व्यावसायिक प्रशिक्षण

संसथाओं, सेकेण्डरी विद्यालयों, महाविद्यालयों व विशिष्ट संस्थाओं द्वारा व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जायेगी।

2- **उद्योग व समुदाय संबंधी (Innolving Industry community)** – सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों के उद्योगों के लिए व्यावसायिक शिक्षा में उचित नीतियों का निर्माण किया जायेगा।
3- **विकलांगों के लिए विशिष्ट संस्थान (Special Institute for Handicapped)** – व्यावसायिक शिक्षा विकलांगोंको प्रदान करने के लिए केन्द्र की स्थापना की जायेगी।
4- **विशिष्ट समुदाये के लिए विभिन्न कार्यक्रम (Programme for special group)**- विशिष्ट समुदायों व कार्य कर रहे व्यक्तियों की भलाई हेतु विभिन्न इंजीनियरिंग कॉलेज, बहु तकनीकी संस्थान, ITI तथा दूसरे व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने वाले संस्थान, अंशकालीन व्यावसायिक श्रेणियां चलायेगें।
5- **कमजोर वर्गों के लिए विशिष्ट संस्थान (Special institutes for weaker sections)** – पिछड़ा वर्ग, कमजोर वर्ग व महिलाओं के लिए व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने वाले संस्थान खोले जायेगे जो आवश्यकता की पूर्ति हेतु होंगें।

1.11 व्यावसायिक शिक्षा की समस्याएं (Problems of vocational education)

ब्रिटिश शासन की नीति के अनुसार भारतीय कच्चा माल विदेशों को जाता था और वहां से तैयार माल भारत में आता था। अंग्रेजों ने भारतीय औद्योगिकीकरण की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात इस ओर भारत सरकार का ध्यान गया और देश में तेजी से उद्योग धंधों के प्रसार की नीति अपनायी गई। व्यावसायिक शिक्षा को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। जिनमें प्रमुख है -

1- **श्रम के प्रति अनुचित दृष्टिकोण -** हमारे देश में अपना कार्य अपने हाथ से करना, गर्व की दृष्टि से नहीं देखा जाता है। वर्ण व्यवस्था पर आधारित समाज में श्रम का कार्य एक विशेष के लोगों तक ही सीमित कर दिया गया। अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली ने भारतवासियों की ''सफेद कालर बाबू'' बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। परिणामत: भारतवासियों में श्रम करना घृणा की दृष्टि से देखा जाने लगा। जब तक शिक्षा के माध्यम से श्रम के प्रति समुचित भावना जागृत न होगी, श्रम को गौरवपूर्ण नहीं समझा जायेगा, तब तक समस्या बनी रहेगी।
2- **तकनीकी मानव शक्ति की आवश्यकता -** भारत मे मानव शक्ति की गतिशीलता का अभाव है। बढ़ती हुई जनसंख्या ने व्यावसायिक शिक्षा में गुण तथा मात्रा दोनों में ही वृद्धि की है। लेकिन गतिशीलता न होने के कारण मानव शक्ति दूसरों देशों की प्रगति की तुलना में पीछे रही है। वुड के अनुसार -''भारत का यह बहुत बड़ा दुर्भाग्य रहा है कि व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् भी व्यक्ति को उसके उपयोग प्राप्त नहीं होता है और उसका परिणाम यह होता है कि यहां के व्यक्ति दूसरे देशों की तुलना में पिछड जाते है जहॉं दूसरे देश अपने विकास की प्रक्रिया का अध्याय समाप्त करते है, वहां से भारत के लोग आरंभ करते है।''
3- **नई संस्थानों की मांग -** व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में प्रशिक्षित व्यक्तियों की कमी है इसलिए भी ऐसी शिक्षण संस्थाऐं अधिक संख्या में नहीं खोली जा सकती। इस तरह की संस्था में अधिक

धन तथा श्रम की आवश्यकता भी होती है। कुछ संस्थाऐं खुली है लेकिन वहां व्यावसायिक शिक्षा नहीं दी जाती केवल पुस्तकीय ज्ञान प्रदान कराया जाता है जिससे में व्यावसायिक शिक्षा का उद्देश्य पूरा नहीं होता है।

4- **प्रशासन विभाग की कुशलता -** भारत में ऐसा अनुभव किया जाता है कि यदि प्रशासन विभाग अपने कार्य में रूचि रखता है तो वह विभाग मे संतोषजनक प्रगति प्रकट करता है। प्रशासन विभाग की दो प्रमुख समस्या है -

1. कुछ क्षेत्रों में एक व्यक्ति पर कार्य का बोझ बहुत अधिक और इसका परिणाम कार्य कुशलता का न बढ़ना।
2. एक ही कार्य के लिए आवश्यकता से अधिक व्यक्तियों का होना जिसमें वे एक दूसरे के ऊपर जिम्मेदारी देकर अपने उत्तरदायित्व से मुक्त कर लेना चाहते है।

अत: योजना आयोग में इस प्रकार का सुझाव दिया है कि व्यावसायिक शिक्षा के समस्तर क्षेत्रों में व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से कार्य भार डाला जाए।

5 **संकीर्ण पाठ्यक्रम -** अभी तक लोगों का ऐसा विचार रहा है कि व्यावसायिक शिक्षा का उद्देश्य पढा लिखा मजदूर बनाना है। वास्तविकता यह है कि व्यावसायिक शिक्षा श्रम के प्रति निष्ठा पैदा करती है। इसके लिए आवश्यक है कि हर क्षेत्र में व्यावसायिक शिक्षा के साथ साथ सामान्य शिक्षा भी दी जाय। जिससे यह संकीर्णता दूर हो तथा कुशल टेक्नीशियन की संख्या में वृद्धि हो।

6 **शिक्षा का माध्यम -** व्यावसायिक शिक्षा के लिए पं. जवाहर लाल नेहुरू ने अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाने की सिफारिश की थी। उनका विचार था कि विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा का साहित्य अंग्रेजी भाषा में आधिकांशत: उपलब्ध है। प्रश्न यह है कि भारत के कितने लोग अंग्रेजी जानते है? इसलिए विज्ञान तथा तकनीकी शिक्षा जनसाधारण को प्राप्त न हो सकी। यदि तकनीकी शिक्षा को भारतीय भाषाओं में उपलब्ध किया जाये तो निश्चित ही इस क्षेत्र में तीव्रगति से प्रगति होगी।

7 **अध्यापकों का अभाव -** भारत में इंजीनियरिंग तथा तकनीशियनों की मांग बहुत रही है। अध्यापन के क्षेत्र में अधिक पैसा नहीं मिल पाता और साथ ही व्यक्तिगत कार्य करने की संभावना भी कम रहती है। अध्यापक का सामाजिक स्तर भी अधिक नहीं आंका जाता, इंजीनियर को अध्यापक में अधिक महत्व दिया जाता है जबकि इनका निर्माण करने वाले अध्यापक ही है।

8 **कार्यशालाओं के अभ्यास के लिए उचित व्यवस्था -** तकनीकी तथा इंजीनियरिंग कॉलेजों में अच्छी कार्यशालाओं का अभाव रहता है। इस प्रकार यह समस्या दो रूपों में प्रकट होती है -

1 अच्छी कार्यशालाओं का अभाव।

2 कार्यशालाओं में प्रशिक्षणार्थियों का अधिक होना।

इस प्रकार यदि कार्यशालाएँ अच्छी है भी तो कार्य करने वालों की संख्या इतनी अधिक होती हैं कि वे लक्ष्य भी प्राप्त नहीं कर पाते।

9 **विद्यालयों के पश्चात की शिक्षा -** कॉलेज तथा विद्यालयों में निकलने के बाद विद्यार्थी वास्तविक कार्यक्षेत्र में अपने आपको पिछड़ा हुआ पाता है। इसके लिए आवश्यक है कि प्रात:

तथा सांयकाल के समय आधुनिकतम ज्ञान देने के लिए विशेष कक्षाओं का आयोजन किया जाये। इसके दो लाभ होंगे। एक तो यह कि वे अब तक की प्रगति की जानकारी रखेगें और दूसरे वे समय का सदुपयोग करेंगे। समय समय पर सेवाकालीन कार्यक्रम चलाये जाये।

10 **अनुसंधान -** भारत में अनुसंधान की अत्यधिक आवश्यकता है। यह अनुसंधान वस्तुओं के गुणों को विकसित करना, नये समान बनाना, खतरो को दूर करना, कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करना और स्तर का निर्धारण करना, आदि क्षेत्रों में ही हो सकता है। इसके लिए इंजीनियरिंग डिजाइन, रचना, कार्य प्रणाली आदि के माध्यम से अनुसंधान को इस योग्य बनाया जा सकता है कि हम देश और विदेशों में अपनी वस्तुओं के बाजार का निर्माण कर सके।

11 **राज्य उद्योग तथा तकनीकी शिक्षा में सहयोग का अभाव -** तकनीकी शिक्षा के प्रचार के समय राज्य को इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि उसे कितने कर्मचारियों की आवश्यकता है। बिना किसी योजना के इंजीनियर एवं तकनीशियनों का निर्माण कराया जाता है। अच्छा तो यह हो कि राज्यअपनी आवश्यकताओं का सर्वे करे और इसके बाद उतने ही व्यक्तियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था करें।

1.12 सारांश

शिक्षा का व्यवसाय आधारित, व्यावसायिक पाठ्यक्रम एवं लचीलापन को लिए हुए होना चाहिए जो व्यावसायिक प्रतीत होता है। आज देश की आर्थिक और सामाजिक परितर्वनशील अवस्थाओं का सामना करने हेतु विद्यालयों द्वारा पुस्तकीय ज्ञान के साथ व्यवसाय आधारित ज्ञान हेतु अभिप्रेरित करना चाहिए। व्यावसायिक तैयारी की प्रभावशाली व्यवस्था में निरंतर विस्तार का जारी रहना देश की अनिवार्य आवश्यकता है। जिससे विद्यार्थी व्यवसाय प्राप्त करने के लिए कुंठाओं से ग्रसित नहीं होगे तथा अपने संवेगों को संतुलित रखेंगे। जिससे ऐसे उत्पादक नागरिक प्राप्त होगें जो देश के आर्थिक , राजनैतिक व सामाजिक उन्नयन के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकेंगें।

1.13 अभ्यास प्रश्न

1- वैदिक काल एवं बौद्ध काल में व्यावसायिक शिक्षाकी स्थिति कैसी थी?
2- ब्रिटिश काल में व्यावसायिक शिक्षा के इतिहास को समझाइये।
3- भारत में प्रचलित व्यावसायिक शिक्षा की प्रमुख समस्याओं का वर्णन कीजिये।
4- ‘‘ व्यावसायिक शिक्षा अनेक राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर सकती है। इस कथन की विवेचना कीजिये।
5- ‘‘भारत में स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात व्यावसायिक शिक्षा का विकास बड़ी उपलब्धियों में से एक रहा है।’’ इस कथन को अपने शब्दों में व्यक्त करिये।
6- कोठारी आयोग की निम्न सेकेण्डरी स्तर तथा उच्च सेकेण्डरी स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा के संबंधमें की गयी सिफारिशों को बताइये।
7- ‘‘ व्यावसायिक शिक्षा का प्रबंध’’ पर टिप्पणी लिखिये।

1.14 संदर्भ ग्रंथ

- *मंगल, जे.पी., माध्यमिक शिक्षा एवं विद्यालय प्रबंध, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 2009*

- भट्नागर, सुरेश तथ वशिष्ट कमला, शैक्षिक प्रबंध और शिक्षा की समस्यायें, आर.लाल, बुक डिपो, मेरठ, 2009
- चौधरी, राम लखन तथा उपाध्याय, राधाबल्लभ, भारतीय शिक्षा की सामयिक समस्याऐं, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1981
- भट्नागर, सुरेश तथ वशिष्ट कमला, शैक्षिक प्रबंध और शिक्षा की समस्यायें, आर.लाल, बुक डिपो, मेरठ, 1996
- वशिष्ट, के.के., विद्यालय संगठन एवं भारतीय शिक्षा की समस्यायें, लायल बुक डिपो, मेरठ, 1983
- वर्मा, रामपाल सिंह, विद्यालय संगठन एवं स्वास्थ्य शिक्षा, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 2003
- वलिया, एम.एन. तथा पुरोहित, जेड़, एन.त्र ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और समस्याएं, दी इण्डियन पब्लिकेशन, अंबाला, 1976
- व्यास, हरिशचन्द्र तथा व्याम, कैलाश चन्द्र, शैक्षिक प्रबंध और शिक्षा की समस्याएं, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली, 1993

इकाई - 2

व्यावसायिक शिक्षा : प्रकृति, अर्थ, आवश्यकता तथा महत्व

Vocational Education: Nature, Meaning, Need and Importance

इकाई की रूपरेखा

2.1 उद्देश्य
2.2 प्रस्तावना
2.3 व्यावसायिक शिक्षा का अर्थ
2.4 व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता
2.5 व्यावसायिक शिक्षा का महत्व
2.6 व्यावसायिक शिक्षा के सिद्धान्त
2.7 शिक्षा के व्यावसायीकरण का धीमा विकास
2.8 व्यावसायिक शिक्षा के संबंधमें सुझाव
2.9 सारांश
2.10 शब्दावली
2.11 अभ्यास प्रश्न
2.12 संदर्भग्रंथ

2.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप निम्न पक्षों को समझ सकेंगे -

- व्यावसायिक शिक्षा के अर्थ से परिचित होगें।
- व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता को जानेगें।
- व्यावसायिक के महत्व को समझ सकेंगे।
- व्यावसायिक शिक्षा के सिद्धान्त के बारे में जानेगें।
- व्यावसायिक शिक्षा से संबंधितसुझावों को जान सकेंगे।

2.2 प्रस्तावना

भारतीय सभ्यता और संस्कृति के उदय के साथ ऋग्वेद मे इस बात के प्रमाण मिलते है कि प्राचीन काल में भी लोगों ने खेती तथा अन्य कार्यों के लिए बांध बनाकर नहरों का निर्माण किया। मोहनजोदड़ों और हड़प्पा की खुदाई से प्राप्त खण्डहरों एवं वस्तुओं ने इस बात पर प्रकाश डाला है कि भारत वर्ष व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में सदैव अग्रणी रहा है। सिकन्दर भी अपने साथ यहां के लोहे की वस्तुएं ले गया, जो यहां के उद्योग धन्धों को प्रकट करती है। विश्व के प्रत्येक भाग में

भारतीय उद्योग तथा व्यावसाय के प्रमाण आज भी प्राप्त है। समय के साथ साथ भारत इस क्षेत्र में पीछे रह गया और अन्य देश जो सभ्यता तथा संस्कृति के नाम पर पिछड़े हुए कहे जाते थे, आज भारत को व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में निर्देशन दे रहे है।

व्यावसायिक शिक्षा का आधुनिक इतिहास ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन से शुरू होता है। शिक्षा को व्यावसाय में कैसे जोड़ा जाए? यह प्रश्न विशेषज्ञों को लगातार झकझोरता रहा है। डिग्री लिए हुए व्यक्तियों को नौकरियों की तलाश में दर-दर भटकना और बेरोजगारी के दिनों में हताशा तथा कुंठा के साथ जीवन जीना पड़ता है। इससे कैसे निजात पाई जाए? अनेक आयोगों ने इस पर विचार किया लेकिन जनसंख्या के अविरल प्रभाव तथा नीतियों के अभाव ने इस समसया को और अधिक जटिल बना दिया है। शिक्षा पर से समाज का विश्वास उठ गया है, डिग्रियों ने अपनी अस्मिता को खो दिया है और आज का युवक और भटकाव की स्थिति में है। अत: व्यावसायिक शिक्षा की अनिवार्यता हो गयी है।

2.3 व्यावसायिक शिक्षा अर्थ (Meaning of Vocational Education)

व्यावसायीकरण का सामान्य अर्थ किसी भी व्यवसाय में प्रशिक्षण से है। कुछ लोगों के अनुसार इसका अर्थ किसी व्यवसाय विशेष में प्रशिक्षण से है। जिसका उद्देश्य पाठ्यक्रम की सफल प्राप्ति के पश्चात् काम की दुनिया में दाखिल होने के लिए किसी विशेष व्यापार कला, कौशल अथवा व्यवसाय इत्यादि सीखना है। ऐसे शिक्षण कार्यों में साधारण शिक्षा के पाठ्यक्रम भी शामिल होने चाहिए जो किसी व्यवसाय विशेष में विद्यार्थी को उसके भावी जीवन में किसी निश्चित व्यवसाय की तैयारी हेतु अभिरूचियों का प्रशिक्षण देते रहे।

व्यावसायिक शिक्षा को विभिन्न लोगों अपने तरीके से परिभाषित करते है। कुछ लोग इसे किसी व्यवसाय प्रशिक्षण से अधिक नहीं मानते। जहॉ तक उच्च शिक्षा पर दबाव कम करने के लिए व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के संचालन का प्रश्न है, व्यावसायिक शिक्षा लेने के बाद विद्यार्थी से आशा की जाती है कि वह कोई व्यवसाय अपना लेगा। इस दृष्टि से व्यावसायिक शिक्षा, व्यवसाय विशेष का प्रशिक्षण देती है जिससे छात्र कुछ कौशल अर्जित करके काम की दुनिया में प्रवेश योग्य हो जाते है। यह व्यावसायिक शिक्षा का संकुचित कार्य है। व्यावसायिक शिक्षा में कुछ सामान्य विषय भी रखे जाते है जो व्यावसाय विशेष में प्रशिक्षण के अतिरिक्त उन्हें भविष्य में विशिष्ट व्यवसास की तैयारी के लिए विशिष्ट व्यावहारिक रूचियाँ विकसित करने में मदद करते है।

अत: व्यावसायिक शिक्षा का अभिप्राय किसी व्यावसाय का प्रशिक्षण देने तक सीमित न होकर शिक्षा को व्यावसायिक झुकाव प्रदान करने से है। इससे छात्र सामान्य अपने विकास के साथ भविष्य में व्यावसायों की सफलता हेतु अभिरूचि का विकास करेगा तथा अपनी रूचि के व्यवसाय में प्रशिक्षण भी प्राप्त करेगा।

आज देश में शिक्षा प्राप्त बेरोजगारों की लम्बी कतार खड़ी है क्योंकि उन्हें व्यावसायिक उपक्रम (तैयारी) की दृष्टि से शिक्षित नहीं किया गया है। माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य मात्र उच्च शिक्षा हेतु प्रवेश प्राप्त करने की तैयारी मात्र है। देश की आर्थिक व सामाजिक धारा में छात्रों को जोड़ने के लिए बालक व बालिकाओं की व्यावसायिक तैयारी विद्यालयों में कराना, उनमें श्रम के प्रति आस्था तथा रचनात्मक दृष्टिकोण के विकास हेतु वांछित है।

किसी भी स्थिति में यह स्पष्ट है कि व्यक्ति की व्यावसायिक सफलता उसकी तैयारी के गुण, उसकी उपयुक्तता अजीविका में समुचित चुनाव पर निर्भर है। अत: इसके लिए विद्यालय द्वारा व्यावसायिक शिक्षा छात्रों प्रदान करके उन्हें व्यावसायिक तैयारी करने में भरपूर सहयोग प्रदान किया जाना आवश्यक है।

सूचना पाठ्यक्रमों, अनुभवों तथा व्यक्तिगत परामर्श के सहारे अपने कार्य को चुनने में ज्ञाता परामर्शदाता से सहायता प्राप्त कर छात्रों को तैयारी की योजना बनानी चाहिए। विद्यालयों के व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने तथा व्यक्तियों को उनकी विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति संबंधी तैयारी की योजना बनाने में सहायता प्रदान करना अपना दायित्व समझना चाहिए। जिससे छात्र व्यावसायिक जीवन में प्रवेश के समय व्यवासायों में सफलता प्राप्ति हेतु रूचियों का विकास कर स्वयं अपने व्यवसाय का चयन करें।

मानव की तीन मूलभूत आवश्यकतायें है - रोटी, कपड़ा और मकान। भोजन जीवन आधार है तो विभिन्न ऋतुओं में शारीरिक सुरक्षा हेतु वस्त्रों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इसी प्रकार आंधी, तूफान तथ वर्षा से बचाव हेतु मकान का भी अपना महत्व है। तात्पर्य यह है कि रोटी, कपड़ा और मकान तीन मूलभूत आवश्यकतायें है और इनकी प्राप्ति वर्तमान युग मे एक मात्र साधन है अर्थ। अर्थ प्राप्ति का स्त्रोत है व्यवसाय, फलत: व्यवसाय प्रत्येक व्यक्ति की प्राथमिक आवश्यकता है। उसका प्रकार कुछ भी हो सकता है। अर्थात् वह शिक्षा जो छात्र का व्यावसायिक पथ प्रशस्त न करे, वर्तमान युग की धारणानुसार व्यर्थ है इसी बिन्दु की पुष्टि माध्यमिक शिक्षा आयोग ने निम्नलिखित शब्दों में की है -

''शिक्षा का उद्देश्य व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए विस्तृत सुविधाएँ प्रदान करना होना चाहिए।''

''The aim of education should be to spread widely the facilities of vocational training.''

शिक्षा के इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर हार्टशन का कथन है - ''जीविकापार्जन की शिक्षा प्रभावशाली शिक्षा है। इसके बिना लोग आजीवन कष्ट उठाते है जो केवल विद्यालय ही जाते हैं।''

''Vocational Education is an education of most effective kind for lack of which those who merely go to school suffer all their eives.''

भारतीय शिक्षा आयोग द्वारा अनुभव किया गया है कि विद्यालय स्तर पर भविष्य में साधारण शिक्षा व व्यावसायिक शिक्षा से पूर्व व्यावसायिक शिक्षा शामिल है तथा व्यावसायिक शिक्षा अपने आप में साधारण शिक्षा का महत्व बनाये रखेगी।

कोठारी कमीशन के अनुसार - ''बार-बार सलाह देने के बावजूद भी दुर्भाग्य से आज भी स्कूल स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा को एक घटिया किस्म की शिक्षा समझा जाता है व माता पिता तथा विद्यालयों का सबसे आखिरी चुनाव होता है।''

"Despite repeated exhartation, it is unfortunately still felt that vocational education at school level is a inferior form of education and the last choice of parents and students."

2.4 व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता (Need of Vocational Education

राबर्ट यूलिच के अनुसार, आधुनिक शिक्षा में तीन मुख्य परिवर्तन हुए है -

1- बल केन्द्रित शिक्षा एवं बल
2- अनिवार्य, नि:शुल्क एवं सार्वभौमिक शिक्षा पर बल
3- व्यावसायिक शिक्षा पर बल

व्यावसायिक शिक्षा पर बल दिए जाने के दो मुख्य कारण है। पहला कारण यह है कि आधुनिक युग, विज्ञान का युग है। विज्ञान के आश्चर्यजनक अविष्कारों ने संसार के स्वरूप और मानव जीवन की दशाओं में क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिए है। व्यक्तियों की यह धारणा बन गयी है कि, विज्ञान उनके जीवन को सुखमय बना सकता है। उनकी आर्थिक उन्नति में योग दे सकता है तथा उसके समाज के स्वरूप को रूपान्तरित कर सकता है। इसलिए विज्ञान के विविध अंगों से संबंधितव्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता अनुभव की गयी।

दूसरा कारण यह है कि व्यावसायिक विज्ञान ने उत्पादन से संबंधित प्रत्येक कार्य का अनेक भागों में विभाजन कर दिया है। इन भागों से संबंधित कार्यों को व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद ही व्यक्ति कुशलतापूर्वक कर सकते है। उपरोक्त दोनों कारणों के फलस्वरूप व्यावसायिक शिक्षा की मांग में निरन्तर वृद्धि हो रही है। रार्बट यूलिच के शब्दों में - ''विद्यालय तथा कॉलेजों में अधिक से अधिक नवीन विषयों को समविष्ट किया जा रहा है और प्राचीन मानवशास्त्रों तथा नवीन वैज्ञानिक व्यावसायिक विषयों में सामंजस्य स्थापित किया जा रहा है।

प्रत्येक व्यक्ति अपना व्यवसाय तो चुन सकता है, परन्तु व्यावसायिक शिक्षा के अभाव में वह सफलता प्राप्त नहीं कर सकता अत: व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता निम्नांकित तथ्यों को ध्यान में रखने पर ही स्पष्ट रूप में दृष्टिगोचर हो सकगी -

1- व्यवसायों में विभिन्नता (Varaieties of Occupations)-

आधुनिक काल में व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता व्यवसायों में विविधता के कारण अधिक अनुभव की जाने लगी है। प्राचीन काल में व्यवसायों की संख्या इतनी अधिक नहीं थी । अत: युवकों के सम्मुख व्यवसाय - चयन की समस्या भी न थी। आज विद्यालय छोड़ने से पूर्व ही यह आवश्यक हो जाता है विद्यार्थियों के विद्यालय के कार्यकाल में ही व्यावसायिक शिक्षा दे दिया जाय।

विद्यार्थी के शिक्षण काल मे ही यदि विषयों का चुनाव उचित ढंग से उसकी योग्यता तथा कार्यक्षमतानुसार हो गया तो आगे चलकर उसे व्यवसाय चयन करने में असुविधा न होगी।

व्यावसायिक शिक्षा के अभाव में विद्यार्थी को अध्ययन के पश्चात् कई वर्ष बेकार बैठे रहना पड़ता है अथवा ऐसा व्यवसाय चुनना पड़ता है जिसके लिए वह उपयुक्त नहीं है। अत: यह आवश्यक है कि छात्र को विभिन्न व्यवसायों से परिचित कराया जाए, उसको आवश्यक योग्यताओं, क्षमताओं तथा शक्तियों का ज्ञान कराया जाय, जिससे वह भावी

जीवन के व्यवसाय से अपनी शक्तियों को मिलान करके उचित व्यवसाय का चयन कर सकें।

2- **छात्रों के भावी जीवन में स्थिरता लाना (To stablise the fucture life of the students)-**

छात्र जिस समय विद्यालय छोड़कर व्यवसाय में प्रवेश करता है तो वहां ऐसा वातावरण पाता है जिसका उसे बिल्कुल ज्ञान नहीं है। अज्ञात वातावरण में ठीक से समायोजित हो जाना सरल नहीं है। समायोजन की त्रुटि के लिए अल्पकाल में ज्ञात नहीं होती है, इसमें तो समय लगता है और जब अनुचित समायोजन का पता लगता है तब तक पर्याप्त समय निकल जाता है। अत: यह आवश्यक है कि बच्चों को छात्र-जीवन में ही कार्य जगत का पर्याप्त ज्ञान प्रदान कर दिया जाए, जिससे छात्र जीवन के पश्चात् तुरंत ही व्यवसाय में स्थिरता ला सके।

3- **व्यक्ति विभिन्नता (Individual Differences)-**

संसार में दो प्रकार की विभिन्नताएँ पायी जाती है - व्यक्ति विभिन्नताएँ एवं व्यवसाय विभिन्नताएँ। संसार में जिस प्रकार विभिन्न तरह के व्यक्ति पाये जाते है, उसी प्रकार विभिन्न तरह के व्यवसाय भी होते है। प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक कार्य नहीं कर सकता है, ठीक उसी प्रकार प्रत्येक कार्य प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपयुक्त नहीं है। अब यह ज्ञात करना कि कौन व्यक्ति किस कार्य का कर सकता है तथा किस कार्य के लिए कौन व्यक्ति योग्य एवं अच्छा है, यह एक समस्या है। जब तक इस समस्या का समाधान नहीं हो जाता, समाज का कल्याण संभव नहीं। इस कार्य हेतु व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है।

4- **आर्थिक दृष्टिकोण की आवश्यकता (Need from stant point of Economic point of view)-**

हमारे देश में जहाँ बेकारी की समस्या अत्यन्त भयंकर रूप धारण किये हुए है, अनेक युवक विद्यालय छोड़ने के उपरान्त जिस व्यवसाय में उन्हें अवसर मिल जाता है, प्रवेश कर जाते है, चाहे उस व्यवसाय में उनकी रूचि हो अथवा नही। अरूचिकर व्यवसाय में मजबूरन जाने के कारण नवयुवक उतने उत्साह एवं लगन के साथ कार्य करने में असफल रहते है। इससे नवयुवक, समाज तथा देश की आर्थिक अवस्था पर बुरा प्रभाव पडता है। अत: इस लाभही आर्थिक अवस्था से देश, समाज एवं युवकों को बचाने के लिए व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है। इसके साथ ही साथ जिस व्यवसाय में नवयुवक अपनी इच्छा के विरूद्ध प्रवेश करते है तो उस व्यवसाय में उत्पादन ठीक तरीके से नहीं हो पाता।

5- **स्वास्थ्य की दृष्टि से आवश्यकता (Need form the stand point of Health) –**

अरूचिकर व्यवसाय श्रमिक के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालते है, अरूचिकर व्यवसाय में श्रमिक कोई भी रूचि नहीं लेगा, बिना इच्छा के कार्य करेगा, उसका उत्साह जाता रहेगा, उसे अपना जीवन नीरस मालूम पड़ेगा। कुछ व्यवसाय पूरे शरीर की क्रिया न चाहते हुए कुछ विशेष अंगों की क्रिया चाहते हैं।

6- **अरूचिकर व्यवसाय में व्यक्तित्व का ह्रास (Loss of Individual through staying in an unsuitable occuption)-**

व्यक्ति के अनुप्रयुक्त एवं अरूचिकर व्यवसाय में ठहरने पर उसको आर्थिक हानि तो होती ही है, परन्तु उसके साथ ही साथ उसके व्यक्तित्व का विनाश भी हो जाता है। उपयुक्त व्यवसाय में ही श्रमिक की खुशियां, संतोष तथा व्यक्तित्व विकास निहित है और इनके माध्यम से ही व्यक्तित्व का विकास संभव है। यदि व्यक्ति को अरूचिकर एवं अनुप्रयुक्त व्यवसाय में कार्य करना पड़ता है तो उसका जीवन नीरस, असंतोषजनक एवं निराशा में व्यतीत होता है। फलत: उसके व्यक्तित्व का ह्रास होता है। व्यावसायिक शिक्षा की सहायता से व्यक्ति को उपयुक्त व्यवसाय में डाला जा सकता है तथा उसके व्यक्तित्व में होने वाले ह्रास को रोका जा सकता है।

7- **व्यावसायिक शिक्षा के व्यक्तित्व एवं सामाजिक मूल्य (Personal and social values of vocationa Education)-**

उपयुक्त व्यवसाय वहीं है जहॉं कर्मचारी अधिकतम संतोष, सुख, उत्साह एवं आशा का अनुभव करे। इसी में उसके वास्तविक जीवन का विकास संभव है। मनुष्य का सामाजिक इकाई के रूप में मूल्य तभी है, जब वह अधिकतम सामाजिक कल्याण करता है। जब मनुष्य, उपर्युक्त कल्याणकारी कार्यों को सफलतापूर्वक करता है तो हमें समझना चाहिए कि वह उपयुक्त व्यवसाय में नियुक्त है। यदि ऐसा नहीं है तो उसे व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता हैं।

8- **मध्यमिक शिक्षा को आत्म निर्भर बनाने के लिए** –

वर्तमान माध्यमिक शिक्षा, विश्वविद्यालय के लिए छात्र-छात्राएं तैयार करने का साधन है। एक प्रभावशाली प्रणाली में तीस प्रतिशत से अधिक छात्र उच्च शिक्षा में नहीं जाना चाहिए। शेष सत्तर प्रतिशत को अजीविका की चिन्ता होगी। अत: माध्यमिक शिक्षा को अजीविका के प्रशिक्षण का समावेश करना चाहिए यह शिक्षा को व्यावसायिक झुकाव प्रदान करके ही संभव है।

9- **शिक्षित बेजरोजगारों की समस्या के समाधान के लिए** –

देश में शिक्षित बेरोजगार काफी मात्रा मे व्याप्त है। कुछ ऐसे भी क्षेत्र है जिनमें प्रशिक्षित व्यक्ति उपलब्ध नहीं है। कारण स्पष्ट है कि मानव शक्ति का नियोजन उपयुक्त नहीं है तथा शिक्षा के द्वारा आवश्यकता के क्षेत्रों में प्रशिक्षण उपलब्ध नहीं कराया जाता है। हमारे युवक युवतियां पढ़े - लिखे तो है किन्तु वयवसाय के लिए उपयुक्त नहीं है। यह कमी व्यावसायिक शिक्षा द्वारा ही पूरी की जा सकती है।

10- **गांवों के विकास के लिए** –

भारत में अधिकांश जनता गांवों मे निवास करती है। पढ़े-लिखे युवकों में शहर की ओर दौड़ने की प्रवृत्ति है। वे गांवों में उपलब्ध रोजगार को हेय दृष्टि से देखते है या आत्म विश्वास की कमी के कारण शारीरिक श्रम करना बन्द कर देते है। इससे गांवों का विकास अवरूद्ध होता है। व्यावसायिक शिक्षा के अन्तर्गत बहुत से ऐसे व्यवसायों का प्रशिक्षण मिलेगा जो गांवों में अधिक सफलतापूर्वक चलाये जा सकते है।

2.5 व्यावसायिक शिक्षा का महत्व (Importance of Vocational Education)

आधुनिक शिक्ष में परिलक्षित होने वाला मुख्य परिवर्तन यह है कि व्यावसायिक शिक्षा पर अधिक से अधिक बल दिया जा रहा है। इसका आधार मूल कारण यह है कि इस शिक्षा के महत्व को सब देशों मे एक स्वर से स्वीकार किया जा रहा है। भारतीय शिक्षाविद् प्रो. हुमायू कबीर ने अपने एक लेख में संसार के कुछ प्रमुख देशों के उदाहरण देकर व्यावसायिक शिक्षा के महत्व को प्रभावित किया है। प्रो. कबीर का मत है कि किसी देश अथवा राष्ट्र की उन्नति का आधार विज्ञान एवं प्राविधिक विषयों की शिक्षा है। यदि किसी देश में इस शिक्षा की सफल और समुचित व्यवस्था है और यदि यह शिक्षा प्रगति की ओर अग्रसर हो रही है तो उस देश की प्रगति भी आवश्यम्भावी है।

संयुक्त राज्य अमेरिका, सोवियत रूस, जर्मनी तथा जापान इसके सजीव उदाहरण है। आज से लगभग डेढ़ सो वर्ष पूर्व संयुक्त राज्य अमेरिका एक पिछड़ा हुआ और अविकसित देश था। परन्तु व्यावसायिक शिक्षा का उत्कृष्ट आयोजन एवं उत्तरोत्तर उत्थान करने के कारण आज वह संसार का सबसे धनी देश है।

सन् 1918 में जब इस जारशाही का जनाजा निकालकर, गणतंत्र को प्रतिष्ठित किया गया, तब उसका स्थान संसार के निर्बल एवं अप्रगतिशील देशों में था। लेकिन व्यावसायिक शिक्षा का सुन्दर नियोजन करने के कारण आज उसका स्थान संसार के सबल एवं सुदृढ़ देशों में है। द्वितीय विश्वयुद्ध में जर्मनी और जापान को जर्जर बनाकर उसकी अर्थ व्यवस्था को तहस नहस कर दिया पर उन्होंने व्यावसायिक शिक्षा के विकास के लिए ही जान से मेहनत करके, अपी पूर्व स्थिति को पुन: प्राप्त कर लिया। ये उदाहरण इस बात के प्रमाण है कि किसी भी देश की उन्नति में व्यावसायिक शिक्षा का अपार महत्व है।

व्यावसायिक शिक्षा के अतिरिक्त राष्ट्र की सम्पन्नता के दो आधार ओर है - भौतिक सम्पति एवं जनशक्ति । भौतिक सम्पत्ति का प्रयोग करने वाली जनशक्ति व्यावसायिक शिक्षा के ज्ञान से मुक्त हो। यदि जनशक्ति इस ज्ञान से रिक्त है, तो भौतिक सम्पत्ति की प्रचुरता के बावजूद भी देश अविकसित एवं अप्रगतिशील दशा में रहता है। जापान एक ऐसा देश है, जिसे भौतिक सम्पत्ति की दृष्टि से सम्पन्न नहीं माना जाता है। उसे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कच्चे माल और खनिज पदार्थों का अन्य देशों में आयात करना पड़ता है। परन्तु वहां व्यावसायिक शिक्षा की इतनी उत्तम व्यवस्था है कि वह जन - जन को उपलब्ध है। यही कारण है कि वहां के निवासियों ने भौतिक सम्पति के अभाव में भी अपने देश के निवासियों को संसार के प्रमुख औद्योगिक देशों के बराबर लाकर खड़ा कर दिया है। अत: हम कह सकते है कि देश की समृद्धि के लिए सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि उसकी जनशक्ति वैज्ञानिक एवं व्यावसायिक ज्ञान में दक्ष हो। तभी उस देश की जनता भौतिक सम्पत्ति का सर्वोत्तम उपयोग करके अपने देश को उन्नतिशील देशों की श्रेणी में सुनिश्चित स्थान प्रदान कर सकती है। इस ज्ञान के महत्व से परिचित होने के कारण हमारी सरकार ने 1958 के अपने ''विज्ञान नीति प्रस्ताव'' मे भारत के औद्योगिक विकास के निए अग्रांकित नीति निर्धारित की है - ''राष्ट्र की सम्पदा एवं सम्पन्नता औद्योगिकीकरण के द्वारा उसके मानव जीवन एवं भौतिक साध्नों के समुचित उपयोग पर आधारित है। औद्योगिकीकरण के लिए मानव साधनों का उपयोग विज्ञान की शिक्षा और कुशलताओं में प्रशिक्षण की मांग करता है। भारत की जनशक्ति के विशाल साधन प्रशिक्षित एवं शिक्षित होकर ही आधुनिक संसार में उपयोगी हो सकते है।''

1- प्राथमिक शिक्षा समाप्ति के पश्चात् विभिन्न योग्यताएं उभरकर आती है। इनमें कई योग्यताएं एवं गुणों को संतुष्ट व्यावहारिक विषय ही करते है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए माध्यमिक शिक्षा आयोग एवं अन्य समितियों द्वारा व्यावसायिक आधार वाले विविध पाठ्यक्रमों की सिफारिश की गई है। केवल यही विविध पाठ्यक्रम ही विद्यार्थियों के गुणों व क्षमताओं को पूर्ण रूप से विकास करने में सहायता कर सकते है।

2- व्यावसायिक शिक्षा बेरोजगारी की समस्या के उन्मूलन में सहायक है। अत: ऐसी शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता है जो शिक्षित युवकों में बेरोजगारी की समस्या का समाधान करे क्योंकि व्यावसायिक शिक्षा द्वारा किसी व्यक्ति को व्यवसाय में निपुण बनाया जा सकता है।

3- भारतीय शिक्षा आयोग द्वारा 'उत्पादन वृद्धि' के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए माध्यमिक शिक्षा को व्यावसायिक स्वरूप देने की सिफारिश की गई, जिसके द्वारा व्यावहारिक एवं व्यावसायिक कुशलता में सुधार लाने का प्रयास किया जा सके व औद्योगिक एवं तकनीकी उन्नति की जा सके।

4- साधारणतया आज चल रही शिक्षा प्रणाली मे 25 में 30 प्रतिशत विद्यार्थी भी ऐसे नहीं होते जो उच्च शिक्षा के लिए विश्वविद्यालयों व अन्य संस्थाओं में जाने के योग्य हो। उनमें से बड़ी संख्या में छात्र अपनी रोजी कमाने की बात सोचते है, इसलिए शिक्षा कार्यक्रम को व्यावसायिक स्वरूप देकर इस दिशा में कुछ प्रशिक्षण अवश्य किया जाना चाहिए।

2.6 व्यावसायिक शिक्षा के सिद्धान्त (Principles of Vocational Education)

1- योजनाबद्ध (Well plained)–

व्यावसायिक शिक्षा को सर्वप्रथम योजनाबद्ध बनाया जाना चाहिए। उसके बाद उसका क्रियान्वयन किया जाना चाहिए। इसके अंतर्गत केवल प्रायोगिक विषयों के संदर्भ ही जानकारी प्रदान नहीं करनी चाहिए।

2- आवश्यकताओं से संबंधित (Need based)–

व्यावसायिक शिक्षा समाज की जरूरतों पर आधारित होना चाहिए। इसके साथ ही व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकताओं का निर्णय सामुदायिक सर्वेक्षण के आधार पर किया जाना चाहिए।

3- सार्वजनिक शिक्षा का अंश (Integral part of General Education)–

व्यावसायिक शिक्षा का सम्पूर्ण संबंधसार्वजनिक शिक्षा के प्रवाह के साथ होना चाहिए।

4- मूल्यांकन (Evaluation)–

व्यावसायिक शिक्षा का ज्ञान देने के साथ ही साथ समय समय पर उसकी उन्नति का जांच करने के लिए मूल्यांकन भी करते रहना चाहिए जिससे होने वाली उन्नति के बारे में जानकारी प्राप्त होती रहे।

5- निर्देशन की योग्यता (Availability of Guidance)-

छात्रों को समय समय पर व्यावसायिक शिक्षा से संबंधितसूचनाएं तथ निर्देशन प्रदान किये जाने चाहिए जिसके द्वारा छात्रों को पूर्ण रूप से ज्ञान दिया जा सकेगा।

6- योग्यता व स्तर (Quality and Standard) -

व्यावसायिक शिक्षा का स्तर संबंधितव्यवसाय के स्वीकृत स्तर से ऊँचा होना चाहिए।

7. **स्थानीय उपक्रम (Local Intitiative)** –

   व्यावसायिक शिक्षा की सफलता स्थानीय उपक्रमों पर निर्भर करती है। उचित प्रकार से की गई कोशिशें व समय पर की गयी कोशिशें, कार्य को संभव बनाती है।

8. **अनुसंधानपर आधारित (Research based)** –

   व्यावसायिक शिक्षा के सभी कार्यक्रम अनुसंधान पर आधारित होना चाहिए।

2.7 शिक्षा व्यावसायीकरण का धीमा विकास

1- **उचित तालमेल का अभाव (Poor co-ordination)** –

   इसके अंतर्गत व्यावसायिक संस्थाओं में कुछ चीजें, श्रम व उद्योग के विभिन्न विभागों के नियंत्रण में थी तथा कुछ इसमें शिक्षा विभाग के अंतर्गत थी। इस प्रकार तीनों विभागों के अंतर्गत परस्पर सहयोग व उचित तालमेल की कमी पायी गई थी।

2- **वित्त की कमी (Shortage of finance)** –

   आयोग द्वारा शिक्षा के व्यावसायीकरण पर अमूल्य सुझाव प्रस्तुत किये गये, परन्तु इनके संचालन में अत्यन्त धन व्यय करने की आवश्यकता पड़ी जो कि पर्याप्त वित्त के बिना असंभव थी ।परिणामस्वरूप वित्त की कमी व्यावसायीकरण मे सबसे अधिक रूकावट बन गयी।

3- **विशिष्ट पथ-प्रदर्शन का अभाव (Non-availability of Expert)** –

   शिक्षा के व्यावसायिकरण के लिए ऐसी संस्था उभरकर आयी जो केवल अपने ही लिए स्थापित थी तथा जिनके लिए कोई विशेष मार्गदर्शन नहीं किया गया।

4- **अध्यापक प्रशिक्षण सुविधाओं का अभाव (Lack of teacher training facilities)** –

   प्राइमरी स्कूल एवं सैकेण्डरी स्कूल अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं में ही तैयार होते है, उनके लिए विशेष अध्यापक प्रशिक्षण सेवाओं का अभाव बना रहता है, जिसके अंतर्गत अध्यापकों के लिए विशेष तकनीकी शिक्षा के विषयों के अध्यापन की कोई व्यवस्था नहीं थी।

5- **शिक्षा के व्यावसायीकरण को सहज ढंग से लिया (Vocationalization Education taken lighitly)** –

   व्यावसायिक शिक्षा केन्द्रों में सुविधाओं की निरन्तर कमी थी। प्रशासन उसे माध्यमिक प्राथमिकता देता रहा। परिणामस्वरूप निर्धारित उद्देश्य प्राप्त करना अत्यन्त कठिन हो गया।

   भारत सरकार के परिपत्र 'क्रियान्वित कार्यक्रम' में व्यावसायिक शिक्षा की मन्द गति के निम्न कारण बताये -

   1- मांगव वितरण में असंगिकता।
   2- व्यावसायिक वृद्धि के सुअवसरों की अनुपस्थिति।
   3- आपसी तालमेल रखती हुई प्रबंधकीय प्रणाली की अनुपस्थिति।
   4- व्यावसायिक शिक्षा सफल होने के लिए जीवन में सुअवसर।
   5- समाज की विचारधारा को स्वीकार करने में अनिच्छा।

6- व्यावसायिक शिक्षा में असफल होने पर बेरोजगार है।

2.8 व्यावसायिक शिक्षा के संबंधमें सुझाव

शिक्षा के व्यावसायीकरण के लिये कुछ निश्चित एवं ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है जैसे -

1- विद्यालय पाठ्यक्रम 12 वर्ष का होना चाहिए ऐसी अनुशंसा कोठारी आयोग ने की। जिसे स्वीकार करते हुए देश के कई राज्यों में 10+2 शिक्षा योजना आरंभ कर दी। जिस स्तर पर विद्यार्थी विद्यालय छोड़े, उसी स्तर पर उन्हें कुछ ऐसी पाठ्यक्रम उपलब्ध कराये जाये जिससे वे व्यावसायिक प्रशिक्षण ले सके। निम्न प्राथमिक स्तर के पश्चात् या निम्न माध्यमिक स्तर पर विद्यालय छोड़ने पर उन्हें प्रशिक्षण का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।

2- इस प्रकार के पाठ्यक्रम आरंभ करते समय छात्र एवं छात्राओं दोनों की आवश्यकताओं की दृष्टि से रखना चाएिह तथा ग्रामीण एवं शहरी परिस्थितियों को भी ध्यान मे रखना चाहिए।

3- प्रशिक्षण के लिए व्यवसायों को सूची बनाते समय इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए कि इतने विषय हो कि वे अपनी रूचि के अनुसार उनमें से किसी एक का चयन कर सकें।

4- इन व्यवसायों के प्रशिक्षण के लिए जीवन में उपयोगिता होनी चाहिए। काम खेती का हो या खाती का, सिलाई का हो अथवा छपाई का, विद्यार्थी अपने पैरों पर खड़े रहने की स्थिति में हो जाय, इसबात का भी विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए।

5- पाठ्यक्रम में जिन विषयों के प्रशिक्षण को सम्मिलित किया जाय उसमें संबंधितसभी मशीनें एवं आवश्यक सामग्री उपलब्ध होना चाहिए। मशीनों के साथ कच्चे माल के संबंधमें पूर्ण जानकारी दी जानी आवश्यक है। उन विषयों का चयन करना चाहिए जिसके लिये आवश्यक मशीनें एवं कच्चा माल सहज सुलभ हो सके।

6- शिक्षा के व्यावसायिकरण की प्रक्रिया तब तक अपूर्ण ही रहेगी जब तक प्रशिक्षण देने के लिए कुशल प्रशिक्षक उपलब्ध नहीं होगें। अत: व्यावसायीकरण को सफल बनाने के लिए जिन व्यवसायों को चुना जाय, उस व्यवसाय के विशेषज्ञ एवं कुशल प्रशिक्षण उपलब्ध कराए जाने आवश्यक है।

7- व्यावसायिक विषयों से संबंधित पुस्तकों एवं अन्य साहित्य का उपलब्ध होना भी आवश्यक है। यह सही है कि यह विषय सार्थक जब बनते है जबकि इनका व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाय।

8- किन क्षैत्रों के लिए कौन से विषयों का प्रशिक्षण उपयुक्त रहेगा, इस संबंधमें शोध कार्य होना चाहिए तथा सर्वेक्षण के परिणामों के आधार पर इसकी निश्चित रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए।

9- इस प्रकार के प्रशिक्षण के लिए अल्पकालिक, अंशकालिक एवं पूर्ण कालिक पाठ्यक्रम तैयार किया जाना आवश्यक है। इन पाठ्यक्रमों को चलाते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि ऐसा समय रखा जाए कि अन्य कार्य में व्यस्त व्यक्ति भी अपनी सुविधानुसार इसमें उपस्थित हो सकें।

10-इस योजना को सही ढंग से कार्यान्वित करने के लिए राज्य सरकारों को पर्याप्त धन राशि उपलब्ध करानी चाहिए। केन्द्र द्वारा संचालित विद्यालयों में यह कार्य ठीक ढंग से चल सके। इसके लिए भी केन्द्र सरकार को पर्याप्त धन राशि उपलब्ध करानी चाहिए।

2.9 सारांश

आज सम्पूर्ण विश्व भौतिक, उन्नति की ओर बेतहाशा दौड रहा है। विश्व का प्रत्येक राष्ट्र आज वैज्ञानिक, मानवीय, आर्थिक एवं शैक्षिक संसाधनों के द्वारा अपनी भौतिक एवं आर्थिक उन्नति का प्रयास कर रहा है। बढती हुई जनसंख्या के भरण-पोषण के लिए नये नये आर्थिक साधन जुटाने की आज नितान्त आवश्यकता है। नये- नये रोजगार के अवसरो की भी आवश्यकता है जिससे बढती हुई जनसंख्या को रोजगार उपलब्ध हो सकें। भारत में लम्बे समय तक विदेशी शासन होने के कारण पर्याप्त एवं उपयुक्त शिक्षा की व्यवस्था न हो सकी। अत: यहां की आर्थिक उन्नति तो अवरूद्ध हो गई किन्तु जनसंख्या वृद्धि अबोध गति से चलती रही। परिणामस्वरूप भारत में गरीबी, बेरोजगारी तथा दुर्बलता का साम्राज्य आ गया। स्वतंत्रता के बाद भी समस्या के विकट गंभीरता के कारण स्थिति को सुधारा न जा सका। किन्तु आज इस बात की आवश्यकता अनुभव की जा रही है कि आर्थिक स्वतंत्रता के बिना राजनैतिक स्वतंत्रता सार्थक नहीं है। अत: राष्ट्र को आर्थिक उन्नयन करना चाहिए। इसके लिए नीचे लिखी बातें आवश्यक हैं -

1 शिक्षा के बाद युवक केवल नौकरी के पीछे न दौड

2 शिक्षा व्यावसायोन्मुखी हो, जो युवकों को कोई न कोई व्यवसाय स्वतंत्र रूप में करने हेतु तैयार कर सके।

यदि युवकों को शिक्षा काल में ही किसी व्यवसाय के लिए तैयार कर दिया जाय तो वह नौकरी के पीछे नहीं भागेगा। अब समस्या यह है कि शिक्षाकाल में ही व्यवसाय की तैयारी कैसे कराई जाय?

व्यावसायिक शिक्षा देश की मुख्य आवश्यकता है। माध्यमिक शिक्षा को इसका मुख्य आधार माना है। 10 वर्ष की अवधि के पश्चात् +2 वर्ष की अवधि में तो दो स्वतंत्र धाराएं ही प्रस्तावित कर दी है। जिनमें में एक धारा विश्वविद्यालय की ओर जाती है तो दूसरी धारा विद्यार्थियों को उसकी रूचि एवं आवश्यकता के अनुकूल व्यवसाय की ओर मोड़ देना है। आवश्यकता इस बात की है कि इस योजना को सही रूप से कार्यान्वित किया जाय। छात्रों के सामने अनेक व्यावसायिक विषय रखे जाये जिसमें वे अपनी रूचियों के विषयों का चयन कर अधिक से अधिक संख्या में इस पाठ्यक्रम की और प्रवृत्त हो सके। व्यावसायिक पाठ्यक्रम में अधिक छात्रों को प्रवेश लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

2.10 शब्दावली

- **व्यावसायिक -** किसी भी व्यावसाय में प्रशिक्षण
- **प्रणाली -** एक प्रक्रिया या उद्देश्य प्राप्त करने की प्रक्रिया
- **प्रगति -** इच्छित दिशा में मूल्यों के अनुरूप सकारात्मक परिवर्तन
- **उत्पादन के माध्यम** - उत्पादन में सहयोग देने वाले तत्व जैसे - पूंजी, भूमि व तकनीकी आदि।

2.11 अभ्यास प्रश्न

1- व्यावसायिक शिक्षा का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
2- व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता पर प्रकाश डालिये।
3- व्यावसाय में सफलता प्राप्त करने के लिए व्यावसायिक शिक्षा के महत्व को बताइये।
4- व्यावसायिक शिक्षा के सिद्धान्त लिखिये।
5- ''शिक्षा के व्यावसायीकरण का धीमा विकास'' पर टिप्पणी लिखिये।
6- व्यावसायिक शिक्षा को उन्नत करने के लिए सुझाव प्रस्तुत कीजिये।

2.12 संदर्भ ग्रंथ

- वर्मा, रामपाल सिंह, विद्यालय संगठन एवं स्वास्थ्य शिक्षा, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1999
- मंगल, जे.पी., माध्यमिक शिक्षा एवं विद्यालय प्रबंध, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 2009
- व्यास, हरिशचन्द्र तथा व्याम, कैलाश चन्द्र, शैक्षिक प्रबंध और शिक्षा की समस्याएं, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली, 1996
- वलिया, एम.एन. तथा पुरोहित, जेड़, एन.त्र ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और समस्याएं, दी इण्डियन पब्लिकेशन, अंबाला, 1996
- वशिष्ट, के.के., विद्यालय संगठन एवं भारतीय शिक्षा की समस्यायें, लायल बुक डिपो, मेरठ, 1983
- चौधरी, राम लखन तथा उपाध्याय, राधाबल्लभ, भारतीय शिक्षा की सामयिक समस्याऐं, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1981
- भट्नागर, सुरेश तथ वशिष्ट कमला, शैक्षिक प्रबंध और शिक्षा की समस्यायें, आर.लाल, बुक डिपो, मेरठ, 2009

इकाई - 3

शिक्षा और कार्य, वैश्वीकरण, कार्य और ज्ञान, जैंडर एवं विकलांगता संबंधित मुद्दे

Education and work Globlization ans work and knowledge, Gender and Disabitity related issues

इकाई की रूपरेखा

3.0 प्रस्तावना
3.1 उद्देश्य
3.2 शिक्षा और कार्य
3.3 वैश्वीकरण
3.4 कार्य और ज्ञान
3.5 जैंडर एवं विकलांगता संबंधितमुद्दे
3.6 सारांश
3.7 अभ्यास प्रश्न
3.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.0 प्रस्तावना

नवजात शिशु असहाय तथा असामाजिक होता है। वह ने बोलना जानता है, न चलना फिरना, न कोई मित्र होता है और न ही कोई शत्रु उसे समाज के रीति रिवाजों तथा परम्पराओं का ज्ञान भी नहीं होता कोई न किसी आदर्श तथा मूल्य को प्राप्त करने की जिज्ञासा पाई जाती है। परन्तु जैसे जैसे वह बडा होता है, वैसे वैसे उस पर शिक्षा के औपचारिक तथा अनोपचारिक साधनों का प्रभाव पड़ता जाता है। इस प्रभाव के कारण जहॉं एक और शारीरिक, मानसिक तथा संवेगात्मक विकास होता है, वहां दूसरी ओर उसमें सामाजिक भावना भी विकसित होती जाती है। शिक्षा के द्वारा बालक जो जन्मजात शक्तियों का विकास होता है। शिक्षा का अर्थ है वे सभी प्रमुख कार्य ज्ञान प्रदान करना है। शिक्षा भावी जीवन के लिए तैयारी है। गांधीजी देश को समग्र क्रांति लाना चाहते थे, उसी के अन्तर्गत कई कार्यक्रम उन्होंने चलाये। गांधीजी ने भारत की शिक्षा में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने के लिए अपने कई मौलिक सुझाव दिये। जिन्हें नई तालिये नए शिक्षा, में स्थान दिया गया। सारी पढाई किसी मूल उद्योग धंधे से संबंधितहोनी चाहिए। उपयोगितावादी शिक्षा में आर्थिक प्रश्न से जीविकापार्जन के उद्देश्यों को लेकर चलती है। इसमें कला, शिल्प, व्यवसाय, रोजगारपरक विषयों की प्रधानता होती है। सम्पूर्ण शिक्षा सामान्य शिक्षा और उपयोगितावादी शिक्षा का ध्यान रखा जाता है, अब शिक्षा का यह भेद नगण्य है। आज विश्व के अधिकतर देशों मे जनतंत्रीय शासन व्यवस्था है जनतंत्रीय समाज के उच्च

और निम्नवर्ग का भेद नहीं किया जाता है। सभी को सभी विषय पढ़ने का अधिकार है। योग्यता और रूचि के आधार पर सामान्य या व्यावसायिक विषय पढ़े जा सकते है। इस इकाई में हम शिक्षा और कार्य एवं विभिन्न उद्दश्यों के बारे में पढ़ेगे।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढने के बाद आप

- शिक्षा और कार्य का अर्थ समझ सकेंगे।
- ज्ञान एवं कार्य को जान सकेगें।
- वैश्वीकरण के अर्थ एवं आवश्यकता को समझ सकेंगे।
- शिक्षा की उपयोगिता को जान सकेंगे
- शिक्षा के आधार पर व्यवसाय एवं कार्य में निखार ला सकेंगे।

3.2 शिक्षा और कार्य

शिक्षा का जीवन के प्रत्येक पक्ष से प्रत्यक्ष एवं परोक्ष दोनों ही रूपों से गहरा संबंधहै। एक व्यक्ति के जीवन में सभी पक्ष शिक्षा से जुड़े है। इससे प्रभावित भी होते हे और इसे प्रभावित भी करते है। समाज ने अलग अलग वर्ग शिक्षा के बारे में अपनी अलग अलग धारणाएं रखते है। शिक्षा मनुष्य के विकास का मूल साधान है। इसी शिक्षा के द्वारा मानव अपनी जन्मजात शक्तियों का विकास, अपने ज्ञान एवं कौशल में वृद्धि तथा व्यवहार में परिवर्तन ला सकता है। तथा स्वयं को सभ्य एवं योग्य नागरिक बनाया जा सकता है। मानवजीवन एवं मानव विकास शिक्षा का बहुत महत्व है।
शिक्षा संगठित और स्थिर प्रकार का ज्ञान प्रदान करती है जिससे जीवन की सभी क्रियाओं के लिए महत्वपूर्ण ज्ञान, कुशलताओं और कार्य आरंभ करने की क्षमता को प्राप्त किया जाता है।
गांधीजी ने स्वयं लिखा है ‘‘शिक्षा से मेरा तात्पर्य है बालक और मनुष्य के शरीर, मस्तिष्क और आत्मा में पाये जाने वाले सर्वोत्तम गुणों का बहुमुखी विकास।
गांधीजी चाहते थे कि प्रत्येक बालक नियमित शिक्षा प्राप्त करें जिससे किसी व्यवसाय था कार्य के द्वारा अपनी आथ्रिक आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं कर सके। उन्होंने आत्म निर्भर शिक्षा पर बल दिया और शिक्षा का प्रथम उद्देश्य जीवकोपार्जन होना चाहिए। जिससे प्रत्येक बालक अपने भावी जीवन में स्वावलंबी बन जाये। गांधी जी का शिक्षा का उद्देश्य बालकों को मजदूर बनाना न था। वे चाहते थे कि प्रत्येक बालक कमाते हुए कुछ सीखे और सीखते हुए कुछ कमाये शिक्षा को बालकों को बेरोजगारी से एक प्रकार की सुरक्षा देनी चाहिए। गांधी जी की शिक्षा योजना को बेसिक शिक्षा या बुनियादी शिक्षा की संज्ञा दी जाती है। इस शिक्षा का उद्देश्य बालक को कार्य, प्रयोग एवं खोज के द्वारा उसकी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों का विकास करना है। ऐसी शिक्षा क्रिया प्रधान है। देश की व्यापक निर्धनता को देखते हुए उन्होंने शिक्षा को हस्तकला और उद्योग पर केन्द्रित करने का सुझाव दिया व शिक्षा को स्वावलम्बी बनाना चाहते थे। वे उसको बालक के जीवन से संबंधित करना चाहते थे। 23 अक्टूबर सन् 1937 ई. में वर्धा में मारवाड़ी राष्ट्रीय हाई स्कूल में आयोजित शिक्षा सम्मेलन के अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए गांधी जी ने कहा था ‘‘मेरी शिक्षा योजना का तात्पर्य यह नहीं है कि बालक पढ़ाई के साथ धंधों को सीखे बल्कि तात्पर्य यह है कि बालकों को जो भी ज्ञान दिया जाये वह किसी उद्योग या दस्तकारी द्वारा ही दिया जाये।’

शिक्षा के द्वारा व्यक्ति कार्य में दक्षता हासिल करता है। व्यक्ति में सामान्य दक्षता का होना अत्यन्त आवश्यक है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि प्रत्येक बालक गुण्वत्तावाल शिक्षा प्राप्त करते हुए उन आधारभूत क्षमताओं का विकासकरें जो कहीं न कहीं उसके जीवन में उपयोगी हो एवं विकास के लिए अनिवार्य हो।

समाज व व्यक्ति शिक्षा से कुछ अपेक्षा रखता है, जिससे समाज व व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकती है। कार्य मे दक्षता आधारित शिक्षण की आवश्यकता महसूस होनी लगी। शिक्षाकी पुरानी धारणा अनुत्पादकता के संबंधमें थी जबकि वर्तमान धारणा उत्पादकता की है।

आज का यग विज्ञान व तकनीकी का युग है। जिसका प्रभव हमें मानव जीवन से जुड़े प्रत्येक क्षेत्र में प्रत्यक्ष रूप से दिखाई दे रहा है। विश्व के अन्य देशों की भांति भारत भी विकास की दौड़ में शामिल है। परन्तु अपने आप को विकसित देश बनाने के लिए हमें अपनी शिक्षा के ढांचे में काफी परिवर्तन करने होगे। हमारे आगे बढ़ने में सबसे बड़ी बाधा ही ये है कि हमारे ज्ञान का आधुनिक विज्ञान व तकनीकी के साथ सामंजस्य नहीं हो रहा है। इसी को ध्यान में रखते हुएशिक्षा आयोग (1964-66) ने माध्यमिक स्तर के लिए ही नहीं बल्कि शिक्षा के सभी स्तरों पर शिक्षा के व्यावसायीकरण का आधार उत्पादन को स्वीकार किया है इसलिए शिक्षा तथा उत्पादन आपसी संबंधोंपर विचार करके शिक्षा के पुन: निर्माण की योजना को आधार इस प्रकार प्रस्तुत किया है -

- विज्ञान को शिक्षा एवं संस्कृति का आधार होना चाहिए
- सामान्य शिक्षा में कार्यानुभव को अभिन्न अंग के रूप में होना चाहिए।
- कृषि तथा संबंधितविज्ञान पर विशेष बल देते हुए विश्वविद्यालय स्तर पर वैज्ञानिक तथा प्रविधिक शिक्षा का विकास करना चाहिए।

गांधीजी के द्वारा 1937 में घोषित, बेसिक शिक्षामें भी व्यावसासिक शिक्षा पर बल दिया गया था।

निम्न माध्यमिक स्तर पर जो विद्यार्थी कक्षा 7 व 8 के बाद पढ़ना छोड़ देते है तथा पैतृक व्यवसाय से जुड़ जाते है अथवा आर्थिक विषम परिस्थितियों के कारण लघु स्तरीय व्यापार करने की इच्छा रखते है उनहें अंशकालीन पाठ्यक्रमों के माध्यम से शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की जानी चाहिये।

औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में अधिकांश पाठ्क्रम ऐसे हो जिनकी प्रवेश योग्यता कक्षा 10 उत्तीर्ण हो। ये पाठ्यक्रम स्वास्थ्य व्यापार, प्रशासन, लघुउद्योग एवं ऐसे कार्यो का प्रशिक्षण प्रदान करें, जिनका समय 6 माह से तीन वर्ष तक का हो एवं छात्रों को प्रमाण पत्र या डिप्लोमा प्रदान किया जाये।

शिक्षा को रोजगारोन्मुखी बनाये जाने की आवश्यकता इसलिए है ताकि कार्य और शिक्षा का सीधा संबंध स्थापित हो सके। इससेदेश की आर्थिक स्थिति में सुधार होगा तथ जनशक्ति का समुचित उपयोग किया जा सकेगा।

माध्यमिक स्तर पर स्वास्थ्य कृषि, श्रम तथा रोजगार पोलीटेक्निक शिक्षा को व्यावसायीकरण के अन्तर्गत लिया गया है।

वर्तमान मे विद्यार्थी बी.ए. औरा एम.ए. करने के पश्चात भी कार्य या नौकरी नहीं ढूंढ पाता है। क्योंकि प्रत्येक व्यवसाय के लिएविशिष्ट प्रकार के वयवसाय कौशल की आवश्यकता होती है। जो सामान्य डिग्री क्रोर्सों से प्राप्त नहीं हो पाती है।

अत: वर्तमान शिक्षा को जब तक रोजगार के साथ जोडा नहीं जायेगा तब तक उसका महत्व नहीं होगा।

यह आज की महत्ती आवश्यकता है कि उच्च माध्यमिक स्तर से ही विद्यार्थियों की रूचि के अनुसार उन्हें व्यवसायिक शिक्षा भी प्रदान की जाये। वह जिस क्षेत्र में रूचि रखते है उन्हें उसका ज्ञान तभी से देना आरंभ कर देना चाहिये। सभी विद्यार्थी डॉक्टर, इंजिनियर नहीं बनना चाहते और ना ही सभी का रूझान व मानसिक योग्यता समान होती है। अत: माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर से ही विभिन्न व्यावासायिक कार्यक्रमों को आरंभ किया जाना चाहिए।

इसके साथ साथ यह भी आवश्कयता है कि विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार के रोजगारों से अवगत कराते रहें। समय समय पर उन्हें शैक्षिक व व्यवसायिक मार्ग प्रदर्शन करें। प्रत्येक विद्यार्थी में विभिन्न कार्यों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करें। कोई भी कार्य बड़ा या छोटा नहीं होता। लग्न व सच्ची मेहनत से किसी भी कार्य को श्रेष्ठ बनाकर उसमें महानता हासिल की जा सकती है।

3.3 वैश्वीकरण

वैश्वीकरण को भू-मण्डलीकरण भी कहते हैं। वैश्वीकरण से हमारा तात्पर्य संकीर्ण राष्ट्रवाद के घेरे से निकलकर सम्पूर्ण विश्व या भू-मण्डल को ही अपना समझने से है। वैश्वीकरण एक ऐसी योग्यता है जिससे व्यक्ति अपनी जाति, संस्कृति तथा राष्ट्रीयता के संकीर्ण घेरे से निकलकर विश्व की सम्पूर्ण मानव जाति के प्रति आलोचनात्मक तथा निष्पक्ष एवं मूल्यांकन करने की योग्यता का विकास करता है। **वेबस्टर शब्दकोष** में वैश्वीकरण का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ''सम्पूर्ण विश्व को आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्र में अन्त:निर्भर तथा आधुनिक संचार माध्यमों से घनिष्ठ रूप से निकट समझना ही वैश्वीकरण हैं।

सार संक्षेप में यह 'वसुर्धव कुटुम्बकम् की भावना का ही रूप है। इसे हम अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव का व्यापक तथा सुनिश्चित रूप कह सकते हैं। यह एक पारस्परिक विश्वास है जो जनमानस में व्याप्त होता है जिससे वे विश्व के सभी मनुष्यों को आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्र में एक दूसरे के निकट लाते हैं। (अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव के लिये महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, अजमेर द्वारा तृतीय प्रश्न है लेखक द्वारा लिखित पुस्तक में विस्तार से लिया गया है। अत: उसकी यहां पुनरावत्ति नहीं की जा रही है। क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव का व्यापक रूप ही वैश्वीकरण है।)

वैश्वीकरण की आवश्यकता

विश्व ने आज प्राय: प्रत्येक क्षेत्र की उन्नति की है। इन क्षेत्रों में से कुछ क्षेत्र मानव के लिये कल्याणकारी हैं तो कुछ संहारक भी है। आज वैज्ञानिक उन्नति ने हमें ऐसे ऐसे युद्ध उपकरण दिये हैं जो विश्व की सम्पूर्ण जैविक तथा अजैविक सम्पदा को समूल नष्ट करने को पर्याप्त हैं। तभी तो महान् दार्शनिक ने कहा है कि मैं नहीं जानता कि तृतीय विश्व युद्ध किन हथियारों से लड़ा जायेगा किन्तु यह सुनिश्चित है कि चतुर्थ विश्व युद्ध पत्थरों से लड़ा जायेगा। इसका आशय है कि तृतीय विश्व युद्ध हुआ तो उसमे इतने घातक हथियारों का प्रयोग होगा जो हमारी समूची सभ्यता को नष्ट कर देंगे। वैसे हम देखते हैं कि आज सम्पूर्ण विश्व में परस्पर अन्त: क्लेश, कटुता, उग्रवादिता तथा एक दूसरे को निगल जाने की होड़ मची है। यह सब मानव जाति के उत्थान एवं कल्याण के लिये घातक है। यदि इस

मानव जाति का उत्थान एवं कल्याण चाहते हैं तो प्रत्येक राष्ट्र को एक दूसरे से मिलकर, सहयोग व सहायता करके चलना होगा।

यातायात तथा संचार माध्यमों के आधुनिक साधनो ने सम्पूर्ण विश्व को इतने निकट ला दिया है कि एक राष्ट्र की गतिविधयों का स्पष्ट प्रभाव पड़ोसी राष्ट्रों पर पड़ता है कोई भी राष्ट्र पड़ोसी राष्ट्र की गतिविधियों से अपने को अछूता नहीं रख सकता है। यह ठीक ऐसे ही जैसे यदि हमारे पड़ोस में कोई छुआछुत की महामारी आ गई हो तो हम अपने घर के सभी दरवाजे बंद कर लें तब भी उस महामारी से हम कठिनाई से ही बच सकते हैं। इसी प्रकार एक राष्ट्र की राजनैतिक आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति निश्चित रूप से दूसरे राष्ट्र को प्रभावित करती है।

आज के प्रतिस्पार्धात्मक युग में कोई भी राष्ट्र अपनी उन्नति करें क्योंकि संकीर्ण राष्ट्रीयता की भावना के कारण सब अपने अपने राष्ट्र की सोच रहे हैं। संकीण राष्ट्रीयता की भावनाओं के कारण हम मानवता तथा मानव कल्याण को भुला बैठे हैं। इन सब कारणों से ऐसा लग रहा है जैसे पूरा विश्व आज बारूद के ढेर पर बैठा है और केवल एक चिंगारी की प्रतीक्षा कर रहा है। हमें मानव जाति को बचाना है।यह सभी संभव है जब समस्त राष्ट्र संकीण राष्ट्रवाद की कुण्डली से बाहर निकलकर यातायात तथा संचार माध्यमों के सहारे आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक रूप एक दूसरे के निकट आये एक दूसरे की सहायता करें, एक दूसरे के साथ सहयोग करें तथा विश्व नागरिकता की भावना का विकास करें। इसी में सभी का कल्याण है।

वैश्वीकरण के मार्ग में बाधाएं

1- संकीर्ण राष्ट्रवाद की भावना।
2- आर्थिक व्यवस्थाओं पर सरकारी नियंत्रण तथा आर्थिक प्रतिस्पर्धा।
3- धर्मगत संकीर्णताएं
4- भाषागत विभिन्नताएँ
5- पृथक पृथक राजनैतिक पद्धतियां व विचारधाराएं
6- अशिक्षा तथा अज्ञानता

वैश्वीकरण के लिये शिक्षा

वैश्वीकरण की भावना के लिये एक उत्तम तथा उपयोगी साधन है। इस भावना के विकास के लिये हमें शिक्षा में निम्नांकित परिवर्तन लाने हैं -

1- **शिक्षा के उद्देश्यों में परिवर्तन -**

   यदि हम अपने छात्रों में वैश्वीकरण की भावना का विकास करना चाहते हैं तो हमें अपनी शिक्षा के उद्देश्यों का पुनर्निर्धारण करना पड़ेगा। आज जहॉं हम शिक्षा के सामाजिक, चारित्रिक, नैतिक आदि उद्देश्यों की चर्चा करते हैं वहां हमें विश्व नागरिकता, विश्व एकता, सहयोग, सहकारिता तथा सहिष्णुता तथा वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना का विकास करने की बात करनी होगी।

2- **पाठ्यक्रम में परिवर्तन -**

   वैश्वीकरण की भावना का विकास करने के लिये हमें अपनी प्रचलित शिक्षा के पाठ्यक्रम में भी आवश्यक परिवर्तन करने होंगे। उदाहरण के लिये इतिहास का लेखन पुन: इस ढंग से किया जाये कि छात्र सम्पूर्ण विश्व को अपना समझें, नागरिकशास्त्र के द्वारा विश्व नागरिकता

का पाठ पढ़ाया जाये, अर्थशास्त्र में विश्व की अर्थव्यवस्था तथा व्यापार एवं वाणिज्य का पाठ अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ के साथ पढ़ाया जाये। नागरिकशास्त्र में ही मानवाधिकार, स्वतंत्रता, परस्पर निर्भरता तथा संयुक्त राष्ट्र संघ निगुर्द सम्मेलन, शक्ति संतुलन आदि के पाठ पढ़ाया जाये। भूगोल के माध्यम से विश्व के लोगों, उनका रहन सहन, भौगोलिक परिस्थितियां खान पान आदि का पाठ पढ़ाया जाये। छात्रों को भाषा, कला, संगीत तथा खेलकूदों के माध्यम से भी वैश्वीकरण का पाठ पढ़ाया जा सकता है। विज्ञान तथा गणित के द्वारा छात्रों में वैज्ञानिक चिन्तन तथा तर्क शक्ति का विकास अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ में कराना चाहिये।

3- क्रियाएँ

छात्रों में वैश्वीकरण की भावना का विकास करने के लिये विद्यालयों में कुछ विशेष पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का आयोजन भी उपयोगी है। इस प्रकार की क्रियाओं में विश्व की महान् विभूतियों के जीवन तथा उपदेशों पर आयोजन किये जा सकते हैं। विश्व को विभिन्न समस्याओं पर परिचर्चा तथा भाषण मालाओं का आयोजन किया जा सकता है। अन्तराष्ट्रीय स्तर पर युवक मेले, खेलकूद आदि आयोजन किये जा सकते हैं तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विविध प्रकार की प्रतियोगिताएं की जा सकती है। कलम मित्र बनाने हेतु छात्रों को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

4- अध्यापक

वैश्वीकरण की भावना का विकास करने में शिक्षकों को भी महत्वपूर्ण भूमिका है। अध्यापकों को के.जी. सैयदेन का यह कथन सदैव ध्यान रखना चाहिए कि ''हम स्वयं को संसार में अपने चारो ओर होने वाली घटनाओं से ठीक उसी प्रकार नहीं बचा सकते हैं जिस तरह से पड़ौस में फैले हुए भयानक संक्रामक रोग से अपने घरों में रहकर भी नहीं बच सकते हैं।'' यातायात तथा संचार के सुविकसित आधुनक साधनों ने सम्पूर्ण विश्व को एक इकाई बना दिया है। विज्ञान तथा उद्योग पर आधारित आज का विश्व एक इकाई बन गया है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर अध्यापक को शिक्षण कार्य करना चाहिये। यह कार्य अध्यापक तभी कर सकता है जब -

1- उसे अपने पर पूर्ण विश्वास हो,
2- छात्रों को वैश्वीकरण के लिये मानसिक तथा भावनात्मक रूप में तैयार करें
3- विश्व इतिहास एवं राजनीति का अध्यापक स्वयं ज्ञान प्राप्त करें
4- अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण का स्वयं में तथा छात्रों में विकास करे तथा
5- संभव हो तो अन्तर्राष्ट्रीय मामलें पर अनुसंधान कार्य करें

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वैश्वीकरण की भावना का विकास विद्यालयों में ठी उसकी प्रकार किया जा सकता है जिस प्रकार से युद्ध लड़ने की भावना विद्यालयों में ही विकसित की जाती है किन्तु इन सब से अधिक महत्वपूर्ण भूमिका अन्तोगत्वा अध्यापक की ही होती है। यह अपने व्यवहार व कार्यों से ही इस प्रकार की भावना का विकास कर सकता है।

वैश्वीकरण

वैसे तो उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण की नीतियां एक दूसरे के साथ इस तरह से अवगुंठित हैं कि उन्हें पूरी रतह से अलग अलग करके नहीं देखा जा सकता, लेकिन शाब्दिक रूप में वैश्वीकरण से तात्पग्र विभिन्न देशों द्वारा अपनाई जाने वाली उन आर्थिक नीतियों से है जिनमें उत्पत्ति के साधन,

श्रम, पंजी, टेक्नोलॉजी, कच्चा माल तथा विचारों के आदान प्रदान में किसी प्रकार की कानूनी बाधा न हो, अर्थात् इन सबके स्वतंत्र आवागमन हेतु सारा विश्व एक इकाई हो, वैश्वीकरण के अन्तर्गत एक देश स्वयं को शेष विश्व के साथ मुक्त भाव से जोड़ने का प्रयास करता है।
संक्षेप में वैश्वीकरण के अन्तर्गत निम्नलिखित को शामिल किया जाता है।

- विभिन्न देशों के बीच श्रम, पूंजी, टेक्नोलॉजी तथा कच्चे माल का मुक्त भाव से बिना किसी रोक टोक के अन्तर्गमन एवं बहिर्गमन।
- सभी प्रकार के मात्रात्मक प्रतिबंधों को हटाते हुए नाममात्र के प्रशुल्कीय ढांचे के अन्तर्गत वस्तुओं एवं सेवाओ का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार।
- सूचना प्रौद्योगिकी के अत्याधुनिक एवं परम्परागत साधनो का प्रयोग करते हुए सूचनाओं, आंकडों, ज्ञान, सांस्कृतिक एवं धार्मिक, विचारधाराओं का आदान प्रदान करते हुए सारे विश्व को वैश्विक गांव के रूप में संस्थापित करना।

वैश्वीकरण के लाभ

- वैश्वीकरण के समर्थकों मुख्य रूप से बहुराष्ट्रीय कम्पनियों तथा विकसित देशों की निजी कम्पनियों एवं सरकारों का तर्क है कि वैश्वीकरण को अपनाकर तृतीय विश्व में व्याप्त निर्धनता, बेरोजगारी, कुपोषण अशिक्षा जैसी गंभीर समस्याओं का निराकरण किया जा सकता है। वैश्वीकरण के सहारे पूंजी निर्माण की समस्या कमी से ग्रसित विकासशील एवं पिछडे देशों में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के माध्यम से निवेश बढ़ाया जा सकता है ।नए निवेश से राष्ट्रीय आय तथा रोजगार में वृद्धि होगी। ऑक्सफोड विश्वविद्यालय के प्रो. संजय लाल के अनुसार ''विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की मात्र एक प्रतिशत अतिरिक्त मात्रा में विनिर्माणी नियातों में 0.36 प्रतिशत की तथा उच्च प्रोद्योगिकी नियातों में 0.55 प्रतिशत की अतिरिक्त वृद्धि की जा सकती है।
- प्रौद्योगिकी प्रगति में पिछड़े विकासशील एवं अति पिछड़े देश वैश्वीकरण के जरिए विश्व की आधुनिकतम तकनीक प्राप्त करके अपनी उत्पादन क्षमताओं का विकास कर सकते हैं और इस प्रकार से अपने निर्यातों की डाली में प्राथमिक वस्तुओं परम्परागत निर्यात के साथ साथ विनिर्माणी वस्तुओं को शमिल करके निर्यातों को बढ़ा सकते है। ज्ञातव्य है कि विश्व की ''मिरैकिल इकनॉमी'' कही जाने वाले दक्षिण पूर्व एशियाई देशों सिंगापुर, थाइलैण्ड, इण्डोनेशिया मलेशिया तथा द. कोरिया और अब चीन की उच्च आर्थिक, संवृद्धि दर का रहस्य इन अर्थव्यवस्थाओं का निर्यातोन्मुखी स्वरूप होना है जो इन्होंने वैश्वीकरण के जरिये बनाया है।
- भारत जैसे विकासशील देश, जहॉं उच्चशिक्षित प्रशिक्षित श्रम बल अधिकता में है अपने देशी श्रम हेतु विकसित एवं विकासशील देशों में रोजगार की बेहतर संभावनाएं तलाश सकते हैं जैसे कि भारत के इंजीनियर, डॉक्टर, प्रोफेसर प्रबंधक विशेषज्ञ सं.रा. अमेरिका तथा ब्रिटेन जैसे विकसित देशों की अर्थव्यवस्थाअें के मेरूदण्ड हैं।
- विदेशी प्रत्यक्ष निवेश का बढावा देकर तथा निवेश के मामलें में घरेलू एवं विदेशी कम्पनियों के बीच सभी प्रकार का भेदभाव मिटाकर सड़क एवं राजमार्ग, रेलों, बन्दगाहों,

हवाई अड्डों का विकास किया जा सकता है। विद्युत गुह, तेल शोधनशालाओं, आधारभूत एवं प्रमुख उद्योगों की स्थापना की जा सकती है।

दोष

टेलीफोन, सेल्युलर फोन, इंटरनेट, ई मेल, ई व्यापार, ई चिकित्सा, ई शिक्षा, कम्प्यूटर जनित सूचना प्रौद्योगिक के सहारे विश्व के किसी भी भाग में स्थित सर्वोत्तम ज्ञान को कहीं भी प्राप्त किया जा सकता है।

3.4 कार्य और ज्ञान

शिक्षा को व्यावसायिक दृष्टि से सफल बनाने हेतु यह आवश्यक है कि इसे सुनियोजित ढंग से क्रियान्वित किया जाये तथा मांग व पूर्ति के मध्य विसंगतियों को समाप्त किया जाये व वैयक्तिक कार्य क्षमता को विकसित किया जाये। आज के युग में वैज्ञानिक व प्रौद्योगिकी के सिद्धान्तों को समझने हेतु भी व्यावसयिक शिक्षा की आवश्यकता होती है। वास्तव में वर्तमान युग में ज्ञान के व्यावहारिक प्रयोग पर अधिक बल दिया जा रहा है। किसी भी कार्य के करने के लिए उसका सैद्धान्तिक व व्यावहाकर ज्ञान होना अति आवश्यक है। कई कार्य ऐसे है समाज में जैसे डॉक्टर, इंजिनियर, वकील व अध्यापक जिसे अपने ज्ञान द्वारा ही सेवाएँ प्रदान करनी पड़ती है।
सोफिस्टो के अनुसार ''ज्ञान प्रगति है।'' वास्तव के ज्ञान को शिक्षाविदों सभी प्रकार से अच्छे व्यवहार की कुंजी मानते है। ज्ञान ही वह शक्ति है जो हमारे मानसिक विकास में सहयोग दी है।
रूसों ने ठीक कहा है - ''मेरा उद्देश्य बालक के मस्तिष्क को ज्ञान से सजाना मात्र नहीं है वरन् उसे यह भी सिखाना है कि वह जब भी आवश्यक हो ज्ञान का प्रयोग कर सके।''
जॉन एडमस ने इस उद्देश्य का अर्थ बौद्धिक परीक्षण माना है। उसने बौद्धिक परीक्षण के दो पक्ष बताये है। पोषण पक्ष और अनुशासनात्मक पक्ष। उनका मानना था कि मानव शरीर को जीवित रखने हेतु जिस प्रकार भोजन की आवश्यकता होती है। मनुष्य इस ज्ञान को धीरे धीरे आत्मसात करता है। वह अपने मस्तिष्क का एक अंग बना लेता है। वह ज्ञान मानव मन जो प्रशिक्षित करता है। इसके द्वारा बालक की तर्क विचार व निर्णय शक्ति का विकास होता है। विभिन्न क्षेत्रों का ज्ञान बालक को होना आवश्यक है। संसार के सभी प्रगतिशील देशों में बालकों को विभिन्न क्षेत्रों की व्यावहारिक ज्ञान दिया जाता है। खेद की बात है कि हमारे देश में बालक को किसी भी क्षेत्र में व्यावहारिक ज्ञान न देकर केवल सैद्धान्तिक ज्ञान को रटने के लिए बाध्य किया जाता है। इसलिए स्वामी विवेकानन्द ने भारतीयों को सचेत करते हुए परामर्श दिया - ''तुमको कार्य के सब क्षेत्रों का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। सिद्धान्तों के ढेरो से देश का नाश हो गया है।''
बालक के व्यक्तित्व के विकास के लिए उसमें ज्ञान और कर्म में सामंजस्य की आदत उत्पन्न करनी आवश्यक है जिसने कि वह जो सीखे वह करें और जब करें तो उसकी सीख/यदि नये सिखाये हुए ज्ञान का पूर्ण संचित ज्ञान से समन्वय कर लिया जाये तो उसकी स्मृति मस्तिष्क में स्थायी हो जाती है। और बालक उसमें अधिक रूचि ले पाता है।

3.5 जेण्डर एवं विकलांगता संबंधितमुद्दे

भारतीय संविधान में प्रावधान किया गया है कि संविधान लागू होने के पश्चात् से 10 वर्षो के अन्तर्गत सभी राज्य 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों के लिए निशुल्क व अनिवार्य शिक्षा की

व्यवस्था करेगें। अपनी आर्थिक क्षमता के अन्तर्गत राज्य विकलांग बालकों के लिए जीवनयापन शिक्षा एवं रोजगार की व्यवस्था करेगा।

इस समय भारतवर्ष में 6 से 15 वर्ष की आयु के लगभग 4-3प्रतिशत बच्चे विकलांग है जिनकी शिक्षा की समुचित व्यवस्था नहीं है। हमारा समाज पुरूष प्रधान समाज है। लिंग के आधार दर भी भिन्नता दिखाती है। जिसके कारण पुरूष और महिलाओं को शिक्षा में समान अवसर नहीं मिल पाते है।

हमारे देश में एक बड़ी संख्या में ऐसे बालक है जिन्हें उनकी जाति, वर्ग, या लिंग के कारण अनेक प्रकार के आभावों के जीवन व्यतीत करना पड़ता है। भारत देश में करीब 25 लाख अंधे, लंगडे, लूले, बहरे, गूंगे तथ अविकसित मस्तिष्क वाले बालक है जो अपनी जीवन चचर्या चलाने के लिए कई मुस्किलों से जूझ रहे है। कोठारी आयोग के अनुसार भारत में कई लाख विकलांग बालक है । अध्ययन की दृष्टि से हम इन्हें तीन भागों में विभक्त कर सकते है।

1- **शारीरिक रूप से विकलांग -** इस श्रेणी में हम लंगड़े, लूले, गूंगे, बहरें तथा अंधे बालको को शामिल करते हैं।
2- **बौद्धिक रूप से विकलांग -** जो बालक मानसिक न्यूनता से ग्रसित होते है, बौद्धिक रूप से विकलांग कहलाते है। इन बालकों का वृद्धि स्तर जन्म से भी न्यून होता है।
3- **सामाजिक रूप से विकलांग -** जो बालक सामाजिक खराब परिस्थितियों के कारण असामान्य हो गये है। सामाजिक रूप से विकलांगों की श्रेणी में आते है। ये बालक अपनी निर्धनता, अभिभावकों की अशिक्षा तथा निम्न सामाजिक स्थितियों के कारण शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते है।

विकलांग छात्रों के लिए शिक्षा व्यवस्था कराना भी चुनौति है इनके लिए तीन प्रकार के विद्यालय है - शारीरिक विकलांगों के लिए विद्यालय, बौद्धिक विकलांगों के विद्यालय सामाजिक विकलांगों के विद्यालय।

मुख्य रूप से शिक्षा के माध्यम से इन्हें स्वावलम्बी बनाना है। महिलाओं को भी रोजगार से जोड़ना आवश्यक है। भारतीय समाज मे आरंभ से भी यह मान्यता रही है कि महिलाएं शरीर व स्वभाव से कोमल होती है। अत: यह पुरूषों के समान सभी कार्यों को इतनी कुशलता से नहीं निभा पायेगी। महिलाएं मानसिक, वैचारिक, शारीरिक, निर्णय संबंधी योग्यताओं में पुरूषों से कही कम नहीं है अत: रोजगार दिये जाने के मामले में स्त्री पुरूष में भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए।

विकलांगों की व्यवसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने की व्यवस्था की जानी चाहिए। जिससे शिक्षोपरान्त अपना जीविकापार्जन कर सके। इसके लिए विकलांगों को विभिन्न प्रकार के हस्तशिल्प जैसे - कताई, बुनाई, कुर्सी बनना, चित्रकारी आदि का प्रशिक्षण प्रदान किया जा सकता है।

डॉ. फ्रेम्पटन के अनुसार अंधों के पाठ्यक्रम के वही उद्देश्य होने चाहिए जो सामान्य दृष्टि वाले के लिए होते है। अंधों की कुछ न्यूनताओं को ध्यान में रखकर निम्नांकित विषयों के अतिरिक्त रूप से सम्मिलित करना चाहिए। गृह विज्ञान, संगीत, शारीरिक कलाएं तथा गतिशीलता। इस पाठ्यक्रम के हेतु विद्यालयों को विशिष्ट पाठन विधियों को अपनाना पड़ेगा। जैसे श्रवण इन्द्रियों द्वारा अनुभवार्जन कराना, स्पर्श तथा ध्राण शक्तियों का विकास

करने के उपायों को अपनाना आदि। बहरों के लिए दृश्य साधनों से ही शिक्षा प्रदा की जा सकती है। इनकी ऐसी शिक्षा प्रदान करने की आवश्यक है जो सामान्य गुणों का विकास करने के अतिरिक्त उन्हें कुछ व्यावसायिक निपुणता प्रदान कर सके।

लगड़े लूलों की शिक्षा सामान्य बालकों के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम ही होनी चाहिए। इन बालकों के पैरों में दोष होते है। यद्यपि ये ठीक प्रकार से देख तथ तथा सुन सकते है। इनकी शिक्षा से संबंधित विद्यालयों को कुछ व्यवस्थाएं और करनी चाहिए। जैसे धुमावदार कुर्सियों की व्यवस्था हाथ दूषित बालकों के लिए बिजली के टंकन यंत्र, विद्यालय भवन के उपयुक्त फर्शों का निर्माण आदि।

मन्द बुद्धि, जड़ बुद्धि या निम्न बुद्धि बालकों को केवल स्थूल अतिरिक्त हस्तशिल्प भी सम्मिलित किया जाना चाहिए। पाठन विधि में करके सीखने काक अपनाना उपयुक्त है। इनको पढ़ाने के लिए अधिक से अधिक मात्रा में श्रृव्य-दुश्य सामग्री का प्रयोग करना चाहिए।

बदलते परिवेश में जहॉ महिलाएं शिक्षित हो रही है। उनमे अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता पैदा हुई है। विभिन्न व्यवसायों में उन्होंने अपने स्वयं की पहचान बनाई है। आज आवश्यकता इस बात की है कि परिवार द्वारा महिला को सम्मान की दृष्टि से देखा जाये। उसकी अपनी स्वयं की आवश्यकाताअें को पूर्ण करने में सहायता की जाये। घरेलू कार्यों हेतु दृष्टि से ना देखा जाये।

यदि हम समाज में महिलाओं को विभिन्न व्यवसायों में लगा देखना चाहते है तो कार्यशील महिलाओं की कार्यस्थल पर सुरक्षा का ख्याल रखना भी उतना अह्म है जितना घर की चार दीवारी में महिला की अस्मिता की सुरक्षा का।

कोई महिलायें अपने ही कार्यस्थल में अपनी उच्च अधिकारियों की हवस का शिकार बन जाती है। यौन शोषण के खिलाफ आवाज उठाने का साहस नहीं कर पाती।

कार्यस्थल में आधारभूत सुविधाओं की कमी भी कभी कभी महिलाओं को परेशानी में डल देती है। विशेषकर ग्रामीण कस्बों में जहॉ महिलाओं के लिए शौचालयों व अलग कमरों की कोई व्यवस्था नहीं होती है। उन्हें अपने पुरूष सहकर्मियों के साथ शेयर करना पड़ता है।

ग्रामीण महिलाएं जो बाहर जाती है उन्हें रहने की कोई जगह, क्रेश, शौचालय आदि प्राप्त हनीं होता जिसके कारण अपने और बच्चों के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। विद्यालय, स्वास्थ्य केन्द्र की सुविधाएं उपलब्ध नहीं होती।

महिलाओं और विकलांगों को कई मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। समाज को उनकी सहानुभूति रनहीं साहस से आगे बढ़ाने का मौका देना है।

3.6 सारांश

शिक्षा वास्तव में एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक मानव की शिक्षा की छिपी हुई शक्तियों का विकसित किया जाता है, उजागर किया जाता है। उसे नये ज्ञान कुशलताओं, मूल्यों, आदर्शों आदि को सिखाया जाता है जिससे कि वह अपने वातावरण पर अधिकार पा सके, समाज में अपना सही स्थान प्राप्त कर सकें और मानव जीवन के लेखों को प्राप्त कर सकें। बौद्धिक ज्ञान के साथ साथ व्यावहारिक ज्ञान पर भी अधिक बल दे। महिलाओं और विकलांगों को स्वावांलम्बी बनाने से भी शिक्षा की उपयोगी बनाया जाय।

3.7 अभ्यास

1. सत्य/असत्य

   a. गांधीजी ने आत्मनिर्भर शिक्षा पर बल दिया।
   b. गांधी जी की शिक्षा योजना को बेसिक शिक्षा की संज्ञा दी गई।
   c. वैश्वीकरण के भू मण्डलीकरण भी कहते है।
   d. वैश्वीकरण के मार्ग में अशिक्षा कोई बाधा नहीं ह।
   e. कार्य स्थल पर महिलायें पूर्ण रूप से सुरक्षित है।

   उत्तर 1 सही 2 सही 3 सही 4 गलत 5 गलत

2 शिक्षा और कार्य को समझाइये।

3 वैश्वीकरण पर एक लेख लिखिए।

5 जैंडर एवं विकलांगता संबंधितमुद्दे की व्याख्या कीजिए।

3.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

- रूहेला सत्यापाल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा
- सक्सेना , एन.आर. स्वरूप, शिक्षा के दार्शनिक एवं समजाशास्त्रीय सिद्धान्त, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ

इकाई - 4

कार्य एवं पाठ्यक्रम, शिक्षा में कार्य के प्रकार , क्षेत्रीय अनुभवों से सीखना/अधिगम ,सामुदायिक कार्य और सामाजिक सहभागिता

(Work and Curriculum, Typology of Work in Education, Learning From Field Experiences, Community Work and Social Engagement)

इकाई की रुपरेखा –

4.1 प्रस्तावना (Introduction)
4.2 उद्देश्य (Objectives)
4.3 कार्य का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Work)
4.4 पाठ्यक्रम का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Curriculum)
4.5 कार्य व पाठ्यक्रम में सम्बन्ध (Relation Beetwin Work & Curriculum)
4.6 शिक्षा में कार्य के प्रकार (Typology of Work in Education)
4.7 क्षेत्रीय अनुभवों से सीखना/ अधिगम (Learning From Field Experiences)
4.8 सामुदायिक कार्य (Community Work)
4.9 सामाजिक सहभागिता (Social Engagement)
4.10 सारांश (Summry)
4.11 अभ्यास प्रश्न
4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षा मानव विकास का सर्वोत्तम साधन है | वर्तमान समय में व्यक्ति ,समाज तथा राष्ट्र की आवश्यकताओं की पूर्ति उत्तम शिक्षा से ही सम्भव है | शिक्षा की प्रक्रिया में विभिन्न युगों में देश ,काल एवं परिस्थिति के अनुसार अलग-अलग पक्षों को प्राथमिकता दी जाती रही है | कभी शिक्षकों को ,कभी छात्रों को ,कभी विषयवस्तु को तो कभी शिक्षण उद्देश्यों को भी महत्त्व दिया जाता रहा है | वर्तमान समय में उद्देश्यों एवं पाठ्यक्रम को विशेष महत्त्व दिया जा रहा है | शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की व्यवस्था तथा शिक्षण परीक्षण अधिगम प्रक्रिया में भी उद्देश्यों को ही महत्त्व दिया जा रहा है| उद्देश्य साध्य होते है इनकी प्राप्ति के लिए साधन की आवश्यकता होती है | शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति का सर्वोत्तम साधन पाठ्यक्रम एवं कार्य ही है किन्तु जितना अधिक ध्यान उद्देश्यों पर दिया गया है उतना पाठ्यक्रम एवं कार्यो पर नहीं दिया गया है | शिक्षा की प्रक्रिया सार्थकता एवं प्रभावशीलता

के लिए साध्य एवं साधन में समन्वय स्थापित करना अति आवश्यक है | इसीलिए उद्देश्यों के साथ-साथ पाठ्यक्रम एवं कार्यो को भी उतना ही महत्त्व दिया जाना चाहिए जितना की उद्देश्यों को क्योकि बिना साधन के साध्य की प्राप्ति सम्भव नहीं है | **महात्मा गांधीजी** ने भी कहा है कि " उत्तम साध्य के लिए उत्तम साधन का होना अनिवार्य है |"

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में पाठ्यक्रम की नवीन संकल्पना का विकास हुआ तथा उद्देश्यों को अधिक महत्त्व प्रदान किया गया | पाठ्यक्रम के विकास के लिए शिक्षाविदों ने भरसक प्रयास किया और आज भी किये जा रहे है | पाठ्यक्रम विकास को शिक्षा की विषयवस्तु का महत्वपूर्ण अंग माना गया है तथा पाठ्यक्रम में ही कार्य को भी महत्वपूर्ण माना गया है क्योंकि बिना कार्य के पाठ्यक्रम का निर्माण सम्भव नहीं है | पाठ्यक्रम निर्माण एवं कार्य पर आज भी अनुसन्धान कार्य किया जा रहा है जिससे पाठ्यक्रम निर्माण में गुणवत्ता लायी जा सके | विभिन्न विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम निर्माण के लिए अनेक प्रतिमान विकसित किये गये है | पाठ्यक्रम एवं कार्य में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है क्योंकि बिना कार्य के कारण की उत्पत्ति और बिना कारण के कार्य की उत्पत्ति सम्भव नहीं होती है | पाठ्यक्रम निर्माण के साथ शिक्षा में कार्यो के प्रकारों का भी उल्लेख किया गया है | पाठ्यक्रम विकास में सामुदायिक कार्यो एवं सामाजिक सहभागिता का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है | पाठ्यक्रम का सम्बन्ध शिक्षा के औपचारिक माध्यम से होता है और औपचारिक शिक्षा विद्यालयों में सम्पन्न होती है | विद्यालयों द्वारा बालकोंको जीवन के उद्देश्यों को प्राप्त करने तथा उन्हें समुचित ढंग से शिक्षा प्रदान करने हेतु जो ज्ञानराशिनिश्चित एवं निर्धारित की गई है उसे ही पाठ्यक्रम का नाम दिया गया है |अत: कहा गया है कि बिना पाठ्यक्रम के कोई भी कार्य पूर्ण नहीं होता है और बिना कार्य के पाठ्यक्रम का विकास सम्भव नहीं है | इस प्रकार इस इकाई में कार्य एवं पाठ्यक्रम का विस्तृत वर्णन किया गया है |

4.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात विद्यार्थी निम्नलिखित उद्देश्यों को समझ सकेंगे –

- कार्य के अर्थ व परिभाषा को ज्ञात कर सकेंगे |
- पाठ्यक्रम के अर्थ व परिभाषा को अवबोध कर सकेंगे |
- कार्य व पाठ्यक्रम में सम्बन्ध बता सकेंगे |
- शिक्षा में कार्य के प्रकारों का उल्लेख कर सकेंगे |
- क्षेत्रीय अनुभवों से अधिगम प्राप्त कर सकेंगे |
- सामुदायिक कार्यो को समझ सकेंगे |
- सामुदायिक कार्यो की शिक्षा में उपयोगिता को समझ सकेंगे |
- सामाजिक सहभागिता के अर्थ को बता सकेंगे |
- सामाजिक सहभागिता का शिक्षा में महत्त्व को समझ सकेंगे |
- कार्य व पाठ्यक्रम की शिक्षा में उपयोगिता का उल्लेख कर सकेंगे |

4.3 कार्य का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Work)

कार्य से तात्पर्य किसी क्रिया को करने से है |क्रिया जनकत्वं कार्यं अर्थात क्रिया से उत्पन्न होने वाले कर्म को ही कार्य कहते है | अर्थात किसी उपलब्धि या परिणाम को प्राप्त करने के लिए जो मानसिक व शारीरिक प्रयास किये जाते है उन्हें कार्य कहते है | किसी उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए जिस प्रक्रिया से गुजरा जाता है उसे कार्य कहते है |

ऑक्सफोर्ड डिक्सनरी के अनुसार " शिक्षा के साथ शारीरिक व मानसिक परिश्रम को इस प्रकार जोड़ने की प्रक्रिया है जिससे व्यक्ति ,समाज या समुदाय के लिए किसी उपयोगी वस्तु या सेवा का सृजन हो सके वह कार्य कहलाता है |" **महात्मा गांधी के अनुसार** " सारा ध्यान अभी तक हमने बच्चो के मन में किताबी ज्ञान ही भरा है तथा उनको प्रेरणा देने वाली बात अभी तक सोची नहीं है आओ हम सब मिलकर इसे बंद करे और बालकों को उनकी बौद्धिक क्रिया के साथ एक मुख्य साधन कार्य शिक्षा पर ध्यान दे |"

मनुस्मृति के अनुसार " कार्य करने वाले सदा ही निर्मल होते है |"

रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार " यदि हम बालकों का विकास करना चाहते है तो हमे नई शिक्षा योजना में हस्तशिल्प कार्य को विशेष महत्त्व देना चाहिए जिससे अच्छे शिल्पशास्त्रियो का निर्माण हो सके |"

ईश्वर भाई पटेल के अनुसार " कार्य शिक्षार्थी और समुदाय की आवश्यकताओं की पूर्ति से सम्बन्धित उद्देश्य अर्थपूर्ण हस्तकार्य है जिसका परिणाम किसी वस्तु का निर्माण अथवा सेवा कार्य के रूप में है जो समुदाय के लिए उपयोगी सिद्ध होता है | ये केवल यांत्रिक ढंग से ही न किया जाये वरन इनमे योजना निर्माण ,विश्लेष्ण एवं विस्तृत तैयारी का भी समावेश किया जाये | " कार्य को शिक्षा में सामाजिक ,उपयोगी एवं उत्पादक की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना है | सामाजिक कार्य करने से छात्रों में सामाजिकता का विकास होता है जो छात्रों के भावी जीवन में सामाजिक दृष्टि से उपयोगी होता है | यहाँ पर कार्य का सम्बन्ध पाठ्यक्रम से है और पाठ्यक्रम का निर्माण विद्यालय शिक्षा के लिए होता है | विद्यालयों में पाठ्य-विषयों के साथ-साथ ऐसी प्रवृतियों का समावेश भी किया जाने लगा जिनसे बालकों में बौद्धिक ज्ञान के साथ-साथ स्वास्थ्य ,सौन्दर्यबोध ,सृजनात्मकता तथा अन्य मानवीय एवं सामाजिक गुणों का समुचित विकास भी हो सके | इसीलिए पाठ्यक्रम में ज्ञानात्मक ,अवबोधात्मक एवं क्रियात्मक कार्यो पर जोर दिया गया है | प्राचीन समय में शिक्षा का मुख्य कार्य गुरुकुलों में होता था जहा पर शिक्षार्थी पूरे समय रहकर गुरु की सेवा कर गुरु से ज्ञान प्राप्त करते थे | गुरु के आश्रम की सफाई करना ,पशुओं-पक्षियों की देखभाल करना तथा भिक्षाटन के माध्यम से कर्तव्यपालन ,सेवाभाव ,विनयशीलता तथा अन्य चारित्रिक गुणों की शिक्षा प्राप्त करने का कार्य भी करते थे | साथ ही विद्यालय में रहते हुए शिक्षक के संरक्षण में विद्यार्थी जो भी क्रियाएँ करता है वह सभी कार्य व पाठ्यक्रम के अंतर्गत आती है | इसके अलावा विद्यालय में होने वाली पाठ्यसहगामी क्रियाएँ भी सम्मिलित होती है |

शिक्षा में कार्य की आवश्यकता (Need of Work in Education):- देश में सामाजिक तथा आर्थिक एकीकरण के लिए कार्य करने की आवश्यकता होती है | कार्य से शिक्षा का सम्बन्ध उत्पादकता से जुडा हुआ होता है | कार्य करते हुए प्राप्त अनुभव से बालक औद्योगिक कुशलता प्राप्त करता है तथा शिक्षा प्राप्त करके वह मात्र नौकरी पाने के लिए ही प्रयत्नशील नहीं रहता है अपितु स्वरोजगार व नौकरी दिलाने के लिए कोशिश कर सकता है | कार्य करने से शारीरिक व मानसिक

विकास तीव्र गति से होता है और शिक्षा से बालक का विकास सर्वांगीण विकास होता है | अत: शिक्षा में कार्य को उत्पादकता ,स्वरोजगार एवं शारीरिक विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है| कार्य करने से बालकों में क्षेत्रीय अनुभव ,वैज्ञानिक तकनीकी एवं व्यावसायिक कुशलता का विकास होता है | कार्य के दौरान बालक को स्वयं अनुशासित होकर सामूहिक भावना से एक साथ कार्य करना पड़ता है इससे बच्चों में सहनशीलता ,सहयोग ,मिलजुल कर रहने की आदत एवं सामाजिक प्रतिबद्दता का विकास होता है |

कार्य का महत्त्व (Importance of Work):- शिक्षा में कार्य का महत्त्व निम्न प्रकार से है –

(i) कार्य से बालकों का शारीरिक व मानसिक विकास होता है |

(ii) कार्य करने से बालक आत्मनिर्भर ,दूरदर्शी ,क्रियाशील तथा आत्मविश्वासी बनते है|

(iii) कार्य करने से छात्रों में अनुभव बढ़ता है |

(iv) छात्रों का चारित्रिक व सामाजिक विकास होता है |

(v) कार्य से बालकों में उत्तरदायित्व की भावना जाग्रत होती है |

(vi) हस्तकार्य के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण का विकास होता है |

(vii) कार्य श्रमजीवी व बुद्धिजीवी के बीच मध्यस्थता स्थापित करता है |

(viii) कार्य करने से विभिन्न कौशलों का अर्जन होता है |

(ix) नई पीढ़ी को जागरूक एवं प्रगतिशील बनाते है |

(x) स्वशिक्षा एवं स्वयं करके सीखने कीप्रक्रिया में सहायक होता है |

4.4 पाठ्यक्रम का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Curriculum)

पाठ्यक्रम शब्द अंग्रेजी भाषा के कुरिकुलम (Curriculum) शब्द का हिंदी रूपान्तर है | कुरिकुलम शब्द लैटिन भाषा के कुरे शब्द से बना है जिसका अर्थ है दौड़ का मैदान | दुसरे शब्दों में कुरिकुलम वह क्रम है जिसे किसी व्यक्ति को अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँचने के लिए पार करना होता है |अत: पाठ्यक्रम वह साधन है जिसके द्वारा शिक्षा व जीवन के लक्ष्यों की प्राप्ति होती है | यह अध्ययन का निश्चित एवं तर्कपूर्ण क्रम है जिसके माध्यम से शिक्षार्थी के व्यक्तित्व का विकास होता है तथा वह नवीन ज्ञान एवं अनुभव को ग्रहण करता है | संकुचित अर्थ में पाठ्यक्रम केवल स्कूली शिक्षा या पुस्तकीय ज्ञान तक ही सीमित होता है परन्तु विस्तृत अर्थ में पाठ्यक्रम के अंतर्गत वह सभी अनुभव आ जाते है जिसे एक नई पीढ़ी अपनी पुरानी पीढियों से प्राप्त करती है | विद्यालयों का प्रमुख कार्य बालकों को शिक्षा प्रदान करना होता है और इसकों पूर्ण करने के लिए वहां पर जो कुछ भी किया जाता है उसे पाठ्यक्रम का नाम दिया गया है | पाठ्यक्रम को विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से परिभाषित किया है –

कनिघम महोदय के अनुसार –" पाठ्यक्रम कलाकार रूपी शिक्षक के हाथ में एक साधन है जिससे वह अपनी सामग्री रूपी शिक्षार्थी को अपने आदर्श रूपी उद्देश्य के अनुसार अपनी चित्रशाला रूपी विद्यालय में ढाल सके |"

सी वी गुड के अनुसार " किसी परीक्षा को उत्तीर्ण करने अथवा किसी व्यावसायिक क्षेत्र में प्रवेश के लिए किसी शिक्षालय द्वारा छात्रों के लिए प्रस्तुत विषय सामग्री की योजना को पाठ्यक्रम कहते है |"

जॉन डीवी के अनुसार " सीखने का विषय या पाठ्यक्रम ,पदार्थों ,विचारों और सिद्धांतो का चित्रण है जो निरंतर उद्देश्यपूर्ण क्रियान्वेष्ण से साधन या बाधा के रूप में आ जाते है |"

बाल्टर एस मुनरो के अनुसार " पाठ्यक्रम को किसी विद्यार्थी द्वारा लिए जाने वाले विषयों के रूप में परिभाषित नहीं किया जाना चाहिए | पाठ्यक्रम की कार्यात्मक संकल्पना के अनुसार इसके अंतर्गत वह सब अनुभव आ जाते है जो विद्यालय में शिक्षा के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किये जाते है |"

फ्रोबेल के अनुसार " पाठ्यक्रम सम्पूर्ण मानव जाति के ज्ञान एवं अनुभव का प्रतिरूप होना चाहिए|"

ब्लान्ड्स के अनुसार " पाठ्यक्रम को क्रिया एवं अनुभव के परिणाम के रूप में समझा जाना चाहिए न कि अर्जित किये जाने वाले ज्ञान और संकलित किये जाने वाले तथ्यों के रूप में | विद्यालय जीवन के अंतर्गत विविध प्रकार के कलात्मक शारीरिक एवं बौद्धिक अनुभव तथा प्रयोग सम्मिलित रहते है|"

इस प्रकार पाठ्यक्रम के निर्माण में बालकों की अभिरुचि एवं कार्य क्षमता को विशेष महत्व तो दिया ही जाना चाहिए ,साथ ही पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जिससे उसके क्रियान्वन से स्वत: ही उसमें बालक की अभिरुचि का विकास हो सके | पाठ्यक्रम का निर्माण बालकों के जीवन की तैयारी से सम्बन्धित आदर्शो पर आधारित होना चाहिए | इस प्रकार के पाठ्यक्रम से बालकों की अभिरुचि ,कार्य क्षमता ,व्यावसायिक योग्यता आदि का विकास होता है |

बोध प्रश्न –

1. कार्य की परिभाषा बताइए |
2. पाठ्यक्रम की परिभाषा को समझाइये |
3. कार्य के महत्त्व का वर्णन कीजिये |

4.5 कार्य व पाठ्यक्रम में सम्बन्ध (Relation Beetwin Work & Curriculm)

शिक्षा में पाठ्यक्रम व कार्य के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है क्योंकि बिना क्रिया ,गतिविधि ,सहगामी क्रियाओं के तथा खेल कूद ,शारीरि क स्वास्थ्य सम्बन्धी क्रियाओं के पाठ्यक्रम का निर्माण नहीं होता है | पाठ्यक्रम में वे सभी क्रियाये सम्मिलित होती है जो एक बालक विद्यालय में ,समाज में तथा परिवार में करता है | पाठ्यक्रम में बालकों के शारीरिक विकास एवं शास्त्रविद्या पर अधिक ध्यान दिया जाता है | शारीरिक क्रियाओं के साथ-साथ साहित्य ,दर्शन एवं ललित कलाओं को भी अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए | यूरोप और अमेरिका में भी शिक्षा का उद्देश्य छात्रों को पढने ,लिखने ,बोलने एवं सामान्य गणना सकने योग्य बना देना मात्र था लेकिन वर्तमान में वहाँ के पाठ्यक्रम के अंतर्गत ऐसी अनेक प्रवृतियों का समावेश किया गया है जो बालकों को क्रियाशील एवं सृजनात्मक बना सके | परिश्रम सम्बन्धी एवं सृजनात्मक सम्बन्धी कार्य करने से बालकों का शारीरिक ,मानसिक ,बौद्धिक एवं संवेगात्मक विकास होता है जिसके आधार पर मनोवैज्ञानिकों ने पाठ्यक्रम को व्यावहारिक व क्रियात्मक बनाया है | राष्ट्रीय पाठ्यक्रम फ्रेमवर्क 2005 में भी राष्ट्रीय ज्ञान आयोग के अध्यक्ष प्रो. सैम पित्रोदा तथा यशपाल समिति के अध्यक्ष प्रो. यशपाल ने दो प्रकार के पाठ्यक्रम का उल्लेख किया है - सैद्धांतिक व प्रायोगिक | सैद्धांतिक पाठ्यक्रम में सिर्फ बालकों विषयवस्तु से सम्बन्धित ज्ञान ही कराया जाता है | इसमें केवल बालकों को विषय से सम्बन्धित पाठ्यक्रम को सिखाया जाता है | प्रायोगिक पाठ्यक्रम में बालकों को प्रयोग एवं कार्य करने के लिए

बल दिया जाता है | प्रायोगिक पाठ्यक्रम में छात्रों को सामाजिक ,पारिवारिक ,व्यावहारिक एवं व्यावसायिक विषयों से सम्बन्धित ज्ञान प्रदान करता है | इसमें शारीरिक गतिविधियों के साथ-साथ अनेक पाठ्यसहगामी क्रियाओं पर बल दिया जाता है जिससे छात्रों के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास हो सके | इस प्रकार हम कह सकते है कि कार्य या क्रिया के बिना पाठ्यक्रम अपूर्ण है और पाठ्यक्रम या पाठ्य विषयवस्तु के बिना कार्य का कोई महत्त्व है | पाठ्यक्रम का स्थान क्रिया के बाद आता है क्योंकि बालक पैदा होते ही सर्वप्रथम क्रिया करना प्रारम्भ करता है जैसे – हाथ हिलाना ,पैर चलाना ,पलक झपकाना ,एकटक दृष्टि से प्रकाश की ओर देखना | जैसे जैसे उस बालक का शारीरिक व मानसिक विकास होता जाता है वैसे वैसे उसमे कार्य करने की क्षमता विकसित होती जाती है | जब बालक तीन वर्ष का होता है तब वह विद्यालय में पढने के लिए जाता है तो वह पाठ्यक्रम को सीखना प्रारम्भ करता है | इस प्रकार हम कह सकते है कि कार्य व पाठ्यक्रम एक ही सिक्के के दो पहलू है जिन्हें अलग करके नहीं देखा जा सकता अपितु एक इकाई या मिश्रण के रूप में ही देखा जाता है | इसीलिए कार्य व पाठ्यक्रम में घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है |

4.6 शिक्षा में कार्य के प्रकार (Typology of Work in Education)

शिक्षा की वर्तमान अवधारणा के अनुसार शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बालक के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाना है | इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु शिक्षकों एवं पाठ्यक्रम निर्माताओं को बालक की प्रकृति ,उसके विकास के विभिन्न स्तरों पर उसकी आवश्यकताओं ,क्षमताओं ,अभियोग्यताओं ,अभिरुचियों ,आकांक्षाओं ,अनुभवों एवं कार्यो को ध्यान में रख कर ही पाठ्यक्रम का निर्माण करते है | शिक्षा में पाठ्यक्रम के अंतर्गत ऐसी क्रियात्मक परिस्तिथियों को सम्मिलित किया जाता है जिससे छात्रो की अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी ढंग से संचालित किया जा सके | प्रभावी अधिगम प्रक्रिया का कार्य छात्र व शिक्षक के मध्य विद्यालय में ही होता है | वर्तमान समय में विद्यालय का कार्यक्षेत्र समयबद्द पठन पाठन के सिमित घेरे से निकलकर एक व्यापक रूप धारण कर चुका है तथा इसमें निरंतर वृद्धि होती जा रही है | विद्यालयों में आयोजित की जाने वाली सभी प्रवृतियाँ पाठ्यक्रम का ही अंग होती है | अत: पाठ्यक्रम के विस्तार क्षेत्र का निर्धारण करना भी उतना ही कठिन कार्य है फिर भी शिक्षाविदों ने पाठ्यक्रम के अंतर्गत संपादित होने वाले कार्यो के आधार पर पाठ्यक्रम का निर्माण करने का प्रयास किया है |

माइकेल पेलार्डी के अनुसार शिक्षा पाठ्यक्रम निर्माण में कार्य क्षेत्र का निर्धारण करना पड़ता है | कार्यक्षेत्र निर्धारण के आधार पर कार्यो को पांच भागो में वर्गीकृत किया गया है–

(i) **शैक्षिक नियोजन का कार्य (Educational Planing Work) :-** किसी भी कार्य को करने से पहले उसकी योजना बनानी पडती है | योजना बनाने से कार्य सरल एवं शीघ्र ही पूर्ण हो जाता है | दुसरे समय में कार्य को कैसे करे इसकी योजना बनानी होती है | योजनाबद्ध कार्य से ज्यादा समय खर्च नहीं होता है | विद्यालय में शिक्षा का कार्य सुव्यवस्थित तरीके से चलने के लिए समय सारणी बनाने पर जोर दिया जाता है | शैक्षिक नियोजन कार्य से ऐसी पद्धति का विकास होता है जिसमे व्यक्ति अपने निर्णयों के बारे में पहले से ही निश्चित कर लेता है | शैक्षिक नियोजन का कार्यक्रम इस प्रकार से किया जाना चाहिए जिससे बालकों को नकारात्मक अभिप्रेरणाओं से बचाया जा सके | शैक्षिक नियोजन का कार्यक्रम उचित होने से विद्यालय में शैक्षिक ,सहशैक्षिक कार्य ,वितीय प्रबन्ध

का कार्य ,एवं छात्रो के खेलकूद का कार्य यथा समय पर पूर्ण होता है | शैक्षिक नियोजन उचित होने से छात्रो में रूचि एवं उत्साह का संचार होता है |

(ii) **प्रतिक्रियात्मक कार्य (Reactionary Work) :-** आधुनिक युग में अधिकांश कार्य क्रिया प्रतिक्रियात्मक कार्य द्वारा ही सम्पन्न होते है | इस कार्य के दौरान केवल संदेश ,फेसबुक ,ट्वीटस,वोइसमेल किया जाता है | विद्यार्थियों के सीखने में शिक्षण के साथ-साथ मुक्त वातावरण में पारस्परिक सामाजिक अंत:क्रिया का विशेष महत्त्व होता है | इसलिए विद्यालय में छात्रों व शिक्षकों को ऐसी अंत:क्रिया के लिए अवसर दिया जाना चाहिए | **पाल. एच. हर्स्ट** ने भी पाठ्यक्रम में मुक्त वातावरण की नवीन प्रवृतियों को सम्मिलित करने पर जोर दिया है | **शाने & मैक्सवेन** द्वारा भी नवीन पाठ्यक्रम की संकल्पना में सामाजिक अंत:क्रियाओं को भी महत्त्वपूर्ण माना है | इसमें विद्यार्थी स्वयं क्रिया के प्रति प्रतिक्रिया करके सीखते है जिसमे उनके सामने कुछ उद्दीपन होते है और उन उद्दीपकों को देखकर ही विद्यार्थी स्वयं क्रिया करने के लिए प्रेरित होता है |

(iii) **असुरक्षात्मक कार्य (Insecurity Work) :-** इस प्रकार के कार्यो के अंतर्गत औद्योगिक व उत्पादक कार्यो को सम्मलित किया जाता है | औद्योगिक प्रगति के कारण बढती हुई दुर्घटनाओं के बचाव हेतु पाठ्यक्रम में सुरक्षा शिक्षा तथा मालिक मजदूरों के झगड़ों के निराकरण हेतु पाठ्यक्रमों में समाजवादी दृष्टिकोण का समावेश किया गया है | वर्तमान समाज में हमारे बारे में या कम्पनी या कार्य के बारे में कोई दुसरे व्यक्ति क्या सोचते है जिसके कारण हमारा कार्य असमंजस या अनिश्चितता की स्थिति में हो जाता है |

(iv) **तरीका या कार्य प्रणाली (Procedural Work) :-** समय पर किये जाने वाले कार्यो के प्रति प्रशासन व सुधारात्मक तरीकों ,वस्तुओं एवं पठन सामग्री को तथा शिक्षण अधिगम प्रवृतियों को प्रभावशाली तरीके से किया जाये जिससे कार्य करने की पद्धति या प्रणाली में गुणात्मक सुधार हो सके | इस प्रकार के कार्य के अंतर्गत कार्य करने की पद्धति ,निति ,तकनीकी ,विधि एवं व्यूहरचनाओं को सम्मिलित किया जाता है | जैसे विद्यालय या किसी कम्पनी में एक प्रबन्धक का कार्य करने का तरीका बहुत अच्छा होता है जिससे सभी कर्मचारीगण खुश रहते है | विद्यालय में भी शिक्षक अध्यापन के दौरान नवीनतम तकनीकी प्रवृतियों को अपनाता है जिसके माध्यम से छात्रों को नवीन ज्ञान प्राप्त होता है |

(v) **समस्या समाधान कार्य (Problem Solving Work) :-** इस संसार में मानव जीवन के विकास की प्रक्रिया में जन्म से लेकर मृत्य पर्यन्त तक मानव के सामने समस्याओं का अंबार खड़ा हो जाता है जिससे उसके जीवन विकास में रूकावट आ जाती है | मानव द्वारा प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का अभियान नवीन खोज एवं आविष्कार निरंतर परिवर्तन होने वाली सामाजिक आर्थिक परिस्थितियां ,ज्ञान का विस्फोट तथा विभिन्न राजनैतिक विचारधाराओं आदि के द्वारा मानव को सदैव नई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है | इन चुनौतियों का सफलतापूर्वक समाधान निकालने के लिए मानव को अपनी वर्तमान अवस्था में उचित परिवर्तन करना पड़ता है | इस कार्य के अंतर्गत छात्र स्वयं किसी भी समस्या का समाधान करने के लिए हर परिस्थिति में समायोजन करने का प्रयास करते है | छात्रों के सामने शारीरिक ,मानसिक ,बौद्धिक ,आर्थिक ,सांवेगिक शैक्षिक आदि समस्याऐ होती है जिनका समय समय पर शिक्षकों के मार्गदर्शन से समस्या का समाधान कर लेते है |

बोध प्रश्न –

1. शिक्षा में कार्य के कितने प्रकार है ?
2. शिक्षा में कार्य के प्रकारों का उल्लेख कीजिये |
3. शैक्षिक नियोजन कार्य से आप क्या समझते है ?

4.7 क्षेत्रीय अनुभवों से सीखना/अधिगम (Learning From Field Experiences)

अधिगम प्रक्रिया एक सामाजिक प्रक्रिया है | व्यक्ति प्रभावशाली एवं चिरस्थायी अधिगम केवल तभी प्राप्त करता है जब वह विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों के साथ सामाजिक क्रियाओं में सम्मिलित होता है या जब नई इन्द्रिय क्रियाओं को मौजूदा ज्ञान व समाज से संबंधित किया जाता है | अधिगम-प्रक्रिया के सैद्धांतिक पक्षों की अपेक्षा इसका व्यावहारिक एवं शैक्षिक पक्ष को अधिक महत्वपूर्ण माना है किन्तु मनोविज्ञान के विकास के साथ ही अधिगम प्रक्रिया का बहुत तीव्र गति से विकास हुआ है | अधिगम प्रक्रिया के क्षेत्र में निरंतर नये अनुसन्धान एवं प्रयोग किये जा रहे है | मनोवैज्ञानिकों ने अधिगम के अनेक सिद्धांतो का निर्माण किया है जिन्होंने बालकों के संज्ञानात्मक एव क्षेत्रीय अनुभवात्मक ज्ञान के विकास पर बल दिया है | अधिगम का अर्थ है कुछ क्रियाओं को एक साथ सम्पन्न करके सम्पूर्ण रूप से किसी अनुभव को प्राप्त करना | यह सम्पूर्ण अनुभव अनेक क्रियाओं एवं उपक्रियाओं से प्राप्त ज्ञान के अनुभवों से बनता है | क्षेत्रीय अनुभव अधिगम निम्न बिन्दुओं से प्राप्त किया जा सकता है –

(i) **उद्देश्य/लक्ष्य** – क्षेत्रीय अनुभव अधिगम प्राप्त करने के लिए कोई न कोई उद्देश्य या लक्ष्य होना चाहिए |

(ii) **अभिप्रेरणा** – मनुष्य जो भी कार्य करता है ,वह किसी न किसी अभिप्रेरणा से संचालित होता है | अभिप्रेरणा मनुष्य को कार्य की ओर ले जाने का कार्य करती है|

(iii) **उद्दीपन/उत्तेजना** – उत्तेजना क्रिया के सम्पादन में सहायक होती है | बाह्य वातावरण ,साधन ,दृश्य आदि कार्य करने के प्रति उत्तेजना उत्पन्न करते है |

(iv) **प्रत्यक्षीकरण** – प्रत्यक्षीकरण पूर्व अनुभव के आधार पर संवेदना की व्याख्या करता है | क्रिया की सम्पन्नता के लिए प्रत्यक्ष ज्ञान की आवश्यकता होती है |

(v) **पुनर्बलन** – पुनर्बलन के अंतर्गत वे सभी क्रियाये एवं तथ्य आ जाते है जिनके वशीभूत होकर छात्र को क्रियाये करनी पडती है |

(vi) **संगठन** – पूर्व ज्ञान और नवीन ज्ञान में संबंध स्थापित करने के लिए अधिगम क्रिया के विभिन्न अंगों को संगठित करना होता है |

अधिगम सिद्धांत (Theories of Learning):- मनोवैज्ञानिको ने अधिगम के विभिन्न सिद्धांतों एवं मतों का निर्माण किया जिनको चार वर्गों में विभाजित किया है – मानसिक अनुशासन या संकाय सिद्धांत,साहचर्य सिद्धांत ,क्षेत्र सिद्धांत एवं कार्यात्मक सिद्धांत |

अधिगम के क्षेत्र या संज्ञानात्मक सिद्धांत (Field or Cognitive Theories of Learning):- क्षेत्र का सामान्य अभिप्राय उस परिवेश से है जिसमे सभी घटनाएँ घटित होती है क्षेत्र सिद्धांत के अंतर्गत आने वाले प्रमुख सिद्धांत है -

(i) पूर्णाकारवाद का सिद्धांत (Gestalt Theory)

(ii) तलरूप सिद्धांत (Topology Theory)

(iii) प्रतीक पूर्णाकार सिद्धांत (Sign Gestalt Theory)

गैस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिकों के अनुसार व्यक्ति सम्पूर्ण परिस्थितियों का अवलोकन करके अचानक समस्या के प्रति समझ ,ज्ञान व हल प्राप्त कर लेता है | वही आकस्मिक ज्ञान व्यक्ति को अधिगम अनुभव ने सहायक होता है | अनुभवात्मक अधिगम क्षेत्रीय अनुभव के माध्यम से सीखने की प्रक्रिया है | इसमें व्यक्ति चिन्तनशील होकर अपने कार्य को सीखता है |अनुभवात्मक अधिगम व्यक्तिगत सीखने की प्रक्रिया है | इसमें अधिगमकर्ता स्वयं निरीक्षण व खोज करता है और ज्ञान के साथ नवीन प्रयोग करता है | जैसे एक बालक चिड़ियाघर में जाकर विभिन्न जानवरों का निरीक्षण करता है ,देखता है ,प्रत्यक्ष अनुभव करता है और वह स्थायी रूप से पूर्ण ज्ञान प्राप्त करता है | अगर यही ज्ञान शिक्षक कक्षा में बच्चों को सुनाकर कराता है तो वह प्रभावी नहीं होता है | क्षेत्रीय अनुभव अधिगम एक पारम्परिक अधिगम व्यवस्था से हटकर छात्रों को प्रत्यक्ष अनुभवो से ज्ञान ,कौशल और मूल्यों के विकास की एक प्रक्रिया है | क्षेत्रीय अनुभव अधिगम के निम्न तत्व होने चाहिए –

(i) चिंतनशीलता ,तर्कपूर्ण विश्लेषण और संश्लेषण |

(ii) छात्रों के लिए पहल करके ,निर्णय और परिणामों की जवाबदेही |

(iii) छात्रों को बौद्धिक रचनात्मक ,भावात्मक ,सामाजिक व शारीरिक रूप संलग्न होना |

(iv) प्राकृतिक परिणामों ,परिस्थितियों एवं असफलताओं से सीखने की संभावना |

तलरूप सिद्धांत के जन्मदाता कुर्टलेविन ने जीवन के वातावरण को अधिगम का आधार माना है | उसने इन आधारों में आकांक्षा स्तर ,उद्देश्य आकर्षण ,स्मृति की गति तथा पुरस्कार एवं दंड को अधिक महत्त्व दिया है |कुर्टलेविन का क्षेत्र सिद्धांत साहचर्य सिद्धांतका ही विस्तार है क्योकि ये सिद्धांत अधिगम प्रक्रिया को उद्दीपक- अनुक्रिया के सम्बन्धों का ही परिणाम मानते है | क्षेत्र सिद्धांत के मनोवैज्ञानिको के अनुसार उत्तेजक या उद्दीपन को अनुक्रिया टक पहुँचने से पूर्व मध्यवर्ती क्षेत्र की क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं में से होकर गुजरना पड़ता है तथा जो सम्बन्ध स्थापित होता है वह मुख्य रूप से इन्हीं मध्यवर्ती क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं के प्रभाव का ही परिणाम होता है | जिस प्रकार पूर्व में हमने उद्दीपन-अनुक्रिया सिद्धांत को टेलीफोन व्यवस्था के माध्यम से स्पष्ट करने का प्रयास किया था जिसमे मध्यवर्ती मशीन का कार्य मात्र यांत्रिक सम्बन्ध स्थापित करने का होता है उसी प्रकार क्षेत्र सिद्धांत को ट्रांजिस्टर रेडियो व्यवस्था के उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है | इस व्यवस्था से ध्वनि की तरंगे यंत्र के एक विशिष्ट भाग से टकराती है और ध्वनि हमारे कानों तक लाउडस्पीकर के माध्यम से पहुंचती है | ऐसे रेडियो में यद्यपि विद्युतीय सम्बन्ध व्यवस्था होती है किन्तु इसके महत्त्वपूर्ण अंग ट्रांजिस्टर ही होते है जिनसे गुजर कर उर्जा पुनर्गठित होकर भिन्न रूप धारण कर लेती है | इस प्रकार ये यंत्र ध्वनि के संचरण में सक्रिय भूमिका निभाते है | इस प्रकार क्षेत्र अधिगम सिद्धांत उद्दीपन एवं अनुक्रिया के बीच में होने वाली प्रक्रियाओं की संकल्पना पर आधारित है | इसके अनुसार विद्यार्थी को ऐसी सक्रिय उर्जा व्यवस्था माना जाता है जो किसी पर्यावरण में स्थित होती है तथा यह पर्यावरण भी अनेक दूसरी सक्रिय उर्जा व्यवस्थाओं का संगम होता है | अत: पाठ्यक्रम नियोजकों एवं शिक्षकों को S-R सम्बन्ध स्थापित करते समय उनकी मध्यवर्ती क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं के प्रति सजग रहने की आवश्यकता होती है |

क्षेत्रीय अनुभवात्मक अधिगम का प्रत्यय मनोवैज्ञानिक **डेविड कोल्ब** द्वारा दिया गया है | उन्होंने क्षेत्रीय अनुभव को ऐसी प्रक्रिया माना है जिसमें ज्ञान का निर्माण अनुभवों के परिवर्तन के संयोजन से होता है | क्षेत्रीय अनुभवात्मक अधिगम मॉडल में कोल्ब ने अनुभव ग्रहण करने के दो तरीके बताये है – ठोस अनुभव व अमूर्त अवधारणाऐ | उन्होंने अनुभवों में परिवर्तन के भी दो तरीके बताये है – चिन्तनशील अवलोकन और सक्रिय प्रयोग | ठोस अनुभव चिन्तनशील अवलोकनों के आधार पर सूचनाओं को आत्मसात करता है तथा अमूर्त अवधारणाओं को बनाता है | व्यक्ति इन अवधारणाओं का प्रयोग दुनिया के बारे में सिद्धांत बनाने के लिए करते है फिर उनका सक्रिय रूप से परीक्षण करते है | अपने विचारों के परीक्षण से व्यक्ति फिर कुछ सूचनाओं को ग्रहण करता है जो इस चक्र दुबारा शुरू कर देता है | कोल्ब के अनुसार जो व्यक्ति निरिक्षण करता है वह सक्रिय चिन्तनशील होकर सीखने के तरीकों पूर्व अनुभवों के साथ जोड़कर सीखता है | कोल्ब के अनुसार ज्ञान की रचना हेतु क्षेत्रीय अनुभवात्मक अधिगम के निम्न प्रयोग है –

(i) अधिगम प्रक्रिया में अधिगम को पूर्व में नियोजित किया जाना चाहिए तथा क्षेत्रीय अनुभवों से संबंधित विषयों की मूल सामग्री जो छात्रों कोपता होनी चाहिए |

(ii) छात्रों को यथार्थ अनुभवों में संलग्न किया जाना चाहिए ताकि वह विषय के बारे में गहनता से जन सके |

(iii) छात्रों को अपने अनुभवों पर आधारित विषयों पर चर्चा करने का अवसर दिया जाना चाहिए |

(iv) छात्रों द्वारा अवधारणाओं के निर्माण को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए तथा सामूहिक चर्चा व व्यक्तिगत चिंतन की प्रक्रिया का प्रयोग किया जाये |

(v) छात्रों को स्वतंत्र रूप से मूर्त विषयों से सीखने का अवसर दिया जाना चाहिए |

रचनात्मकवादी सिद्धांत के प्रतिपादक पियाजे ने अधिगमकर्ता की प्रक्रियाओं के बारे में बताते हुए लिखा है कि व्यक्ति अपने अनुभवों द्वारा आत्मसातीकरण करते है तो वह नये अनुभवों को मौजूदा आरेखों में कोई परिवर्तन किये बिना उसे इनकी रुपरेखा में शामिल कर लेते है | व्यक्ति अपने क्षेत्रीय अनुभवों से उसकी दुनिया के बारे में समझ व सोच विकसित कर लेता है | वह अपने क्षेत्रीय अनुभवों से ही हर परिस्थिति में अनेक व्यक्तियों के साथ समायोजित कर लेता है | अधिगम समायोजन एक ऐसी प्रक्रिया है जो एक असफल व्यक्ति को सफलता की आशा की और अग्रसर करती है | रचनात्मकतावाद को प्राय: शिक्षाशास्त्रीय उपागमों से जोड़ा जाता है जिनमे क्रियाशील अधिगम या कार्य करके अधिगम को प्रोत्साहित किया जाता है | व्यक्ति अपने जीवन व विकास के अनुभवों द्वारा दुनिया के बारे में अपनी समझ की रचना करते है | व्यक्ति अपने पूर्व ज्ञान अनुभव तथा वर्तमान ज्ञान व अनुभवों से कुछ नया सीखता रहता है |

अधिगम से सम्बन्धित सामाजिक रचनात्मकतावाद का सिद्धांत रुसी मनोवैज्ञानिक लेव वाईगोत्सकी की देन है | उनके अनुसार व्यक्ति को अधिगम अनुभव प्राप्त करने के लिए सामाजिक अंत:क्रिया की आवश्यकता होती है जो शिक्षण व अधिगम परिस्थितियों में प्रयोग की जाती है | इसमें व्यक्ति अपने क्षेत्र में विचार ,चिन्तन ,प्रत्यक्षण, अवबोध ,अंत:क्रिया से ज्ञान प्राप्त करते है और इस ज्ञान को दूसरे व्यक्तियों के साथ हस्तांतरित करते है | रचनात्मकतावादी शिक्षण इस विचार पर आधारित होता है कि अधिगम तभी होता है जब अधिगमकर्ता आलोचनात्मक चिंतन ,प्रेरणा ,प्रतिपुष्टि ,विचार विमर्श ,भाषा ,व्याख्या ,प्रश्नोत्तर ,समस्या समाधान आदि से ज्ञान व अनुभव प्राप्त करता है | अधिगम प्रक्रिया

की प्रकृति एवं अधिगमकर्ता के अनुभवों के परिणामस्वरूप मौजूदा ज्ञान संरचना में परिवर्तन शामिल है | अधिगम अनुभवों का विकास शिक्षक ,अधिगमकर्ता ,कार्य तथा क्षेत्रीय अनुभवों का विकास शिक्षण अधिगम प्रक्रिया पर ही निर्भर करता है |

बोध प्रश्न –

1. क्षेत्रीय अनुभव अधिगम से आप क्या समझते है ?
2. क्षेत्रीय अनुभव अधिगम के कितने सिद्धांत है ?
3. क्षेत्रीय अनुभव अधिगम के तलरूप सिद्धांत का विस्तृत वर्णन कीजिये |

4.8 सामुदायिक कार्य (Community Work)

समुदाय से तात्पर्य लोगों के विशेष समूह से है जिसमें व्यक्ति समूह में रहकर अपने कार्यों को सम्पन्न करता है | समुदाय में किसी जाति विशेष का प्रभाव पड़ता है क्योंकि समाज विभिन्न जातियों के छोटे-छोटे समूह को ही समुदाय कहते है | समुदाय द्वारा किये जाने वाले कार्यों को ही सामुदायिक कार्यों के नाम से जाना जाता है | विभिन्न विद्वानों ने सामुदायिक कार्य को परिभाषित किया है –

जिन्सबर्ग के अनुसार –" समुदाय को एक निश्चित भू-भाग पर रहने वाली उस जनसंख्या के रूप में वर्णित किया जा सकता है जो उनके जीवन को नियंत्रित करने वाले नियमों की सामान्य व्यवस्था में बंधी हुई होती है | ऐसे समुदाय द्वारा किये गये कार्यों को ही सामुदायिक कार्य कहा जाता है |"

डेविस के अनुसार- " समुदाय सबसे छोटा ऐसा क्षेत्रीय समूह होता है जिसके अंतर्गत सामाजिक जीवन के समस्त पहलू आ जाते है |"

समाज में रहकर सामुदायिक कार्य करने वाले व्यक्तियों में हम की भावना विकसित होती है क्योंकि समूह में एक सी भाषा बोलने के कारण ,एक सी सुरक्षा एवं हित की भावना के फलस्वरूप समान नीतियों व आदर्शों के कारण हम की भावना पाई जाती है | विद्यालयों द्वारा बालकों के माध्यम से सामुदायिक कार्यो के अंतर्गत सफाई व स्वच्छता अभियान ,साक्षरता का प्रसार अभियान ,स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता ,सामाजिक कुरीतियों एवं अन्धविश्वासों को दूर करने के लिए सामाजिक रैलिया ,रक्तदान शिविर ,निशुल्क जाँच शिविर ,सामुदायिक वाचनालय एवं पुस्कालय की स्थापना करना ,एन एस एस ,एन सी सी और स्काउट आदि कार्यों को करवाया जाता है | भारत सरकार के मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा भी अनेक प्रकार के सामुदायिक शिविरों ,सेमिनारों ,परिचर्चा सम्मेलन ,सामाजिक कार्यशाला ,सर्व शिक्षा अभियान ,माध्यमिक शिक्षा अभियान ,अखिल भारतीय उच्चतर शिक्षा अभियान ,एनजीओं के माध्यम से समय-समय पर विद्यालयों ,महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में सामुदायिक कार्यो का आयोजन करवाया जाता है जिससे छात्रों में सामुदायिक एवं सामाजिक भावना का विकास होता है |

4.9 सामाजिक सहभागिता (Social Engagement)

सामाजिक सहभागिता से तात्पर्य है किसी सामाजिक समूह में भाग लेना ,सहयोग करना ,कार्यक्रमों का आयोजन करवाना आदि क्रियाओं में छात्रो द्वारा भाग लेने से है क्योंकि छात्र या व्यक्ति सामाजिक समूह में रहकर अन्य प्राणियों के साथ मिलकर सामाजिक अंत:क्रिया करता है जिससे छात्रों व व्यक्तियों में सामाजिक सहभागिता की भावना का विकास होता है | सामाजिक सहभागिता को विभिन्न विद्वानों ने निम्न प्रकार से परिभाषित किया है –

लेंडिस के अनुसार –" जहाँ दो या दो से अधिक व्यक्ति सामाजिक संबंध स्थापित करते है एवं एक दुसरे का सहयोग करने के लिए सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेते है उन्हें सामाजिक सहभागिता कहते है |"

बोगार्ड्स के अनुसार – "व्यक्ति एक सामाजिक समूह में दो या दो से अधिक सदस्यों के परस्पर सामाजिक संबंधों तथा सामाजिक क्रिया-प्रतिक्रिया ,जागरूकता के साथ ही कुछ प्रेरणात्मक कार्य करते है तो उससे उन व्यक्तियों में सामाजिक सहभागिता का विकास होता है |"

सामाजिक सहभागिता के अंतर्गत बालकों में स्वच्छता एवं सफाई के प्रति उचित अभिवृति विकसित करनी होती है | शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के लिए कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्र की विषयवस्तु का चयन करने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए जिससे उन बालकों में आपसी सहयोग ,समाज सेवा एवं सामाजिक सहभागिता के गुणों का विकास होगा | सामाजिक सहभागिता से बालकों में नैतिकता,राष्ट्रीय एकता ,सहिष्णुता ,समाज के प्रति समर्पण की भवना आदि गुणों का विकास होता है | **फ्रांसिसी विद्वान अगस्त काम्टे** के अनुसार सामाजिक सहभागिता में जन समूहों ,संस्थाओं ,समितियों ,शैक्षणिक संस्थाओ के द्वारा छात्रों में लोकतान्त्रिक समाजवादी विचारधारा एवं सामाजिक सांस्कृतिक दृष्टिकोण को विकसित करने के लिए विभिन्न प्रकार की सामाजिक सेवाओं एवं उत्सवों का आयोजन करवाया जाना चाहिए जैसे – सामाजिक उत्सव ,दिवस ,सांस्कृतिक कार्यक्रम ,मुक्त पवन सत्र ,शैक्षणिक भ्रमण ,शैक्षणिक सेमिनार व परिचर्चा ,सामाजिक संगोष्ठी ,भामाशाह योजना ,स्वावलम्बन कार्यक्रम , विद्यालयों में पोषाहार कार्यक्रम ,पुस्तकों का वितरण ,चित्रकला प्रदर्शनी इत्यादि | कोठारी आयोग के अनुसार सामाजिक सहभागिता में समाजोपयोगी उत्पादक कार्य एवं जीविकापार्जन योग्य स्वरोजगार व्यावसायिक कार्य आदि को प्राथमिकता दी जानी चाहिए |

4.10 सारांश (Summary)

वर्तमान शिक्षा में सभी स्तरों पर प्राय: सैद्धांतिक ज्ञान पर अधिक बल दिया जाता है जिससे बालकों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन नहीं हो पाता है | इसीलिए अब शिक्षा पाठ्यक्रमों में कार्य शिक्षा एवं करके सीखने पर बल देने के लिए क्रिया आधारित विषय वस्तुओं को शामिल किया जा रहा है | पाठ्यक्रम में क्रियात्मकता को प्रधानता दी जानी चाहिए | गांधीजी ने भी बुनयादी शिक्षा में क्रियात्मकता पर ही अधिक बल दिया था | प्रस्तुत इकाई में कार्य एवं पाठ्यक्रम ,शिक्षा में कार्य के प्रकार ,क्षेत्रीय अधिगम अनुभव द्वारा सीखना ,सामुदायिक कार्य और सामाजिक सहभागिता आदि प्रकरणों का विस्तृत विवरण दिया गया है |

4.11 अभ्यास प्रश्न

1. कार्य का अर्थ एवं परिभाषा को स्पष्ट कीजिये |
2. कार्य की शिक्षा में आवश्यकता एवं महत्त्व का उल्लेख कीजिये |
3. पाठ्यक्रम का अर्थ व परिभाषा को बताइए |
4. कार्य व पाठ्यक्रम में संबंध जा वर्णन कीजिये |
5. शिक्षा में कार्य के प्रकारों की विस्तृत विवेचना कीजिये |
6. क्षेत्रीय अनुभवों से अधिगम या सीखना से क्या तात्पर्य है ?
7. सामुदायिक कार्यों से आप क्या समझते है ?
8. सामाजिक सहभागिता की शिक्षा में क्या भूमिका होती है ?

4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- डॉ.यादव सियाराम: पाठ्यक्रम विकास ,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा |
- डॉ. अवधेश किशोर : कला शिक्षण एवं कार्यानुभव ,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा |
- प्रो. रूहेला एस.पी. : शिक्षा के दार्शनिक तथा समाजशास्त्रीय आधार ,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा |
- डॉ. पाण्डेय रामशक्ल :शिक्षा के दार्शनिक तथा समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि ,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा |
- डॉ.माथुर एस.एस. : शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार ,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा |
- डॉ. भारद्वाज डी.सी. : पाठशाला प्रबन्ध ,सामुदायिक संगठन एवं स्वास्थ्य शिक्षा ,अग्रवाल पब्लिकेशनआगरा |
- डॉ.एकरा जेकब : शिक्षा का समाजशास्त्र ,आई सी एस एस आर नई दिल्ली |
- www.google.com –Topology of Work

इकाई 5

सम्प्रेषण एवं कोमल कौशल

Communication and soft skills

इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 सम्प्रेषण का सम्प्रत्यय तथा परिभाषा

5.4 सम्प्रेषण की प्रकृति

5.5 सम्प्रेषण की आवश्यकता

5.6 सम्प्रेषण की प्रकिया

5.7 सम्प्रेषण के सिद्धान्त

5.8 सम्प्रेषण के प्रकार

5.8.1 औपचारिक और अनौपचारिक सम्प्रेषण

5.8.2 शाब्दिक और अशाब्दिक सम्प्रेषण

5.8.3 व्यक्तियों की संख्या के आधार पर सम्प्रेषण

5.8.4 संगठन में प्रवाह की दिशा पर आधारित

5.9 सम्प्रेषण प्रक्रिया में आने वाली बाधाएँ

5.10 सम्प्रेषण प्रक्रिया में आने वाली बाधाओं को दूर करने की विधियां

5.11 सारांश

5.12 अभ्यास प्रश्न

5.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

5.1 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त विद्यार्थी निम्न बिन्दुओं की जानकी प्राप्त कर सकेंगे -

- संप्रेषण का अर्थ समझ सकेंगे।
- संप्रेषण की प्रकृति से परिचित हो सकेंगे।
- संप्रेषण प्रक्रिया की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- संप्रेषण में आने वाली बाधाओं को व्यक्त कर सकेंगे।
- संप्रेषण की आवश्यकताओं को समझ सकेंगे।
- संप्रेषण के सिद्धान्तों के बारे में जानेगें।
- शाब्दिक तथा अशाब्दिक संप्रेषण में अंतर बता सकेंगे।
- संप्रेषण के विभिन्न प्रकारों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

5.2 प्रस्तावना (introduction)

सम्प्रेषण मानव जीवन की अभिन्न आवश्यकता है, क्योंकि मानव एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य द्वारा अपने विचारों, भावों, अभिवृत्तियों आदि को एक दूसरे तक पहुंचाने की आवश्यकता रहती है। यह विनिमय निर्बाधित व अपरिवर्तित रूप से होना चाहिए, अन्यथा दुविधापूर्ण स्थिति उत्पन्न हो सकती है। अत: सूचनाओं को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाना ही सम्प्रेषण नहीं है वरन् उस सूचना की सही समझ उत्पन्न करना सम्प्रेषण है।

किसी संगठन द्वारा अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उसमें विभिन्न स्तरों पर कार्यरत विभिन्न व्यक्तियों के मध्य उचित सम्प्रेषण आवश्यक है। क्योंकि प्रत्येक संगठन एक सामाजिक प्रणाली है जिसमें उन व्यक्तियों की अन्त:क्रिया सम्मिलित है। सम्प्रेषण किसी संगठन के जन्म से लेकर उसके सम्पूर्ण जीवन तक अस्तित्व का आधार है। जब सम्प्रेषण समाप्त होता है तो उस संगठन की क्रियाएं भी समाप्त हो जाती है।

किसी भी संस्था में सम्प्रेषण कई प्रकार से हो सकता है। सभी सम्प्रेषण प्रकारों, तंत्रों तथा माध्यमों के अपने लाभ व दोष है और संपूर्ण सम्प्रेषण प्रक्रिया में कई बाधाएं भी उपस्थित होती है। जो उस सम्प्रेषण के प्रवाह व तीव्रता को बाधित करती है। अत: प्रभावी सम्प्रेषण को समझने के लिए सम्प्रेषण प्रक्रिया, उसके प्रकारों, उनके लाभ एवं दोष, बाधाएं आदि को जानना आवश्यक है।

5.3 सम्प्रेषण का सम्प्रत्यय तथा परिभाषा (Concedpt and Definition of Communication)

सम्प्रेषण शब्द 'प्रेषक' और प्रेषित करना जैसी क्रियाओं को अपने से संजोये हुये है जिसका अर्थ होता है - किसी वस्तु या विचार को एक जगह से दूसरी जगह भेजना। अपने द्वारा भेजे जाने वाले पत्र इत्यादि के लिए प्राय: हम 'प्रेषित करना' जैसी क्रिया को प्रयोग करते है। इस संदर्भ में प्रेषण तथा प्रेषित करना, विचार या सूचना इत्यादि एक तरफा या एक पक्षीय हस्तान्तरण ही होता है क्योंकि इसमें विचार, सूचना या संदेश किसी स्त्रोत से सूचना प्राप्त करने वाले तक पहुंचाने भर की बात है। सम्प्रेषण इसकी तुलना में कुछ अधिक व्यापक संप्रत्यय है, यहां विचार, सूचना या संदेश भेजने का कार्य एक पक्षीय न होकर द्वि या बहुपक्षीय होता है।

सम्प्रेषण में प्रेषण क्रिया स्त्रोत तथा प्राप्तिकर्ता के बीच समान रूप से वितरित होती है तथा दोनों ही इसकी सफलता हेतु समान रूप से उत्तरदायी होते है। इस तरह सम्प्रेषण की प्रक्रिया एक सहयोगात्मक प्रक्रिया है, जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्तियों को अपने विचारों तथा भावों को आदान प्रदान करने का पूरा पूरा अवसर मिलता है। अपने विचारों के आदान प्रदान के लिए हम शाब्दिक तथा अशाब्दिक दोनों प्रकारों के संकेतों का प्रयोग करते है। शाब्दिक संकेतों के विकसित रूप में हम सभी किसी न किसी ऐसी भाषा का प्रयोग करते है जिसे प्राप्तकर्ता द्वारा समझा जा सके। अर्थात् सम्प्रेषण को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें भाषा या अशाब्दिक संकेतों के माध्यम से समाज में रहने वाले दो या दो से अधिक व्यक्तियों की अपनी भावनाओं तथा विचारों का आदान प्रदान करने में उपलब्ध हो सकें।

कोई भी विचार, चाहे वह कितना भी महान क्यों न हो तब तक बेकार है जब तक कि उसे स्थानांतरित करके दूसरों द्वारा समझा न जाए। अर्थात् सम्प्रेषण वह साधन है जिसके द्वारा व्यक्ति एक ही संगठन में एक दूसरे के साथ जुड़े हुए होते है ताकि एक साझा या सामान्य उद्देश्य प्राप्त किया जा सके।

परिभाषाएँ

एंथोनी एफ. ग्राशा के अनुसार, ‘‘ सम्प्रेषण अन्त: प्रक्रिया है जिसमें शाब्दिक संकेतों, जैसे शब्द, वाक्य तथा अशाब्दिक संकेत जैसे शारीरिक आसन, चेहरे के हाव भाव आदि दो या अधिक व्यक्ति समझते है और एक दूसरे के भाव इनका आदान प्रदान करते है।’’

“Communication is an interpersonal process in which verbal symbols, e.g. body postures, facial gestures are shared and understand by two or more people” – Antnony F. Grasha

मैरीहस के अनुसार, ‘‘ सम्प्रेषण चिंतन, विचारों, तथ्यों तथा संवेगों के आपसी आदान-प्रदान की एक प्रक्रिया है।’’

“Communication as a process of mutal exchange of though, ideas, facts and emotions” - Meerihus.

जॉन डीवी के अनुसार, ‘‘ सम्प्रेषण अनुभवों के तब तक आदान प्रदान की एक प्रक्रिया है जब तक यह एक साझा या सामान्य संपत्ति नहीं बन जाती।’’

“Communication is a process of staring experiences till it becomes a common possession.” – John Dewey

एन्डरवन के अनुसार, ‘‘ सम्प्रेषण एक गत्यात्मक प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति चेतनतया अथवा अचेतन तथा, दूसरों के संज्ञानात्मक ढांचे को सांकेतिक रूप में उपकरणों या साधनों द्वारा प्रभावित करता है।’’

लूगीस एवं वीगल के अनुसार, ” सम्प्रेषण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत सूचनाओं, निर्देशों तथा निर्णयों द्वारा लोगों के विचारों, मतों तथा अभिवृत्तियों में परिवर्तन लाया जाता है।’’

अत: निष्कर्ष रूप में, उपरोक्त परिभाषाओं के विश्लेषण के पश्चात् हम कह सकते है कि सम्प्रेषण एक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में दो या अधिक व्यक्ति अन्त: क्रिया करते है। इस प्रकार अन्त: क्रिया में दो या अधिक व्यक्तियों के मध्य सूचनाओं, विचारों, भावनाओं और ज्ञान का आदान - प्रदान है।

5.4 सम्प्रेषण की प्रकृति (Nature for Communication)

सभी परिभाषाओं के आधार पर सम्प्रेषण की प्रकृति को निम्नलिखित बिन्दुओं के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

1- सम्प्रेषण एक पारस्परिक संबंधस्थापित करने की प्रक्रिया है।
2- इसमें विचार विमर्श तथा विचार विनिमय पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
3- यह द्विवाही प्रक्रिया है अर्थात् इसमें दो पक्ष होते है एक संदेश देने वाला तथा दूसरा संदेश ग्रहण करने वाला।
4- सम्प्रेषण एक उद्देश्य युक्त प्रक्रिया है।

5- सम्प्रेषण में मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक पक्ष (जैसे विचार, संवेदनाऐं, तथा संदेश समावेशित होते है।)

6- प्रभावशाली सम्प्रेषण, उत्तम शिक्षण के लिए बुनियाद है।

7- सम्प्रेषण प्रक्रिया में प्रत्यक्षीकरण समावेशित होता है। यदि संदेश प्राप्त करने वाला व्यक्ति, संदेश का संदर्भ सही ढंग से प्रत्यक्षीकृत नहीं कर पाता तो सम्प्रेषण संभव नहीं है।

8- सम्प्रेषण तथा सूचनाओं में अंतर है। सूचनाओं में तर्क, औपचारिकता होती है। लेकिन जब पुस्तक पढ़ी न जाये या टी.वी. खोला न जाये। जब तक सम्प्रेषण संभव नहीं। सूचनाऐं वस्तुनिष्ठ होती है जबकि सम्प्रेषण में व्यक्ति या व्यक्तियों के व्यक्तिगत प्रत्यक्षीकरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

9- सम्प्रेषण में सामान्यत: व्यक्ति उन्हीं चीजों या विचारों का प्रत्यक्षीकरण करते हैं, जिनकी उन्हें अपनी व्यक्ति गत आवश्यकताओं, मूल्यों, प्रेरकों परिस्थितियों या पृष्ठभूमि के अनुसार आकांक्षा होती है।

10-सम्प्रेषण, मानवीय तथा सामाजिक वातावरण को बनाये रखने का कार्य करता है।

11-सम्प्रेषण के चार मुख्य कार्य है।

अ) सूचना प्रदान करना

ब) निर्देश अथवा आदेश या संदेश प्रेषित करना।

स) परस्पर विश्वास जाग्रत करना।

द) समन्वय स्थापित करना

12-सम्प्रेषण की प्रक्रिया में परस्पर अन्त: क्रिया तथा पृष्ठपोषण होना आवश्यक है।

13-सम्प्रेषण में विचारो या सूचनाओं को मौखिक, लिखित अथवा सांकेतिक रूप से प्रेषित किया जाता है या ग्रहण किया जाता है।

14-सम्प्रेषण सदैव गत्यात्मक (Dynamic) प्रक्रिया होती है।

अर्थात् सम्प्रेषण की परिभाषाओं तथा प्रकृति के आधार पर कहा जा सकता है - '' सम्प्रेषण एक गत्यात्मक, उद्देश्यपूर्ण, द्विध्रुवीय प्रक्रिया है। जिसमें सम्प्रेषण सामग्री, सम्प्रेषण करने वाला तथा सम्प्रेषण ग्रहण करने वाला होता है। इसमें सूचनाओं तथा विचारों का सम्प्रेषण एवं ग्रहण लिखित, मौखिक तथा संकेतों के माध्यम से होता है।''

5.5 सम्प्रेषण की आवश्यकता (Need for Communication)

किसी भी संस्था में व्यक्तियों व समूहों के मध्य सम्प्रेषण महत्वपूर्ण तथ्य होता है -

1 **मानव संबंध (Human Relations)** – मानव संबंधों में आपसी समझ सम्प्रेषण से ही संभव है। राबर्ट टी. बर्थ के अनुसार मानवीय संबंध संस्था की आत्मा है, जिसके बिना संगठनात्मक तथ्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती।

2 **समन्वय (Co-ordination)** – इसका मुख्य उद्देश्य किसी संस्था के विभिन्न भागों में समन्वित क्रियाऐं लाना है।

3 **सूचनाओं को देना (Information sharing)** – संस्था में शिक्षकों को दिशा - निर्देश देने और उद्देश्य पूर्णता की भावना लाने में सम्प्रेषण आवश्यक होता है।

4 **पृष्ठ पोषण देना (Provide feedback)** – संस्था में सकाय को अपने कार्य तथा कार्य के परिणाम बताने में सम्प्रेषण महत्वपूर्ण होता है।

5 **निर्णय लेने में (Decision making)** – समस्या को परिभाषित करने में, विकल्प ढूंढने और मूल्यांकित करने में, निर्णय के क्रियान्वयन, नियंत्रण और परिणामों के मूल्यांकन में सूचना का आदान प्रदान आवश्यक है।

6 **अभिव्यक्ति (Experession)** – भावनाओं और अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने में सम्प्रेषण आवश्यक होता है।

7 **प्रभावी नेतृत्व (Effective Leadership)** - सम्प्रेषण प्रभावी नेतृत्व का आधार होता है।

8 **संस्था के कुशल संचालन (Efficient operation of an Institute)** – प्रभावी सम्प्रेषण व्यवस्था पर संस्था कुशल संचालन निर्भर करता है।

9 **निष्ठा एवं कार्य प्रेरणा (Induce Action and Dedicationg)** –अर्नेस्ट डेल और माइकल ने कहा कि ''सम्प्रेषण कर्मचारी मनोबल और निष्ठा, सहयोग तथा समझ बढ़ाता है तथा उनके प्रयासों को सामान्य लक्ष्यों की ओर मोड़ता है।''

10 **व्यावसायिक संतुष्टि (Job satisfaction)** – प्रबंधन द्वारा पहचान और स्वीकृत अधीनस्थों में व्यावसायिक संतुष्टि उत्पन्न करती है। इसके लिए संस्थान में खुलापन तथा खुली अभिव्यक्ति आवश्य है।

11 **उत्पादन में वृद्धि (Increases Productivity)** – अच्छे सम्प्रेषण द्वारा कम समय व कम खर्च में अधिक उत्पादन संभव है। सम्प्रेषण द्वारा सस्था प्रधान अपने संकाय को संस्था की कार्यप्रणाली, लक्ष्यों, शिक्षा के नवीन आयामों से सूचित रख सकता है।

5.6 सम्प्रेषण की प्रकिया (Process of Communication)

सम्प्रेषण एक सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें दो या अधिक व्यक्ति सूचना तथा अर्थ का विनिमय करते हैं। यह द्विमार्गी प्रक्रिया है जो क्षणिक न होकर अपना समय लेती है। किसी भी प्रकार के सम्प्रेषण में निम्नलिखित मुख्य पद होते हैं -

1. **संवाद या विचार का विकास** - सम्प्रेषण प्रेषक (Sender) के मस्तिष्क से प्रारम्भ होता है। प्रेषक के पास एक विचार होता है जिसे वह ग्राहक (receiver) तक भेजना चाहता है। प्रेषक किसी व्यक्ति के स्थान पर समूह या संस्था भी हो सकती है तथा ये सभी स्रोत (Sources) कहलाते है। अत: स्रोत कोई व्यक्ति समूह अथवा संस्था है जो अन्य पार्टी को कुछ सम्प्रेषित करने में रूचि रखता है।
2. **संकेतन** - यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रेषक अपने विचार या भाव को संकेतों की सहायता से संदेश के रूप में तैयार करता है। आवश्यक तथ्य एकत्रित करने के पश्चात् उनका मूल्यांकन कर उचित संदेश तैयार किया जाता है। संदेश में प्रयुक्त शब्द, चित्र संख्या, हाव-भाव, गतिविधि अथवा ध्वनि के रूप में तथा आदेश, निर्देश, सुझाव, शिकायत आदि के रूप में हो सकते हैं।
3. **प्रेषक** - यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा संदेश ग्राही तक प्रेषित होता है। इस हेतु लिखित, मौखिक, सांकेतिक तथा दृश्य-श्रव्य माध्यमों को अपनाया जा सकता है। केवल हंसकर, सर हिलाकर आदि अशाब्दिक तरीकों से भी यह प्रेषण संभव है।
4. **विसंकेतन** - इसके द्वारा ग्राही स्रोत सम्प्रेषित संदेश का अर्थ निकालकर ग्रहण करता है। वह संदेश का अर्थ उसी रूप में समझ लेता है जिस रूप में प्रेषक ने संदेश भेजा है।

5. **प्राप्तकर्ता अथवा ग्राही** - एक बार प्रेषित होने के बाद संदेश ग्राही द्वारा प्राप्त किया जाता है। ग्राही वह समूह अथवा व्यक्ति संस्था है जिसके पास प्रेषित संदेश पहुंचता है। इसके अभाव में सम्प्रेषण प्रक्रिया अपूर्ण है।

6. **पृष्ठ पोषण** - यह ग्राही द्वारा प्रेषक को संदेश के फलस्वरूप भेजा गया प्रत्युत्तर या प्रतिक्रिया है। पृष्ठ पोषण मौखिक, लिखित या अशाब्दिक हो सकता है। तथा इसके अभाव में प्रेषक संदेश के सही अर्थ में प्रेषक सम्प्रेषण में विरूपण (distoration) को सुधार सकता है।

7. **शोर या बाधा** - जो कुछ भी सम्प्रेषण प्रक्रिया को बाधित कर देता है, जिसमें संदेश विरूपित या विमंदित हो जाता है शोर या बाधा कहलाता है।
सम्पूर्ण सम्प्रेषण श्रृंखला को शेनोन के सरल [स्त्रोत (Source) -ट्रांसमीटर (Transmitter) – रिसीवर (receiver) –डेस्टीनेशन (destination)] मॉडल द्वारा इस तरह से व्यक्त किया जा सकता है -

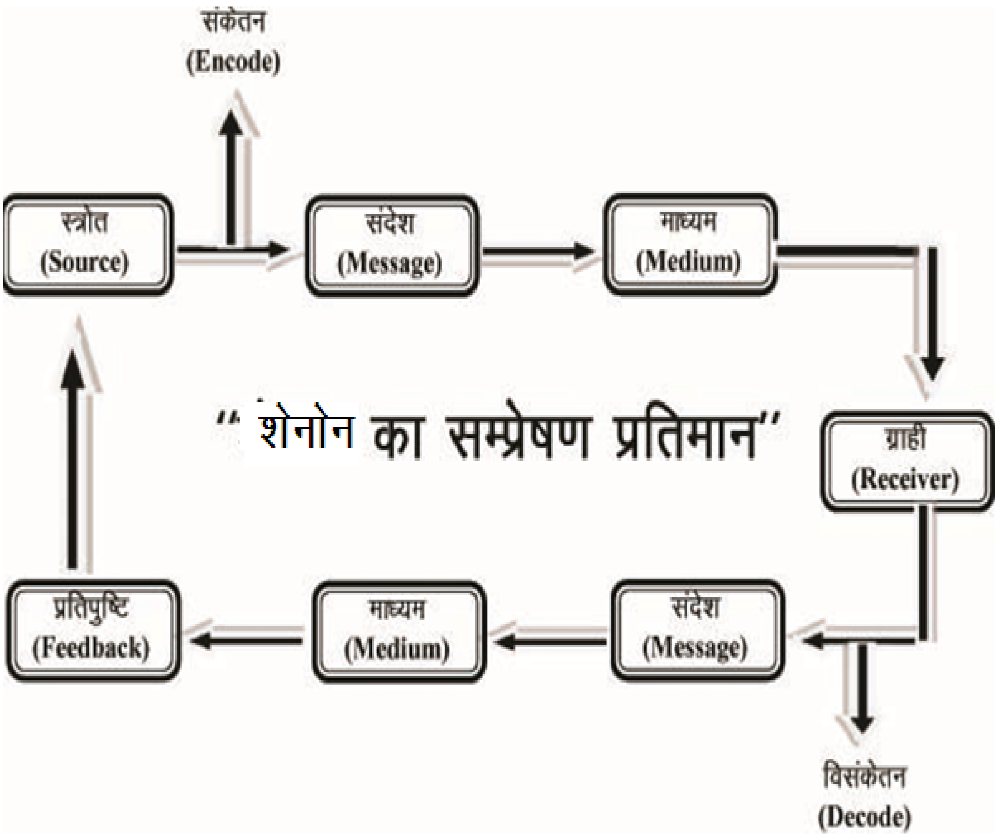

इस प्रकार प्रेषक जो किसी शैक्षिक संस्था में प्राचार्य हो सकता है, के मस्तिष्क में कोई विचार जन्म ले सकता है जिसे वह संदेश के रूप में संकेतन करता है। यह संदेश वह विभिन्न माध्यमों से जैसे - लिखित, मौखिक, हाव-भाव या अन्य दृश्य, श्रृव्य माध्यमों से प्रेषित कर सकता है। दूसरे सिरे पर ग्राही के रूप में शिक्षक यदि है तो वह इस संदेश को समझने के लिए उसे अपने मस्तिष्क में विसंकेतिक करता है, परन्तु यह संदेश कई कारणों से विमंदित या विरूपित हो जाता है। ग्राही को चाही गई प्रतिक्रिया देनी होती है, जो संदेश के रूप में उसने समझी है। प्रभावी सम्प्रेषण सीधे ही विशेष व्यक्ति या समूह के सारोकार से होता है।

5.7 सम्प्रेषण के सिद्धान्त (Princple of Communications)

संप्रेषण कौशल को सुधारने के लिए निम्नलिखित सिद्धान्तों का अनुसरण करना चाहिए -

1- **विभिन्न और उपयुक्त चैनलों के प्रयोग का सिद्धान्त (Princple of using multiple and application channels)-** संप्रेषण की स्पष्टता से विभिन्न चेनलों के प्रयोग से सुधार लाया जा सकता है अर्थात् प्रेषक और प्राप्तकर्ता के बीच सम्प्रेषण से कुशल और प्रभावशाली प्रवाह के लिए शाब्दिक या अशाब्दिक या दोनों साधन एवं माध्यम के प्रयोग को महत्व दिया जाना चाहिए। विभिन्न चैनलों का प्रयोग करते हुए संदेश की पुनरावत्ति या उसे दोहराना पुनर्बलन का कार्य करता है तथा विचलन की आशंका को भी कम करता है। लोगों में सूचनाएँ अर्जित करने की योग्यताएँ भी भिन्न भिन्न होती है। कुछ लोग जब संदेश लिखा हुआ होता है तब समझते हैं। अन्य व्यक्ति मौखिक संप्रेषण को पसंद करते है।

2 **भाषा पर आधिपत्य या प्रभुत्व का सिद्धान्त (Principle of Mastery on Language)-** सम्प्रेषण की प्रभावशीलता भाषा के अधिकार पर निर्भर करती है। प्रेषक को आसान तथा सही भाषा का प्रयोग करना चाहिए ताकि प्राप्तकर्ता इसे समझ सके। कठिन भाषा प्रेषक और प्राप्तकर्ता के बीच अवरोध उत्पन्न करती है। कक्षा में कई बार विद्यमान अध्यापक भी भाषा समस्या के कारण बुरे सिद्ध होते हैं। यदि अध्यापक अंग्रेजी बोलता है ओर विद्यार्थी उसे समझने में जिसे वह बोलता है, असफल रहते हैं, तब ऐसी स्थिति में कोई सम्प्रेषण नहीं होगा। अत: भाषा पर अधिकार का होना दोनों सिरों पर होना चाहिए।

3 **अभिप्रेरणा (Motivation)-** संदेश का साधन या प्रेषक अधिक से अधिक रूचि रखने वाला होना चाहिए। इस उद्देश्य के लिए प्रेषक को संप्रेषित किए जाने वाली विषयवस्तु आवश्यक है।

4 **संप्रत्ययों की स्पष्टता (Clarity of concepts)-** प्रभावशाली संप्रेषण के लिए संप्रत्ययों की स्पष्टता आवश्यक होती है जो किसी संदेश में निहित या शामिल होते हैं। विषयवस्तु के संप्रत्यय प्रेषक और प्राप्तकर्ता को बिलकुल स्पष्ट होने चाहिए। कक्षा कक्ष परिस्थिति अध्यापक प्रेषक है तथा विद्यार्थी प्राप्तकर्ता है। विषयवस्तु के संप्रत्यय अध्यापक को बिलकुल स्पष्ट होने चाहिए ताकि उन्हें विद्यार्थियों तक प्रभावशीलता के साथ सम्प्रेषित किया जा सके। सम्प्रत्ययों की स्पष्टता के लिए ज्ञान और बोध महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। जब प्रेषक स्पष्टता में असफल हो जाता हैं, सम्प्रेषण प्रक्रिया भी अपने उद्देश्य में असफल हो जाती है।

5 **केंद्रीकरण का सिद्धान्त (Principle of Focus)-** संप्रेषण प्रक्रिया के दौरान, प्रेषक को मुख्य केन्द्रित बिन्दुओं को मन में रखना चाहिए। संदेश भेजने के दौरान केन्द्रीकरण परिवर्तित नहीं होना चाहिए। यह प्राप्तकर्ता को समझ या बोध में सहायता देगा।

6 **आमने सामने अंतक्रिया (Face to face interaction)** - यह सिद्धान्त निकटता के लिए उत्तरदायी है अर्थात् प्रेषक या साधन और प्राप्तकर्ता आमने-सामने अंतक्रिया का अनुभव ले कक्षा-कक्ष परिस्थति में अध्यापक और विद्यार्थी के बीच दूरी कम से कम हो। प्रेषक और प्राप्तकर्ता के बीच न्यूनतम फासला इन दोनों के बीच संप्रेषण को अधिकतम करता है।

7 **उपयुक्त हावभावों का सिद्धान्त (Principle of Appropriate Gestures)-** सम्प्रेषण प्रक्रिया में उपयुक्त हावभाव भी बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उपयुक्त हावभाव संप्रेषण भाषा को अधिक प्रभावशाली बनाते हैं। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते हैं कि संदेश भेजने वाले

को शाब्दिक और अशाब्दिक भाषा का भी प्रयोग करना चाहिए। ऐसा भी देखा गया है कि कई बार शाब्दिक भाषा की बजाय अशाब्दिक भाषा अधिक प्रभावशाली सिद्ध होती है।

8 **उपयुक्त दृष्टिकोण (Proper Attitute)-** साधन या प्रेषक को उपयुक्त दृष्टिकोण का प्रदर्शन करना चाहिए। उसे संप्रेषण प्रक्रिया द्वारा समस्या समाधान परिस्थिति में शुरूआत करनी चाहिए। इस प्रकार का सहायक दृष्टिकोण संदेश को अधिक प्रभावी ढंग से संप्रेषित करने में सहायता करता है, विशेषकर कक्षा-कक्ष परिस्थिति में। यदि सहायक दृष्टिकोण अनुपस्थित है तो अन्य विभिन्न समस्याएं पैदा हो जाती हैं तथा संपूर्ण प्रक्रिया को नुकसान पहुंचता है।

9 **उपयुक्त प्रतिपुष्टि या पृष्ठपोषण का सिद्धान्त (Principle of Appropriate Feedback)-** प्राप्तकर्ता की ओर से प्रेषक को उपयुक्त प्रतिपुष्टि या पृष्ठपोषण संप्रेषण प्रक्रिया को अधिक प्रभावशाली बनाता है। यह प्रतिपुष्टि या पृष्ठपोषण विपरित दिशा में भी कार्य करता है अर्थात् साधन या स्त्रोत से प्राप्त दिशा की ओर। कक्षा कक्ष परिस्थिति में, यदि अध्यापक को निरंतर सही प्रतिपुष्टि या पृष्ठपोषण मिलता रहता है, वह अपने शिक्षण कार्य को अधिक से अधिक प्रभावी और उद्देश्य केन्द्रित बनाने के सभी अवसरों का लाभ उठाता रहता है। उपयुक्त या सही पृष्ठपोषण प्रेषक को नैतिक दृष्टि से भी ऊँचा उठाता है। पृष्ठपोषण उचित समय पर तथा विशिष्ट व्यवहार के लिए होना चाहिए। यदि यह नकारात्मक हैं तो यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि वह व्यवहार पृष्ठपोषण प्राप्तकर्ता द्वारा नियंत्रण के योग्य है।

10 **सहायक वातावरण का सिद्धान्त (Principle of Conducive Enviromment)** - एक सहायक वातावरण उपयुक्त या सही सम्प्रेषण प्रक्रिया का एक आवश्यक या मूल तत्व है। इसे मध्यवर्ती चर से रहित या स्वतंत्र होना चाहिए, जैसे शोर से परेशानी, अस्पष्टता, अशुद्ध उच्चारण, आदि। संप्रेषण प्रक्रिया को शोर आदि से बचाना चाहिए। मौखिक संप्रेषण प्राप्तकर्ता को सही और स्पष्ट रूप से सुनाई देना चाहिए। इस प्रकार का सहायक वातावरण संप्रेषण की प्रभावशीलता में वृद्धि करता है।

11 **संप्रेषण विषयवस्तु की उपयुक्तता का सिद्धान्त (Principle of the Suitability of communication Contents)** – संप्रेषक (Communicator) को संप्रेषित की जाने वाली विषयवस्तु से भलीभांति परिचित होना चाहिए । दूसरे शब्दों में विषयवस्तु का उपयुक्तता स्तर संप्रेषक द्वारा पूर्व निर्धारित होना चाहिए ताकि उसे प्राप्तकर्ता के पास प्रभावशाली ढगं से संप्रेषित किया जा सके। संप्रेषित किए जाने वाली विषयवस्तु का निश्चित उद्देश्य, तथा प्राप्तकर्ता के लिए उपयोगिता होनी चाहिए।

12 **योग्यता का सिद्धान्त (Principle of Competency)** - दोनों सिरों अर्थात् प्रेषक तथा प्राप्तकर्ता के सिरों पर योग्यता की आवश्यकता है। दूसरे शब्दों में दोनों संप्रेषकों या प्रेषक और प्राप्तकर्ता के पास संप्रेषण कौशल (Communication Skill) का होना आवश्यक है। ये कौशल प्रेषक को संदेश भेजने तथा प्राप्तकर्ता को संदेश बोध एवं सप्रत्ययों को स्पष्टता के साथ प्राप्त करने में सहायता देते हैं। इस प्रकार की योग्यता के अभाव में दोनों सिरे ही संदेश भेजने और प्राप्त करने में हानि उठाते हैं। यदि अध्यापक योग्य नहीं है, तो उसका संदेश सही तरीके से समझा नहीं जायेगा तथा प्राप्तकर्ता बोधगम्यता के साथ संदेश प्राप्त नहीं कर पाएगा। यही बात विद्यार्थियों के लिए भी सत्य है, अर्थात यदि विद्यार्थी संदेश प्राप्त करने में सक्षम या योग्य नहीं है तो समस्त संप्रेषण प्रक्रिया का अप्रभावशाली सिद्ध होती है।

13 **संप्रेषण व्यूह रचना का सिद्धान्त (Principle of Communication Strategy)** - संप्रेषण की प्रक्रिया संप्रेषण व्यूह रचना पर भी निर्भर करती है। कक्षा कक्ष परिस्थिति में यह बिलकुल सत्य है। थोड़े-थोड़े समय के पश्चात तथा जब आवश्यक हो अध्यापक अपनी सम्प्रेषण व्यूह रचना बदलता रहता है। कक्षा कक्ष परिस्थिति में विद्यार्थी की अवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उसकी रूचि और अभिप्रेरणा स्तर पैदा करते हुए और उसे बनाए रखते हुए संप्रेषण व्यूह रचना को बदलता है। यही उचित उपागम है।

14 **आपसी समझ का सिद्धान्त (Principle of Mutual Understanding)**- अपनी समझ के सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए प्रभावी और स्पष्ट संप्रेषण प्रोत्साहित होता है। कक्षा कक्ष परिस्थिति में यदि अध्यापक अपने विद्यार्थियों के सामाजिक और बौद्धिक पृष्ठभूमि से परिचित है तो दोनों सिरों से बेहतर संप्रेषण की अपेक्षा की जा सकती है। यह बात इसके विपरित भी सत्य है। अत: हम कह सकते हैं कि आपसी समझ जितनी अधिक होगी, संप्रेषण प्रक्रिया उतनी ही बेहतर होगी।

15 **सक्रिय श्रवण का सिद्धान्त (Principle of Active Listening)**- बहुत से लोग श्रवण कौशल को निश्चित मानते हैं वे सुनते है और श्रवण में भेद नहीं कर पाते। सुनना तो केवल ध्वनि तरंगों का पकड़ना होता है। श्रवण से अभिप्राय है इस ध्वनि तरंगों से, जिन्हें हम सुनते हैं कोई अर्थ निकालना अर्थात् श्रवण करने के लिए ध्यान देना। सक्रिय श्रवण कौशल से निम्नलिखित व्यवहार जुड़े होते है। हम इन व्यवहारों का अपने श्रवण कौशल को सुधारने के लिए प्रयोग कर सकते हैं -

(i) **आंखों का सम्पर्क बनाएं (Make Eye Contact)**- हम अपने कानों से सुन सकते हैं, लेकिन दूसरे लोग हमारी आंखों से देखकर यह जानने का अनुमान लगाने का प्रयास करते हैं कि क्या वास्तव में ही सुन रहे हैं या श्रवण कर रहे हैं।

(ii) **सकारात्मक सिर हिलाना और उपयुक्त मुखाभिव्यक्ति का प्रदर्शन (Exhibit affirmative head nods andppropriate facial expressions)** - ये सभी अशाब्दिक संकेत होते हैं ताकि श्रवण क्रिया प्रभावशाली हो तथा जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी रूचि का प्रदर्शन कर सके।

(iii) **ध्यान भंग करने वाली क्रियाओं या हावभावों को दूर रखें (Avoid Distracting actions or gestures)** - हमें ध्यान भंग करने वाली कार्यों या हावभावों को श्रवण प्रक्रिया के दौरान नजर अंदाज करना चाहिए जैसे अपनी घड़ी को देखना, कागजों को उलट पुल्ट करना, पेन या पेंसिल से खेलना आदि। ये सभी क्रियाएं बोलने वाले व्यक्ति को यह अभास कराती है कि सुनने वाला व्यक्ति बोर हो रहा है या उसे रूचि नहीं है।

(iv) **प्रश्न पूछना (Ask Questions)**- कोई भी आलोचक श्रोता जो कुछ भी वह सुनता है, उसका विश्लेषण करता है तथा प्रश्न पूछता है। यह व्यवहार स्पष्टता प्रदान करता है तथा बोध सुनिश्चित करता है।

(v) **अनुच्छेद बनाना (Paraphrase)** - इससे अभिप्राय है - बोलने वाले ने जो कुछ कहा है उसका अपने शब्दों में दोहराना तुम अपनी समझ की जांच करना चाहते हों।

(vi) **बोलने वाले को टोकना बंद हो (Avoid Interruptiing the speaker)**- बोलने वाले के प्रति अनुक्रिया करने से पहले बोलने वाले का अपना विचार पूरा करने दो। बोलने वाले की बात में हस्तक्षेप या टोकना नहीं चाहिए।

(vii) **अधिक मत बोलें (Don't Overtalk)**- सम्प्रेषण प्रक्रिया के दौरान अधिक बोलने पर अंकुश लगाएं। अधिक बोलने से श्रवण क्रिया की प्रभावशीलता कम हो सकती है।

5.8 सम्प्रेषण के प्रकार (Types of Communication)

संप्रेषण को विभिन्न आधारों पर निम्नलिखित वर्गों में बांटा जा सकता है -

1 औपचारिक और अनौपचारिक संप्रेषण
(Formal and Informal Communication)

2 शाब्दिक और अशाब्दिक संप्रेषण
(Verbal and non-varbal Communication)

3 व्यक्तियों की संख्या के आधार पर संप्रेषण
(Communication on the basis of number of individuals.)

4 किसी संगठन में प्रवाह की दिशा पर आधातिर संप्रेषण
(Communication on the basis of its Direction of Flow in an organisation)

5.8.1 औपचारिक और अनौपचारिक संप्रेषण (Formal and Informal Communication)

a) **औपचारिक संप्रेषण (Formal Communication)**- औपचारिक संप्रेषण का प्रवाह सुव्यवस्थित वातावरण में पूर्व निर्धारित उद्दश्यों को प्राप्त करने के लिए होता है। इस सुव्यवस्थित वातावरण के अपने नियम और कायदे कानून होते हैं। उदाहरणार्थ - कक्षा कक्ष स्थिति के कुछ नियम होते हैं जिनका अनुसरण हर विद्यार्थी और शिक्षक को करना होता है जैसे कि समय सारणी । इस प्रकार के संप्रेषणों में विभिन्न प्रकार की औपचारिकताओं को निभाना पड़ता है।

b) **अनौपचारिक संप्रेषण (Informal Communication)**- अनौपचारिक संप्रेषण नियमों तथा उप नियमों से स्वतंत्र होते हैं। इनमें औपचारिकता न्यूनतम होती है। यह कक्षा के अंदर या कक्षा से बाहर हो सकता है। इस प्रकार का संप्रेषण अनियंत्रित होती है। इस प्रकार का संप्रेषण घटनात्मक होता है। विद्यार्थी और अध्यापक कई बातों पर बहस अनौपचारिक वातावरण में करते हैं।

8.2 शाब्दिक और अशाब्दिक संप्रेषण (Verbal and non-varbal Communication)

a) शाब्दिक या मौखिक संप्रेषण (Verbal Communication)

सूचनाओं का बहुत बड़ा भाग मौखिक या शाब्दिक रूप से संप्रेषित किया जाता है। मौखिक संप्रेषण दो व्यक्तियों में आमने सामने मिलने पर होता है। यह औपचारिक या अनौपचारिक तथा नियोजित या घटनात्मक रूप में हो सकता है।

किसी भी परिस्थिति में शाब्दिक या मौखिक व्यवहार में बोलना शामिल होता है। जैसे प्रश्न पूछना, व्याख्यान देना आदि। कक्षा कक्ष परिस्थिति में, मौखिक या शाब्दिक संप्रेषण शिक्षण और बोलने के द्वारा संप्रेषण चैनल का प्रयोग करता है। कक्षा कक्ष शिक्षण में मौखिक संप्रेषण अधिकतर मौखिक या शाब्दिक अंतक्रिया के रूप में होता है। अध्यापक को कक्षा में मौखिक रूप से बोलना ही पड़ता है तथा विद्यार्थियों को ऐसे मौखिक या शाब्दिक संप्रेषण को सुनना ही पडता है। अध्यापक के लिए विषयवस्तु और अभिव्यक्ति की आवश्यकता होती है तथा विद्यार्थी के लिए पहले उस अभिव्यक्ति को सुनना आवश्यक होता है तथा बाद में विषयवस्तु का नंबर आता है।

मौखिक या शाब्दिक संप्रेषण के लाभ

(Advantages of Oral or Verbal Communication)

(i) इससे तत्काल पृष्ठपोषण के परिणामस्वरूप तीव्र गति से अंत: परिवर्तन संभव है।

(ii) व्यक्ति प्रश्न पूछ सकते हैं तथा बिन्दुओं का स्पष्टीकरण प्राप्त कर सकते हैं।

(iii) आमने-सामने अंतक्रिया में प्रभाव को नोट किया जा सकता है।

(iv) अपने वरिष्ठ से मिलने पर अधीनस्त को महत्व का आभास मिलता है।

(v) औपचारिक या नियोजित बैठकें विषयों या मुद्दों को समझने में महान योगदान करती है।

मौखिक या शाब्दिक संप्रेषण की हानियां

(Disadvantages of Oral or Verbal Communication)

(i) इससे हमेशा समय की बचत नहीं होती।

(ii) मौखिक संप्रेषण में कई बार कोई परिणाम या सहमति प्राप्त नहीं होती।

(iii) समय और धन की दृष्टि से मीटिंग महंगी पड़ती है।

b) अशाब्दिक संप्रेषण (Non-Verbal Communication)

लोग कई तरीकों से संदेशों का आदान प्रदान करते हैं। शरीर की हलचल से, चहरे के हावभाव से तथा प्रेषक और प्राप्तकर्ता के बीच भौतिक दूरी द्वारा जो संप्रेषण होता है उसे अशाब्दिक संप्रेषण कहते हैं। अशाब्दिक संप्रेषण से शाब्दिक संप्रेषण को सहायता की अपेक्षा होती है, लेकिन ऐसा हमेशा ही नहीं होता। यह मौखिक संप्रेषण का विरोध भी कर सकता है। अशाब्दिक संप्रेषण में शारीरिक भाषा शामिल होती है जैसे चेहरे के हावभाव या मुद्राएं शारीरिक हलचज के द्वारा शारीरिक भाषा की अभिव्यक्ति आमने सामने संप्रेषण का एक महत्वपूर्ण अंग है। प्रत्येक शारीरिक हलचल अस्पष्ट हो सकती है, शारीरिक भाषा शाब्दिक संप्रेषण को जटिल ही बनाती है, बल्कि उसकी जटिलता में कुछ वृद्धि ही करती है। एक शारीरिक स्थिति या हलचल का सार्वभौमिक अर्थ या निश्चित अर्थ नहीं होता, लेकिन जब इसे बोलने वाली भाषा से संबंद्ध किया जाता है तब यह प्रेषक के संदेश को पूर्ण अर्थ प्रदान करता है। शारीरिक भाषा भिन्न भिन्न संस्कृतियों में भिन्न भिन्न होती है। ग्लोवे के अनुसार अशाब्दिक संप्रेषण वह व्यवहार है जो शब्दों के बिना ही अर्थ को बता देता है।

(Non-verbal communication is the behavior that conveys meanings with out words.)

यह अशाब्दिक संप्रेषण संकेतात्मक, असंकेतात्मक, स्वाभाविक या प्रबंधित हो सकता है। सामान्य परिस्थतियों में भी शाब्दिक संप्रेषण को प्रभावशीलता और शक्ति प्रदान करने के लिए अशाब्दिक माध्यमों द्वारा होता है जो कि निम्नलिखित हैं -

a) **चेहरे के हावभाव या अभिव्यक्तियां (Facial Expressions)**- चेहरे के हावभाव या अभिव्यक्तियां किन्हीं भी भावनाओं, विचारों तथा नीयत आदि की सूचना देती है। यह ठीक ही कहा गया है कि चेहरा किसी के व्यवहार और संवेगों का वास्तविक संकेत है। चेहरे की अभिव्यक्ति द्वारा किसी की प्रसन्नता तथा दुख आदि का प्रदर्शन हो जाता है। चेहरे की अभिव्यक्ति की भाषा सार्वभौमिक है। उदाहरणार्थ, हैरानी और डर का प्रदर्शन सभी जगह चेहरे पर एक जैसे ढंग से ही होता है। इसी प्रकार अन्य भावों को भी सारे विश्व में एक समान तरीके से प्रदर्शित किया जाता है।

b) **शारीरिक भाषा (Body Language) -** शारीरिक भाषा में विभिन्न प्रकार के आसन तथा शरीर के विभिन्न अंगों की क्रियाएं शामिल हैं। हर व्यक्ति के व्यक्तित्व का आवश्यक भाग हैं - उसकी शारीरिक भाषा। उदाहरणार्थ - हर राजनेता, अभिनेता, धार्मिक नेता, डॉक्टर, अध्यापक आदि की अपने अपने कार्य क्षेत्र में कार्य के दौरान अपनी ही शारीरिक भाषा होती है। हम इस शारीरिक भाषा हमारी प्रसन्नता, चिंताओं, खुशी, भय, क्रोध, ईर्ष्या, उत्सुकता, प्यार, सहानुभूत आदि को विभिन्न क्रियाओं के माध्यम से संप्रेषित करती है। कक्षा कक्ष परिस्थिति में शारीरिक भाषा का प्रयोग एक अध्यापक बहुत ही प्रभावी ढंग से करता है ताकि कक्षा में वह अपने विद्यार्थियों को प्रभावित कर सके। कई बार एक भाषणकर्ता अपने भाषण में शारीरिक भाषा की सहायता से बहुत ही प्रभावशाली हो जाता है।

c) **कोड भाषा (Code Language)** - बहरे और गूंगे व्यक्तियों के संप्रेषण के लिए कोड भाषा का प्रयोग किया जाता है। इनके लिए विशेष कोड भाषा तैयार की गई है जिसमें भिन्न भिन्न हावभाव, आसन तथा शारीरिक गतिविधियां शामिल है। उदाहरणार्थ - दूरदर्शन पर गूंगे-बहरों के लिए समाचार बुलेटिन। कई अवसरों पर शारीरिक भाषा के साथ ध्वनि चिह्नों का प्रयोग भी किया जाता है। छोटे शिशु हावभावों, आसनों, शारीरिक गतिविधियों तथा ध्वनियों के साथ अपनी स्वयं की भाषा का आविष्कार कर लेते हैं।

D) **आंखों की भाषा(Language of the Eyes)** - किसी संदेश में विद्यमान विचारों संवगों आदि को सूचित करने के लिए आंखें भी बहुत महत्वपूर्ण होती है। आंखो की यह भाषा सार्वभौमिक होती है तथा विश्व के सभी समाजों और संस्कृतियों मे यह सामान्य या एक जैसी होती है।

आंखें से आंखे का संपर्क संप्रेषण को बहुत ही प्रभावी बना देता है। कक्षा कक्ष परिस्थिति में भी अध्यापक विद्यार्थियों के साथ आंख की भाषा की सहायता से ही अंतक्रिया करता है। उदाहरणार्थ, अध्यापक की आंखों की गतिविधियां प्रश्न उत्तर सत्र में विद्यार्थियों को प्रोत्साहित या निरूत्साहित कर सकती है। विद्यार्थियों की आंखों की भाषा अध्यापक को उनकी रूचियों, ध्यान केन्द्रिकरण आदि के बारे में पृष्ठपोषण या प्रतिपुष्टि प्रदान करती है। आंखों की भाषा निष्कर्ष निकालने में भी सहायता देती है।

5.8.3 व्यक्तियों की संख्या के आधार पर संप्रेषण (Communication on the basis of number of individuals)

संप्रेषण विभिन्न परिस्थितियों में होता है जिनमे दो या अधिक व्यक्ति एक साथ एक समय पर या अन्य अवसरों पर भाग लेते हैं। भाग लेने वालों की संख्या के आधार पर संप्रेषण को निम्न ढंग से वर्गीकृत किया जा सकता है -

a) **एक और एक के बीच संप्रेषण (One to one Communication)**- ऐसी परिस्थिति में केवल दो ही व्यक्ति होते हैं अर्थात एक प्रेषक और दूसरा प्राप्तकर्ता। जैसे हमारा भाई, पिता या दोस्त के साथ प्रतिदिन का वार्तालाप इसके उदाहरण है।

b) **लघु समूह संप्रेषण (Small Group Communication)**- इस प्रकार का संप्रेषण प्रेषक और लघु समूह के बीच होता है अर्थात् दो से अधिक व्यक्ति जैसे पिता और परिवार में संप्रेषण का होना। अध्यापक और उसकी कक्षा इसके उदाहरण हैं।

c) **पब्लिक संप्रेषण (Public Communication)** - यह स्थिति तब होती है जब कोई औपचारिक परिस्थिति उत्पन्न होती हैं और किसी संदेश को बड़े समूह तक संप्रेषित करना होता है। उदाहरणार्थ, जब किसी सहगामी क्रिया के दौरान या स्कूल में प्रात: कालीन सभा में कोई संदेश पहुंचाना हो तथा किसी राजनैतिक या धार्मिक नेता द्वारा किसी बैठक को संबोधित करना हो।

d) **संस्थागत या संगठनात्मक संप्रेषण (Institutional or Organisation Communication)** - ऐसी परिस्थितयों में संदेश को किसी संगठन या संस्था के चारदीवारी के भीतर ही भेजा जाता है। उदाहरणार्थ - किसी फैक्टरी, सरकारी कार्यालय, स्कूल, कॉलेज आदिमें सूचित किया जाने वाला संदेश।

e) **जनसंचार या जन संप्रेषण (Mass Communication)** - जनसंचार में विभिन्न प्रकार के मैकेनिकल साधन, यंत्र और जनसंचार माध्यम जैसे रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा, पुस्तकें, फिल्में, समाचार पत्र और पत्रिकाएं टेलीक्रांफैसिंग, सेटेलाइट संप्रेषण और संचरण आदि भाग लेते हैं। कुछ अर्थपूर्ण संदेश या सूचनाओं को आम जनता तक पहुंचाने का केवल यह एक तरीका है। कोई भी व्यक्ति जो दुनिया के किसी भी कोने मे रहता है, जनसंचार में भाग ले सकता है। जनसंचार दूरस्थ शिक्षा के संप्रत्यय के विकास में सहायक सिद्ध हुआ है।

5.8.4 किसी संगठन में प्रवाह की दिशा पर आधारित संप्रेषण (Communication on t he basis of its Direction of Flow in an organisation)

किसी भी संगठन में संप्रेषण या संचार किसी भी दिशा में प्रवाहित होता है। जैसे नीचे की ओर, ऊपर की ओर और क्रासवाइज या आड़ी तिरछी की ओर तथा ऊपर की ओर का प्रवाह लंब की दिशा में होता है।

(i) **अधोमुखी संचार या संप्रेषण (Downward Communication)** - संगठनात्मक वर्गीकरण में यह उच्च स्तर पर आसीन व्यक्ति से निम्न स्तर पर आसीन व्यक्ति की ओर प्रवाहित होता है। इस प्रकार का संप्रेषण या संचार सत्तावादी या अधिकारवादी वातावरण में प्रवाहित होता है। अधोमुखी संचार भाषाओं, अनुदेशनों, बैठकों टेलीफोन, लाडस्वीकरों आदि के माध्यम से प्रवाहित होता है। लिखित अधोमुखी संप्रेषणों में पत्रों, मेमोरेडम, इश्तहारों, हैंडबुक, इलेक्ट्रॉनिक समाचार प्रदर्शन आदि शामिल है। अधोमुखी संप्रेषण से

कुछ सूचना गुम या विकृत हो जाती है। अत: प्रेषक के लिए प्रतिपुष्टि प्रणाली चाहिए। संप्रेषण या संचार का अधोमुखी प्रवाह अधिक समय लेता है।

(ii) **ऊपर की ओर संप्रेषण (Upward Communication)** - इसका प्रवाह अधिनस्थों से वरिष्ठों की ओर होता है। मूल रूप से यह आनिर्देशित होता है यह अधिकतर लोकतांत्रिक संगठनात्मक वातावरण में होता है। प्रभावशाली ढंग से नीचे से ऊपर की ओर प्रवाहित होने वाले संचार या संप्रेषण के लिए इस प्रकार का वातावरण चाहिए जिसमें अधीन व्यक्ति संचार या संप्रेषण के लिए स्वतंत्र महसूस करे। इसका उपयोग उच्च स्थानों पर आसीन लोगों को पृष्ठपोषण या प्रतिपुष्टि प्रदान करने के लिए किया जाता है तथा लक्ष्य की ओर हुई प्रगति के बारे में सूचित करने के लिए किया जाता है। ऊपर की ओर प्रवाहित होने वाला संचार या संप्रेषण प्रबंधकों को इस तथ्य से परिचित कराता है कि कर्मचारी अपने कार्य के बारे में, अपने सहकर्मियों के बारे में तथा सामान्य रूप से उस संस्था या संगठन के बारे में कैसा महसूस करते है? उदाहरणार्थ - निम्न प्रबंधन द्वारा माध्यम और उच्च प्रबंधन के विचारार्थ प्रगति प्रतिवेदन या रिपोर्ट तैयार करना।

(iii) **क्रासवाइज संप्रेषण या संचार (Crosswise Communication)** - इस प्रकार का संप्रेषण सूचनाओं का क्षैतिज प्रवाह शामिल करता है, उन लोगों के बीच जो एक सघन संगठनात्मक स्तर पर होते है तथा जिनमें प्रत्यक्ष रिपोर्ट करने का कोई संबंध नहीं होता । इसका प्रयोग सूचना के प्रवाह को तेज करने के लिए किया जाता है, बोध समझ को सुधारने के लिए किया जाता है तथा संगठनात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयासों के समन्वय के लिए किया जाता है। यह संगठनात्मक प्रदान क्रम का हमेशा ही अनुसरण नहीं करता।

5.9 सम्प्रेषण प्रक्रिया में आने वाली बाधाएँ

1. **भाषा में कठिनाई** -कई बार सम्प्रेषण की प्रक्रिया में ऐसी भाषा का प्रयोग होता है, जिसे दूसरे लोग समझ नहीं पाते। भाषा की सीमायें होती है। यह व्यक्ति के ज्ञान, प्रशिक्षण व अनुभव से निश्चित की जा सकती है। प्रशासनिक क्रियाओं की अपनी एक भाषा होती है, जिसे जनसाधारण समझ नहीं पाते। यह आवश्यक है कि ऐसी भाषाएं का प्रयोग किया जाये जिसे सुनने वाला समझ सके।
2. **स्तर एवं स्थिति की बाधा** -संगठन में विभिन्न कर्मचारियों के बीच सामाजिक और प्रशासनिक दृष्टि से अनेक स्तर पाये जाते हैं। इससे एक सूचना को दूसरे तक पहुंचने के लिए मध्य स्तरों में से होकर गुजरना पड़ता है। सूचना प्राप्त करने वाला जो कुछ भी सुनता है उसे अपनी स्थिति अनुभव और पृष्ठभूमि के आधार पर मूल्यांकित करता है। परिणामस्वरूप कई बार ऐसी भी होता है कि इन संदेशों में ऐसे लक्ष्यों की कल्पना ग्राही कर लेता हैं जो संदेशकर्ता ने भी नहीं सोची थी।
3. **मानसिक स्थिति की बाधायें** -कभी कभी कोई व्यक्ति सम्प्रेषण को वास्तविक रूप में प्राप्त न कर अपनी शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक स्थितियों के अनुसार ग्रहण करता है इससे निर्णय की गलत व्यवस्था हो जाती है। यदि व्यक्ति का अच्छा प्रभाव है तो केवल उसकी अच्छी बातें ही याद रखी जायेगी और बुरी बातों पर ध्यान नहीं दिया जायेगा।
4. **भौगोलिक दूरी की कठिनाईयॉं** -सम्प्रेषण के विकसित साधनों के फलस्वरूप प्रशासनिक संगठन की बनावट में परिवर्तन हो गया है। दूर से दूर स्थित क्षेत्रीय अधिकारी से

मुख्य कार्यालय सम्पर्क बनाए रखता है। भौगोलिक दूरी के कारण क्षेत्रीय कार्यालयों को जो सूचनाएं मिलती है वे कभी कभी आवश्यकता से अधिक होती है अथवा कम। लिखित संचार के साधनों में भी अभिव्यक्ति पूर्ण नहीं हो पाती।

5. **संगठन के रूप संबंधी कठिनाइयॉं** -जैसा एक संगठन का रूप होता है, वैसा ही उसके बीच सम्बन्ध भी विकसित होते हैं। संगठन के पद सोपान पर्यवेक्षण, नियंत्रण का क्षेत्र के आधार पर सम्प्रेषण के रूप बदल जाते हैं। किसी संगठन का उच्च अधिकारी अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को संदेश भेज रहा है जो पांच अन्य अधिकारियों के बाद के स्तर पर आते हैं तो ऐसी स्थिति में यदि कोई एक अधिकरी भी गड़बड़ी पैदा कर दे तो संदेश लक्ष्य तक नहीं पहुंच पाएगा।

6. **मनोवैज्ञानिक बाधाऍं**

a सम्प्रेषण अविश्वास - उच्च अधिकारियों द्वारा संदेश को screening और Infiteration करना, तर्कहीन निर्णय लेना, सही न्याय न करना आदि के कारण अधीनस्थ सही तरह से कार्य नहीं कर पाते।

b ध्यान नहीं देना -अधीनस्थों द्वारा अधिकारी द्वारा जारी नोटिस, सर्कुलर, रिपोर्ट या मौखिक सम्प्रेषण पर ध्यान नहीं देना।

c पूर्व मूल्यांकन -कई बार कार्य पूर्ण होने से पूर्व ही मूल्यांकन करने से सूचना का हस्तानान्तरण रूक जाता है।

7. **अन्य बाधाएं**

1 बदलाव का विरोध

2 व्यक्तियों द्वारा वातावरण के अनुसार भिन्न - भिन्न प्रत्यक्षीकरण

3 बन्द दिमाग - यह सोचना कि हम सब कुछ जानते हैं और नये विचार नहीं लेना।

4 डर - अधीनस्थों द्वारा पूर्ण सूचना ऊपर की ओर प्रवाह में डर।

5 सम्प्रेषण क्षमता का अभाव

6 दूरी और समय देर से भेजे संदेश बेकार हो जाते हैं।

7 उच्चस्थ लोगों में धमंड

8 अधीनस्थों पर विश्वास की कमी।

9 समय की कमी।

10 उच्चाधिकारियों की नहीं सुनने वाली प्रवृत्ति

5.10 सम्प्रेषण प्रक्रिया में आने वाली बाधाओं को दूर करने की विधियॉं

1. **बोधगम्य भाषा** - संदेश की भाषा सरल, स्पष्ट और कर्मचारी के बौद्धिक स्तर के अनुरूप होनी चाहिए। द्विअर्थी अथवा तकनीकी शब्दों के स्थान पर सरल शब्दों का प्रयोग किया जाए।

2. **प्रत्यक्ष संचार** - संदेश व्यक्ति को प्रत्यक्ष रूप से दिया जाए, इसके लिए कम से कम माध्यमों का प्रयोग किया जाना चाहिए। व्यक्तिगत सम्पर्क के आधार पर जो संदेश प्रसारित किये जाते हैं, उनके गलत समझे जाने की संभावनाएं बहुत कम रहती है।

3. **अच्छे मानवीय संबंध** - अधिकारी अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के साथ मधुर संबंध बनाये रखें। उनकी मुस्कराहट, शांति और क्रोध का वही अर्थ हो जो वे देना चाहते हैं। व्यंगात्मक संदेश से दूर रहा जाए। निम्न स्तर के कर्मचारी भी गलत सूचनाएं प्रेषित न करें।

4. **प्राप्तकर्ता को समझना** - संदेश भेजने वाले तथा उसे प्राप्त करने वाले के बीच आपसी समझदारी होनी चाहिए। हैमेन के शब्दों में, ''अधीनस्थ एवं उच्च अधिकारी के बीच जितना घनिष्ठ संबंध होता है, उतना ही अधिक उच्च अधिकारी अधीनस्थ की दुनिया के विषय में जान पाता है। साथ ही वह सरलता से समझ लेता हैं कि अधीनस्थ संदेश की व्याख्या किस रूप में करेगा।

5. **अधीनस्थों की राय** - सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के लिए आवश्यक है कि सूचना प्राप्त करने वाले की राय भी ली जाए, जिससे उनमें व्यक्तिगत रूचि पैदा की जा सकें। इसेस अधीनस्थ कर्मचारी अपने आपकों संगठन का एक महत्वपूर्ण भाग समझने लगेगा।

6. **आदर्श प्रस्तुत करना** - उच्च अधिकारी के द्वारा जो कुछ भी संदेश भेजा जाए, उसका तभी अधिक प्रभाव पड़ता है, जब वह स्वयं इसे व्यवहार में लाता है। हैमेन के शब्दों में , ''तथ्य यह है कि शब्दों की अपेक्षा कार्य अधिक जोर से बोलते हैं।''

7. **एकरूपता** - अधिकारी या संदेशकर्ता द्वारा जो भी संदेश भेजा जाए उसमें एकरूपता होनी चाहिए तभी अधीनस्थों या ग्राही का विश्वास उन पर बना रहेगा।

8. **उचित समय** - यदि सम्प्रेषण में उचित समय का ध्यान न रखा गया तो सम्प्रेषण निरर्थक हो जायेगा।

9. **पूर्णता** - सम्प्रेषण में सूचना का पूर्ण होना आवश्यक है, अर्थात् उसमें वे सभी बातें हो जिनसे कि वांछित उत्तर प्राप्त किया जा सकें।

5.11 सारांश

संप्रेषण शिक्षा की रीढ़ की हड्डी है। संप्रेषण के बिना शिक्षा की कल्पना नहीं की जा सकती । संप्रेषण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति परस्पर सामान्य अवबोध के माध्यम से 'आदान-प्रदान' करने का प्रयास करता है। अर्थात संप्रेषण का अर्थ है परस्पर सूचनाओं तथा विचारों का आदान प्रदान करना। संप्रेषणएकऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति अपने ज्ञान, हाव भाव, मुख मुद्रा तथा विचारों का परस्पर आदान प्रदान करते है तथा इस प्रकार से प्राप्त विचारों अथवा संदेशों को समान तथा सही अर्थो मे समझने और प्रेषण करने में उपयोग करते है।

प्रभावशाली शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को गत्यात्मक, सक्रिय तथा जीवन्त बनाने के लिए संप्रेषण की आवश्यकता होती है। संप्रेषण औपचारिक एवं अनौपचाकि दोनों हो सकता है। संदेश प्रेषण लिखित, मौखिक तथा अशाब्दिक रूप में हो सकता है। किसी सूचना का प्रवाह नीचे से ऊपर, ऊपर से नीचे तथा क्षैतिज रूप में हो सकता है।

संप्रेषण एक द्विमार्गी प्रक्रिया है जो क्षणिक न होकर समय लेती है। संवाद, संकेतन, प्रेषण, विसंकेतन, प्राप्तकर्ता , पृष्ठपोषण संप्रेषण प्रक्रिया के लिए विभिन्न पद है। अत: हम कह सकते है कि संप्रेषण मानव जीवन का अभिन्न भाग है क्योंकि मानव एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य द्वारा अपने विचारों, भावों, अभिवृत्तियों आदि के एक दूसरे तक पहुचाने की आवश्यकता रहती है। और वह विनिमय निर्बाधित तथा अपरिवर्तित रूप में होना चाहिए, अन्यथा दुविधापूर्ण स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

अत: सूचनाओं को एक व्यक्ति से दूसरे तक पहुंचाना ही संप्रेषण नहीं है, वरन् उस सूचना की सही समझ उत्पन्न करना संप्रेषण है।

5.12 अभ्यास प्रश्न

1- ' संप्रेषण' से आप क्या समझते है? इसको परिभाषित कीजिए।
2- आप संप्रेषण को कैसे सुधारेंगें? विस्तार से समझाइये।
3- संप्रेषण की आवश्यकता पर प्रकाश डालिये।
4- संप्रेषण प्रक्रिया की व्याख्या कीजिए।
5- संप्रेषण की प्रक्रिया के अवरोधक या बाधक कौन कौन से तत्व है? व्याख्या कीजिए।
6- संप्रेषण के विभन्न प्रकारों के बारे में बताइये।
7- शाब्दिक एवं अशाब्दिक संप्रेषण क्या है?

5.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

- मितल, संतोष, शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा कक्ष प्रबंध, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2008
- कुमार, अनिल तथा भूषण, शैलेन्द्र, शैक्षिक तकनीकी, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1997
- शर्मा, संदीप तथा पारिख, अलका, शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा कक्ष प्रबंध, शिक्षा प्रकाशन, जयपुर, 2008
- ओबेराय, एस.पी., शैक्षिक तकनीक, आर्य बुक डिपो, 2008
- मंगल, एस. के एवं मंगल शुभ्रा, शैक्षिक तकनीकी, आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली, 2008
- कुल श्रेष्ठ, एस.पी. तथा सिंघल, अनुपमा, शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा, 2011
- शर्मा, आर.ए., शिक्षा तकनीकी के आधार, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, 2008

इकाई - 6

श्रवण कौशल

(Listening Skill)

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 भाषा शिक्षण में श्रवण कौशल प्रशिक्षण का स्थान
6.4 श्रवण कौशल प्रशिक्षण के उद्देश्य
6.5 श्रवण कौशल का विकास
6.6 श्रवण कौशल प्रशिक्षण की विधियां
6.7 सारांश
6.8 शब्दावली
6.9 अभ्यास प्रश्न
6.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

सुनना एक कला है | यह बात सुनने में बड़ी अजीब सी लगती है | क्या वाकई सुनना एक कला है ? जिसको प्रयास के द्वारा और बेहतर बनाया जा सकता है | भारतीय ज्ञान परम्परा में भी श्रुति परम्परा का अपना एक विशेष महत्व रहा है | वैसे तो व्यक्ति बहुत सी ज्ञान की बातें एक दूसरे सुन कर जान पाता है और इस तरह का प्राप्त ज्ञान तुलनात्मक दृष्टि से स्थायी भी होता है फिर भी इस बात पर विश्वास करना बड़ा दुस्कर महसूस होता है | हमारे पूर्वजों ने बहुत सी पुरानी विद्याओं एवं हुनर को श्रुति परम्परा के द्वारा ही सुरक्षित रखा तथा उसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को स्थानांतरित किया |

6.2 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- भाषा शिक्षण में श्रवण कौशल प्रशिक्षण के स्थानका महत्व समझ पायेंगे |
- श्रवण कौशल के विकास के सोपानों को समझ पायेंगे|
- श्रवण कौशल प्रशिक्षण के उद्देश्यों को जान पायेंगे |
- श्रवण कौशल प्रशिक्षण की विधियों के बारे में जान पायेंगे |

6.3 भाषा शिक्षण में श्रवण कौशल प्रशिक्षण का स्थान (The Place of training of listening skill in language teaching)

भाषा शिक्षण के कौशलों में श्रवण कौशल अपना प्रमुख स्थान रखता है | श्रवण करना मात्र सुनना ही नहीं है बल्कि ये पठन के सदृश मनन एवं चिंतन करना है |

शिक्षा शब्दकोश में श्रवण का अर्थ (Meaning of listening skill according to edicational encyclopedia)– श्रवण व्यक्त अथवा अव्यक्त व्यवहार प्रतिमानों के चयनशील मौखिक अथवा लिखित संकेतों को प्राप्त करने के सम्बन्ध में अन्य व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के वार्तालाप पर गहन अध्ययन देने की कला है |

विद्वान डिसेंट ने भी कहा है : श्रवण कौशल तब प्रभावी होता है जब छात्र व्यवस्थित तरीके से ध्वनियों एवं भावों को याद करते हैं |

परिभाषा की दृष्टि से सोचा जाय तो किसी भी व्यक्ति के द्वारा प्रयुक्त ध्वनियों, शब्दों एवं भावों को कानों के माध्यम से ग्रहण कर , उसका अर्थ ग्रहण करने की क्रिया श्रवण कही जाती है | वक्ता के वक्तव्य के उद्देश्य को पूरी तरह से ध्यान पूर्वक सुनकर , उसी अभिप्राय को ग्रहण करने की योग्यता ही श्रवण कौशल है |

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि किसी व्यक्ति अथवा ध्वनि यंत्रों द्वारा उत्पन्न सार्थक ध्वनियों को श्रवण इन्द्रियों के माध्यम से अर्थ ग्रहण अथवा समझने की प्रक्रिया श्रवण कहलाती है |

महत्व (Importance) : जन्म से ही अनेकानेक निरर्थक एवं सार्थक ध्वनियाँ बालक कर्ण यंत्रों को तरंगित करती रहती हैं और इन्हीं के अनुकरण से वह बोलना भी सीखता है | यदि सार्थक ध्वनियाँ उसके कान में बार न पड़े तो बालक गूंगा और बहरा हो जाए | विद्यालय में प्रवेश पाने के पूर्व बालक की मौखिक भाषा बहुत कुछ विकसित हो जाती है और यह भाषा सुनकर ही सीखी गयी होती है | बालक के व्यक्तित्व के विकास में श्रवण कौशल की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है |

अनुसरण से भाषा सीखी जाती है | अपने अप्रिवार में भाई बहन , माता पिटा व अन्य सदस्यों को बोलता हुआ देखकर व सुनकर बच्चा उसी तरह बोलने की कोशिश करता है | नये नए शब्दों को सुनकर अपने शब्द ज्ञान में वृद्धि करता है| अपने से बड़ों व अध्यापक आदि को सुनकर स्वयं भी शुद्ध उच्चारण , उचित उतार चढाव , स्वर गति , हाव भाव आदि के अनुसार बोलने की कोशिश करता है और इस तरह मौखिक अभिव्यक्ति में दक्षता प्राप्त करता है | केवल मौखिक कौशल के लिए ही नहीं वरन पठन एवं लेखन कौशल को विकसित करने के लिए भी श्रवण कौशल की आवश्यकता होती है| श्रवण क्रिया के द्वारा ही बच्चा भिन्न भिन्न ध्वनियों , शब्दों इत्यादि को पहचानता है | ये ध्वनियाँ शब्द आदि वाचन मेनन मददगार होती हैं| अध्यापक पुस्तक दिखाते हुए अपने मुख से एक एक वर्ण का उच्चारण करता है और बच्चे को वर्णों से परिचित कराता है | अध्यापक के जरिये किये गए आदर्श वाचन को सुनकर भी बच्चा भी उसी तरह अनुकरण करते हुए स्वयं वाचन करता है |

लेखन कौशल को विकसित करने के लिए भी अध्यापक शब्दों को बोलते हैं और बच्चा सुनकर लिखता है | जिससे वर्तनी आदि का अभ्यास होता है | इसी तरह गति, उचित स्वर एवं विराम के साथ बोलते हुए अध्यापक बचे को समुचित गति से लिखने का अभ्यास कराता है| इस क्रिया को हम श्रुत लेख कहते हैं | जो भी विद्यार्थी ध्यान से नहीं सुनता वो लिखने में पिचड जाता है | आगे चलकर रचना – कार्यई कराने के लिए भी अध्यापक पहले मौखिक रचना कराता है फिर इसे लिखित रूप से देना होता है| इसके लिए भी श्रवण कौशल ज़रूरी है|

श्रवण कौशल के उद्देश्य (Objective of Listening Skill:

श्रवण कौशल के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं|

1. दूसरों के द्वारा जो उच्चारण किया जाता है | उसको सुनकर शुद्ध उच्चारण के लायक अपने आप को बनाना |
2. वक्ता के मनोभवों को समझने की दक्षता विकसित करना |
3. छात्रों को दूसरों की बातों को ध्यानपूर्वक सुनाने के लिए उत्प्रेरित करना |
4. छात्रों में सुनकर स्वराघात , बालाघात तथा उचित उतार- चढाव के साथ बोलने व पढ़ने के क्षमता का विकास करना |
5. श्रुत सामग्री का अर्थ समझने की योग्यता विकसित करना |
6. श्रुत सामग्री के रूचिकर अंशों को पहचानने की योग्यता विकसित करना |
7. श्रुत सामग्री के आकर्षक व रूचिकर अंशों को चयन करने की योग्यता विकसित करना |
8. छात्रों को साहित्यिक गतिविधियों में भाग लेने व सुनाने के लिए प्रेरित करना |
9. श्रुत सामग्री का सारांश ग्रहण करने की योग्यता विकसित करना
10. विद्यार्थी को साहित्यिक गतिविधियों में भाग लेने व सुनाने के लिए प्रेरित करना|
11. भाषा एवं साहित्य के प्रति रुचि पैदा करना |

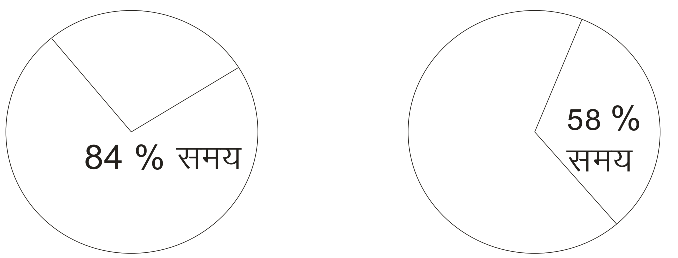

चित्र "अ"

जैसा कि चित्र "अ" में स्पष्टतः वर्णित है कि आरंभिक कक्षाओं में बालक का 84% समय सुनाने में ही व्यतीत होता है | प्रारंभिक कक्षाओं में यह प्रतिशत 58% रह जाता है परन्तु माध्यमिक कक्षाओं में सुनाने का प्रतिशत पुनः बढ़ने लगता है | मनोवैज्ञानिक शोधों से यह पता चला है कि हम पढ़ कर

सीखने की अपेक्षा सुनकर ज़्यादा सीखते हैं | भारतीय परम्परा में भी विद्वान के लिए बहुश्रुत शब्द का प्रयोग किया गया है |

बेहतर तरीके से सुनकर सीखने के लिए निम्न चीज़ें होनी आवश्यक है

1. शुद्ध एवं स्पष्ट उच्चारण
2. उचित स्वराघात एवं अनुपात
3. भावानुरूप स्वर की उच्चता एवं मंदता
4. श्रोताओं की संख्या तथा दूरी के अनुसार वाणी को ऊँचा अथवा मंद करना |
5. बोलने की उचित गति
6. वक्ता का तात्पर्य स्पष्ट करने वाले अर्थान्वितियों की दृष्टि से उचित पद्समूहों को एक साथ बोलना
7. श्रोताओं में सन्देश को ग्रहण करने के लिए आवश्यक अभिप्रेरणा जिसे श्रवण तत्परता भी कह सकते हैं|

अभ्यास प्रश्न

1. श्रुत लेख से आप क्या समझते हैं ?

----

2. बेहतर तरीके से सुनकर सीखने के लिए किन बातों का होना आवश्यक है ?

----

3. श्रवण कौशल के उद्देश्य कौन कौन से हैं ?

6.4 श्रवण कौशल का विकास (Development of listening skill)

भाषा सीखने का प्रथम चरण श्रवण है | इस प्रकार श्रवण कौशल ही अन्य कौशलों को विकसित करने का आधार है | सामन्यतया यह देखा गया है कि जो बच्चा बचपन से सुन नहीं पाता, वह बोलने में भी असफल रहता है एवं भाषा ज्ञान शून्य रहता है | श्रवण कौशल के पश्चात ही उसमें पढ़ने लिखने का कौशल विकसित किया जाता है | वैसे तो छात्र प्रत्येक कक्षा में सुनता रहता है परन्तु अध्यापक के पूर्व नियोजित प्रयास द्वारा उसे और बेहतर श्रोता बनाया जा सकता है |

१. प्रथम साधन है अध्यापक की दृष्टि | कोई भी विद्यार्थी मनोयोग से सुन रहा है या नहीं , वह अच्छे श्रोता के शिष्टाचार का पालन कर रहा है या नहीं | उक्त दोनों स्थितियों को शिक्षक अपनी पैनी दिष्टि से देख सकता है तथा विधार्थी को उचित निर्देश डे सकता है |
२. श्रुत सामग्री का अर्थ ग्रहण छात्र कर रहे हैं या नहीं इसका पता लगाने अथा अर्थ ग्रहण करने की योग्यता का विकास करने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रश्न सहायक होते हैं | केन्द्रीय भाव से संबद्ध प्रश्न , सुनी हुयी विषयवस्तु के बारे में विश्लेषणात्मक प्रश्न , विषयवस्तु में अन्तर्निहित व्यंग, विनोद अथवा अनकहे कथन के बारे में प्रश्न , प्रयुक्त शब्दों तथा मुहावरों के अर्थ संबंधी प्रश्न तथा सारांश सम्ब्नाधी प्रश्न पूछ कर श्रवण कौशल का विकास भी किया जा सकता है | ध्वनि भेद, स्वराघात , बालाघात , अनुतान आदि के बारे में विद्यार्थी का ध्यान आकृष्ट कर के उक्त भाषायी तवों के प्रभावों को हृदयंगम करवाया जा सकता है |

   विशेष रूप से श्रवण कौशल सिखाने के लिए निम्नांकित शैक्षिक क्रियाएँ सहायक हो सकती हैं |

   १. विभिन्न स्वरों तथा व्यंजनों की उच्चारण विधि, उच्चारण का मात्राकल , उच्चारण स्थान आदि का ज्ञान दिया जाए |
   २. विशिष्ट व्यंजन ध्वनियों को शब्द के आदि , मध्य तथा अंत , निरंतर दो बार, घोष – अघोष, अल्पप्राण – महाप्राण ह्स्व – दीर्घ मात्रा आदि की स्थिति में रखकर सुनाने का अभ्यास दिया जावे|
   ३. विभिन्न मनोभावों – हर्ष क्रोध , आशारी , घृणा , करूँ , व्यंग आदि पर आधारित विषय सामग्री कक्षा में यदा कडा सुनायी जाए |

श्रवण दोष (Hearing Impairment) :

जब विद्यार्थी किसी व्यक्ति या धवनी यंत्र द्वारा उच्चारित सार्थक शब्दों अथवा ध्वनियों का श्रवण करके अर्थ ग्रहण करने में असमर्थ रहता है , तो यह श्रवण दोष कहलाता है | यथा- संस्कृति के स्थान पर संस्कृत सुनना तथा वर्णनात्मक के स्थान पर वर्णात्मक सुनना |

श्रवण दोष के कारण (Reason of Hearing Impairment) : श्रवण दोष के निम्न कारण हो सकते हैं

1. **अशांत वातावरण :** वातावरण अशांत होने पर श्रवण दोष आ जाना स्वाभाविक है |विद्यार्थी पास- पड़ोस में होने वाले शोरगुल के कारण कक्षा में कथित बात को बहली-

भांति श्रवण नहीं कर पाटा है, क्योंकि उसका ध्यान शोर की ओर खिंच जाता है | परिणामस्वरूप वह अपना ध्यान पठित विषय वस्तु की ओर कन्द्रित नहीं कर पाता है|

2. **श्रवण इन्द्रियों में विकार :** जब श्रवण इन्द्रियों में विकार हो जाते हैं तो विद्यार्थी को सुनाने में कठिनाई होती है | वे या तो सही सुन नहीं पाते हैं अथवा जो सुनते हैं गलत सुनते हैं| ऐसी स्थिति में शिक्षक के सामने विचित्र समस्या पैदा हो जाती है और छात्र कक्षा में पठित विषय- वस्तु को नहीं समझ पाता है|
3. **ध्यान केंद्रित न होना :** कक्षा में कभी – कभी छात्रों का ध्यान पाठ्यवस्तु की ओर केंद्रित नहीं रहता है| ऐसी दशा में छात्र उस पाठ का उचित रू में श्रवण नहीं कर पाते हैं, जो कक्षा में पढ़ाया जाता है |
4. **पढ़ने में अरुचि:** कुछ छात्र पढ़ने में कम रुचि लेते हैं | कभी – कभी विद्यार्थियों के समक्ष कुछ ऐसी आकस्मिक परिस्थितयां उत्पन्न हो पाती हैं जिससे विद्यार्थियों में पढ़ने के प्रति अरुचि हो जाती है | परिणामस्वरूप ऐसे विद्यार्थी कक्षा में तो आते हैं परन्तु वे किसी पठित विषय वस्तु को श्रवण करने का प्रयास नहीं करते हैं|
5. **पाठ्यवस्तु की कठिनता :** हिन्दी में पाठ्यवस्तु कभी- कभी इतनी क्लिष्ट आ जाती है कि वह छात्रों को समझ में नहीं आती है | इससे विद्यार्थी घबरा जाते हैं , अतः वे पाठों के श्रवण में लापवाही करते हैं|
6. **एक साथ दो काम:** आजकल बहुधा यह देखने में आता है कि उच्च कक्षाओं में व्याख्यान विधि के अनुकरण के फलस्वरूप निम्न कक्षाओं में भी शिक्षक मौखिक कार्य के साथ ही साथ लिखित कार्य करने के लिए विद्यार्थियों के साथ ही साथ लिखित कार्य करने के लिए छात्रों को अनुमति दे देते हैं| इससे बहुत हानि होती है | इस प्रकार छात्र न तो भली भांति प्रकार श्रवण ही करते हैं और न ही लिख पाते हैं|
7. **मौखिक कार्य का अभाव :** हिन्दी शिक्षण में कुछ शिक्षक मौखिक कार्य बहुधा कम करवाते हैं , अतः छात्रों में शीघ्रता से श्रवण का अभ्यास नहीं हो पाता है |
8. **अध्यापकों में रुचि का अभाव** : हिन्दी शिक्षण में कुछ शिक्षक स्वयं ही रूचि नहीं लेते हैं| कक्षा में कुछ अध्यापक आदर्श पठन स्वयं प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत नहीं करते हैं जिससे विद्यार्थियों उचित एवं शुद्ध अनुकरण वाचन में असमर्थ रहते हैं |
9. **कक्षा में कठिर नियंत्रण** : कुछ अध्यापक कक्षा में अनुशासन बनाने के लिए कठोर नियंत्रण रखते हैं , जिससे विद्यार्थी भयभीत होकर चुपचाप बैठे रहते हैं | न तो पाठ को ध्यान से सुनते हैं और न ही समझने की कोशिश करते हैं|

श्रवण दोषों का निराकरण (Solution of hearing impairment) :

श्रवण – दोषों को दूर करने के लिए शिक्षक को निम्नलिखित कार्य करने चाहिए |

1. **शांत वातावरण की व्यवस्था** – विद्यालय में शांतिमय वातावरण की व्यवस्था करनी चाहिए | कक्षा में किसी प्रकार का शोर नहीं होना चाहिए | इससे विद्यार्थियों को पाठ्यवस्तु के श्रवण में सरलता होगी |
2. **श्रवण इन्द्रियों के विकारों का उपचार** – विद्यार्थी के शरवान इन्द्रियों के विकार होने पर अध्यापक को विद्यार्थी के अभिभावक को सूचित छात्र की श्रवण इन्द्रियों के

विकारों की जांच करानी चाहिए तथा समुचित उपचार करवाना चाहिए | उपचार हो जाने परे छात्र बहली – भांति सुन सकेगा और श्रवण में भी समर्थ हो जाएगा |

3. **कक्षा में ध्यान केंद्रित करना:** समुचित रूप से श्रवण के लिए छात्रों का ध्यान पाठ्यवस्तु की ओर केंद्रित करना चाहिए | इसके लिए निम्नलिखित कार्य किये जा सकते हैं-

अ. पूर्व ज्ञान पर आधारित प्रस्तावना प्रश्न पूछना

ब. श्यामपट पर आकर्षक शीर्षक लिखना|

स. पिछले पाठ का संक्षिप्त उल्लेख करना|

4. **रुचि का विकास: किसी विषय** – वस्तु को पढाने से पूर्व शिक्षक को उस विषय वस्तु को जानने के लिए छात्रों में उत्सुकता जागृत कर रुचि उत्पन्न कर देनी चाहिए | इससे वे विषय-वस्तु पर ध्यान केंद्रित रखते हैं तथा श्रवण हेतु प्रयास करते हैं |

5. **कठिन पाठ्यवस्तु को रोचक बनाना :** कठिन पाठ्यवस्तु को रोचक एवं सरल बनाने के लिए विभिन्न प्रविधियों एवं उक्तियों का प्रयोग करना चाहिए | यथा संभव श्रव्य दृश्य साधनों का भी प्रयोग भी किया जा सकता है|

6. **एक समय में एक ही काम :** शिक्षण के दौरान यह आवश्यक है कि एक समय में एक ही काम हो | मौखिक कार्य के अवसर पर लिखित कार्य छात्रों को बिलकुल न करने दिया जाए | विद्यार्थियों को केवल ध्यान पूर्वक श्रवण के लिए कहा जाय |

7. **मौखिक कार्य को प्रोत्साहन :** अध्यापकों को विद्यार्थियों से अधिक से अधिक मौखिक कार्य करवाना चाहिए | क्योंकि मौखिक कार्य से श्रवण इन्द्रियाँ और बेहतर प्रशिक्षित होती हैं|

अभ्यास प्रश्न

1. श्रवण कौशल के विकास पर एक टिप्पणी लिखें |

----

2. श्रवण दोष के विभिन्न कारणों पर प्रकाश डालें |

----

3. श्रवण दोषों का निराकरण कैसे संभव है? स्पष्ट करें ?

6.5 श्रवण कौशल की विधियां (Teaching methods of listening skill)

श्रवण कौशल विकसित करने की प्रमुख विधियां निम्नलिखित है-

1. **श्रुतलेख:** श्रुतलेख लेखन कौशल को विकसित करने का साधन है , परन्तु इसकी सहायता से श्रवण कौशल को भी विकसित किया जा सकता है| श्रुतलेख में विद्यार्थी सुनकर लिखते हैं| जो विद्यार्थी ध्यानपूर्वक सुनेगा वह पूरी सामग्री को लिख लेगा , परन्तु जो छात्र ध्यानपूर्वक नहीं सुनेगा उसके लेख में बीच- बीच में शब्द या वाक्यांश छूट जायेंगे| श्रुत लेख के लिए गद्यांश का चुनाव सोच समझकर करना चाहिए |
2. **सस्वर वाचन:** छात्र अध्यापक के द्वारा किये गए आदर्श वाचन और कक्षा के किसी विद्यार्थी के द्वारा किये जाने वाले अनुकरण वाचन को ध्यानपूर्वक सुनकर शुद्ध उच्चारण , बालाघात गति आदि का ज्ञान प्राप्त करते हैं | विद्यार्थियों से भी सस्वर वाचन कराकर अध्यापक यह पता लगा सकता है कि विद्यार्ठे ध्यान से सुन रहा है या नहीं|
3. **श्रव्य सामग्री का प्रयोग:**

   रेडियो: रेडियो के द्वारा प्रत्येक चैनल पर विद्यार्थियों के लिए ऐसा कार्यक्रम प्रसारित किया जाता है जो ठीक समय के अनुसार होता है और श्रवण कौशल को जारी रखने में इनकी सहायता ली जा सकती है |

   चलचित्र : चलचित्र में आवाज़ सुनायी देने के साथ साथ दृश्य भी दिखाई देता है | ऐसा लगता है कि जो कुछ दिखाई दे रहा है वह सत्य है | बच्चे प्रत्येक दृश्य को बहुत ध्यान से देखते एवं समझते हैं| अतः शैक्षिक चलचित्रों का प्रयोग भाषा शिक्षण को रोचक बना सकता है |

   ग्रामोफोन एवं टेपरिकार्डर : ग्रामोफोन एवं टेपरिकार्डर सामान्य रूप से मनोरंजन के साधन के रूप से मनोरंजन के साधन के रूप में प्रयुक्त होते हैं , परन्तु श्रवण कौशल को विकसित करने के लिए भी ग्रामोफोन एवं टेपरिकार्डर का प्रयोग एक उपयोगी रोचक साधन के रूप में किया जा सकता है | सस्ता होने के कारण विद्यालय में इन्हें आसानी से खरीदा जा सकता है| कहानी

कविता महापुरूषों का भाषण , नाटक आदि सुनाकर बच्चों को साहित्य के प्रति आकर्षित भी किया जा सकता है| शुद्ध उच्चारण की शिक्षा देने के लिए भी इनकी सहायता ली जा सकती है | टेपरिकार्डर के द्वारा किसी भी साहित्यिक कार्यक्रम को रिकार्ड करके जब चाहे छात्रों को सुनवाया जा सकता है , सुनवाने के पश्चात सम्बंधित विषय पर वार्तालाप एवं प्रश्नोत्तर द्वारा विद्यार्थियों के श्रवण कौशल की जांच भी ज़रूर करनी चाहिए|

दूरदर्शन : चलचित्र को तो हम सिनेमा हाल में जाकर ही देख सकते हैं, परन्तु दूरदर्शन तो अब घर-घर में पहुँच चुका है| घर के कमरे में बैठे हुए हम बोलने वाले की आवाज़ तो सुनते ही हैं, साथ ही उसके आकृति भी देखते हैं| श्रवण कौशल को विकसित करने में इसका प्रयोग भी उपयोगी सिद्ध हो सकता है.|

वीडियो : जिस तरह से मनुष्य या किसी भी वस्तु की आवाज़ को टेप करके दूरदर्शन और विभिन्न चैनलों पर दिखाया जाता है| ठीक उसी प्रकार यदि विद्वानों की आवाज़ को इसी ढंग से विद्यार्थियों के पास पहुंचाया जाय तो इससे श्रवण कौशल के साथ साथ मौखिक कौशल को भी बढाने में सहायता मिलेगी |

इस प्रकार उपर्युक्त साधनों एवं विधियों का प्रयोग कर हम छात्रों के श्रवण कौशल को विकसित करने में सफलता प्राप्त कर सकते हैं |

1. **वाद- विवाद**: श्रवण कौशल का प्रशिक्षण देने के लिए भाषण की तरह वाद विवाद भी एक उपयोगी क्रिया सिद्ध होती है| वाद विवाद में भाग लेने वाले छात्रों को हर बात ध्यानपूर्वक सुननी होती है , क्योंकि बिना सुने न तो वे प्रतिद्वंदी वक्ता की बात का उत्तर दे सकेंगे , और न ही अपने तर्क ही प्रस्तुत कर सकेंगे | अध्यापक को कक्षा में समय समय पर उचित विषय वस्तु का चुनाव कर वाद- विवाद का आयोजन करना चाहिए | सभी छात्रों को भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए और वाद विवाद की समाप्ति पर सभी विद्यार्थियों से प्रश्न पूछकर यह जांच करनी चाहिए कि वे वाद विवाद के प्रश्नों को ध्यान से सुन रहे थे या नहीं |
2. **प्रश्न काल:** विद्यार्थियों से अध्यापक को व्यावहारिक बातों एवं पठित सामग्री पर प्रश्न पूछने चाहिए | छात्रों के उत्तर से यह जांच हो जायेगी कि विद्यार्थी सुनकर विषयवस्तु को ग्रहण कर रहे हैं या नहीं | अध्यापक के द्वारा प्रश्न पूछी जाने से विद्यार्थी भी सावधान हो जायेंगे एवं कक्षा में अध्यापक की बात ध्यानपूर्वक सुनेंगे |
3. **भाषण :** मौखिक कौशल को विकसित करने का एक महत्वपूर्ण जरिया भाषण भी है , परन्तु श्रवण कौशल का प्रशिक्षण देने में भी इसे प्रयोग किया जा सकता है | छात्रों को भाषण से पूर्व यह बता दिया जाय कि वो भाषण को ध्यान से सुनें , भाषण की समाप्ति के बाद उनसे प्रश्न पूछे जायेंगे | बाद में प्रश्न पूछ कर यह पता लगाएं कि छात्रों ने भाषण को ध्यानस ए सूना या समझा है या नहीं |
4. **कहानी के माध्यम से पाठकों को समझाना :** अध्यापक पहले विद्यार्थियों को कोई कहानी सुनाये और बाद को उसी कहानी को विद्यार्थियों से उनकी अपनी भाषा में सुने | इससे यह पता लग जाएगा कि छात्रों ने कहानी ध्यान से सूनी है या नहीं | सामन्यतया

विद्यार्थियों की कहानी में रुचि होती है और इस प्रकार बच्चों को सहज ही ध्यान से सुनने का प्रशिक्षण दिया जा सकता है|

अभ्यास प्रश्न

1. श्रवण कौशल प्रशिक्षण की विधियों को स्पष्ट करें |

----

2. श्रुत लेख से आप क्या समझते हैं ?

----

3. सस्वर वाचन क्या है ?

----

4. कहानी के माध्यम से पाठकों को समझाना से आप क्या समझते हैं ? उदाहरण सहित समझाएं|

6.6 सारांश

सुनना एक कला है | यह बात सुनने में बड़ी अजीब सी लगती है | क्या वाकई सुनना एक कला है ? जिसको प्रयास के द्वारा और बेहतर बनाया जा सकता है | भारतीय ज्ञान परम्परा में भी श्रुति परम्परा का अपना एक विशेष महत्व रहा है | भाषा शिक्षण के कौशलों में श्रवण कौशल अपना प्रमुख स्थान रखता है | श्रवण करना मात्र सुनना ही नहीं है बल्कि ये पठन के सदृश मनन एवं चिंतन करना है | श्रवण कौशल विकसित करने की प्रमुख विधियां निम्नलिखित है-

१. श्रुतलेख
२. सस्वर वाचन:
३. श्रव्य सामग्री का प्रयोग:
    I. रेडियो
    II. चलचित्र
    III. ग्रामोफोन एवं टेपरिकार्डर
    IV. दूरदर्शन
    V. वीडियो
    VI. वाद- विवाद
४. प्रश्न काल
५. भाषण
६. कहानी के माध्यम से पाठकों को समझाना

6.7 शब्दावली (Glossary)

- **श्रवण (Listening)** – श्रवण व्यक्त अथवा अव्यक्त व्यवहार प्रतिमानों के चयनशील मौखिक अथवा लिखित संकेतों को प्राप्त करने के सम्बन्ध में अन्य व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के वार्तालाप पर गहन अध्ययन देने की कला है |
- **श्रुतलेख :** श्रुतलेख लेखन कौशल को विकसित करने का साधन है , परन्तु इसकी सहायता से श्रवण कौशल को भी विकसित किया जा सकता है| श्रुतलेख में विद्यार्थी सुनकर लिखते हैं|
- **सस्वर वाचन (Loud Reading) :** छात्र अध्यापक के द्वारा किये गए आदर्श वाचन और कक्षा के किसी विद्यार्थी के द्वारा किये जाने वाले अनुकरण वाचन को ध्यानपूर्वक सुनकर शुद्ध उच्चारण , बालाघात गति आदि का ज्ञान प्राप्त करते हैं |

6.9 अभ्यास प्रश्न

1. भाषा शिक्षण में श्रवण कौशल प्रशिक्षण के स्थान के महत्व को स्पष्ट करें |

2. श्रवण कौशल प्रशिक्षण के उद्देश्य से आप क्या समझते हैं?
3. श्रवण कौशल का विकास के सोपानों को स्पष्ट करें |
श्रवण कौशल प्रशिक्षण की विधियों के बारे में विस्तार से लिखें |

6.10 अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची(References and Bibliography)

- अग्रवाल, पी. और संजय वुफमार 2000 (संपादक), हिंदी देशकाल में
- चॉम्स्की, एन. 1957, सिनटेक्टिक स्ट्रक्चर्स, दी हेग: मौटेन कं.।
- चॉम्स्की, एन. 1959, रिव्यू ऑफ स्किनर्स वर्बल बिहेवियर. लैंग्वेजेस 35.1.26-58
- चॉम्स्की, एन. 1972, लैंग्वेज एंड माइंड, न्यूयार्क: हारकोर्ट ब्रास जोवानोविच।
- चॉम्स्की, एन. 1996, पॉवर्स एंड प्रोस्पेक्ट्स: रिफलेक्शंस ऑन ह्यूमन नेचर एंड द सोशल आर्डर, दिल्ली: माध्यम बुक्स।
- चॉम्स्की, एन. 1965, आस्पेक्ट्स ऑप़फ द थ्योरी ऑफ सिनटेक्स, कैंब्रिज: एम. आई. टी. प्रेस।
- चॉम्स्की, एन. 1986, नॉलेज ऑफ लैंग्वेज, न्यूयार्क : प्रागर।
- चॉम्स्की, एन. 1988, लैंग्वेज एंड प्रॉब्लम्स ऑप़फ नॉलेज, वैंफब्रिज, मास: एम. आई. टी.।
- दुआ, एच. आर. 1985, लैंग्वेज प्लानिंग इन इंडिया, दिल्ली: हरनाम पब्लिशर्स।
- हैबरमास, जे. 1998, ऑन द प्रागमैटिक्स ऑफ कम्युनिवेफशन, कैंब्रिज, मास: एम. आई. टी. प्रेस।
- हैबरमास, जे. 1998, दी फिलॉस्फिकल डिसकोर्स ऑप़फ मॉडर्निटी, कैंब्रिज, मास: एम. आई. टी. प्रेस।
- कुमार, के. 2001, स्कूल की हिंदी, पटना: राजकमल प्रकाशन।
- शिक्षा मंत्रालय, शिक्षा आयोग कोठारी कमीशन 1964 -1966, शिक्षा एवं राष्ट्रीय विकास, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार 1966
- नेशनल पॉलिसी ऑन एजुकेशन, 1986, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, शिक्षा विभाग, नयी दिल्ली।
- पटनायक, डी. पी. 1981, मल्टीलिंगुएलिज्म एंड मदस्र्टंग एजुवेफशन, ऑक्सपफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- पटनायक, डी. पी. 1986, स्टडी ऑफ लैंग्वेजेज, ए रिपोर्ट, नयी दिल्ली: एन.सी.ई.आर.टी।
- रिचर्ड्स, जे. सी. 1990, दी लैंग्वेज टीचिंग मैट्रिक्स, कैब्रिज :कैब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

- सायर, डी. 1924, दी इपैफक्ट ऑप़फ बाइलिंगुएलिष्म ऑन इंटेलिजेंस, ब्रिटिश जर्नल ऑप़फ साइकोलॉजी 14:25-38
- श्रीधर, के.के. 1989, इंग्लिश इन इंडियन बाइलिंगुलिज्म,नयी दिल्ली, मनोहर।
- तिवारी, बी. एन., चतुर्वेदी, एम. और सिंह, बी. 1972 (संपादकगणद), भारतीय भाषा विज्ञान की भूमिका, दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
- यूनेस्को, 2003, एजुवेफशन इन ए मल्टीलिंगुएल वल्ड, यूनेस्को एजुकेशन पोजिशन पेपर, पेरिस।
- बाय्गोत्सकी , एल. एस. 1978, माइंड इन सोसायटी: दी डेवलपमेंट ऑप़फ हायर साइकोलॉजिकल प्रोसेस, वैंफब्रिज, मॉस: हार्वड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- जमील, वी. 1985, रेस्पोंडिंग टू स्टूडेंट राइटिंग, टी. ई. एस. ओ. एल. त्रौमासिक, 19.1
- इस वेबसाइट को जरूर देखें : http//www.languageindia.com

इकाई - 7

प्रबंधन के मूलाधार

(Fundamentals of Management)

इकाई की संरचना

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 प्रबंधन का अर्थ एवं परिभाषाएं

7.3 प्रबंध की प्रकृति

7.4 प्रबंध के क्षेत्र

7.5 प्रबंधन के विभिन्न स्तर

7.6 शैक्षिक प्रबंध का अर्थ

7.7 शैक्षिक प्रबंध एवं परिभाषाएँ

7.8 शैक्षिक प्रबंध के उद्देश्य

7.9 शैक्षिक प्रबंध की आवश्यकता एवं महत्व

7.10 शैक्षिक प्रबंध की तकनीकियाँ

7.11 शैक्षिक प्रबंध के सिद्धान्त

7.12 सारांश

7.13 अभ्यास प्रश्न

7.14 संदर्भ सूची

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

- प्रबंधन का अर्थ एवं परिभाषाओं को जान सकेंगे
- प्रबंधन के विभिन्न स्तरों की जानकारी प्राप्त हो सकेगी
- प्रबंधन की प्रकृति को समझ सकेंगे
- प्रबंधन के विभिन्न क्षेत्रों की जानकारी हो सकेगी
- शैक्षिक प्रबंध का अर्थ एवं परिभाषाओं को जान सकेंगे
- शैक्षिक प्रबंध के विभिन्न उद्देश्यों की जानकारी प्राप्त हो सकेगी
- शैक्षिक प्रबंध की महत्ता को समझ सकेंगे
- शैक्षिक प्रबंध की विभिन्न तकनीकियों को समझ सकेंगे
- शैक्षिक प्रबंध के सिद्धान्तों की जानकारी प्राप्त हो सकेगी

7.1 प्रस्तावना

मानव एक सामाजिक प्राणी है वह समाज में रहता है। समाज में रहते हुए मानव को अनेक कार्यों को सम्पादित करना होता है। इन अनेक कार्यों को करने में मानव को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं का समाधान करने में मानव को कई बार कुछ वस्तुओं को जुटाना पड़ता है, समस्याओं के हल ढूँढने पड़ते हैं, समायोजन करने पड़ते हैं। वस्तुएँ जुटाना, समस्या के हल ढूँढने एवं समायोजन करने की इस प्रक्रिया को एक सटीक एवं संक्षिप्त शब्द में प्रबन्ध (Management) कहा जा सकता है।

मानव को दैनिक जीवन में अनेक वस्तुओं की आवश्यकता होती है जैसे शरीर शुद्धि हेतु मंजन, साबुन इत्यादि। इसी प्रकार देश-विदेश की सूचनाएँ प्राप्त करने के लिए समाचार पत्र, रेडियो, दूरदर्शन, इण्टरनेट इत्यादि। इन सभी वस्तुओं की प्राप्ति में नियोजन की आवश्यकता होती है। इस नियोजन में नियोजनकर्ता के मस्तिष्क पटल पर इन वस्तुओं की गुणात्मकता का विचार प्राय: रहता है और नियोजनकर्ता सदैव या अधिकांशत: यह प्रयास करता है कि मुझे अमुक वस्तु अमुक कम्पनी की ही खरीदनी है। जैसे कोई व्यक्ति।

बाजार में जाता है और वह दुकानदार से कहता है कि मुझे अमुक वस्तु अमुक कम्पनी की दीजिए। व्यक्ति इस प्रकार की भावनाओं से ग्रसित हो जाता है क्योंकि वह प्राय: उस वस्तु की गुणात्मकता **(Quality)** एवं उस कम्पनी के प्रबन्धन **(management)** से संतुष्ट रहता है।

शैक्षिक प्रबन्धन एवं प्रशासन में मुख्य रूप से तीन शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं - प्रबन्धन, प्रशासन एवं संगठन। प्राय: लोग प्रशासन, प्रबन्धन एवं संगठन को समानार्थक मानते हैं। परन्तु वास्तविकता में यह तीनों भिन्न हैं। इनकी कार्यविधि, दायित्व एवं नीतियों में अन्तर होता है। 'प्रशासन' वह क्षमता है जिसके द्वारा सामाजिक शक्तियों एवं विरोधी तत्त्वों को एकाकी अवयव **(Organism)** में समन्वित किया जाता है जिससे वे एकरूपता में संचालित हो सके। प्रशासन एक साधन है जो संगठन के उद्देश्यों, नीतियों तथा मार्गदर्शक सिद्धान्तों का निर्धारण करता है। प्रबन्धन वह कार्यकारी क्रियाकलाप है जिसके माध्यम से प्रशासक प्रशासनिक नीति को क्रियान्दित करता है। जबकि संगठन उन पवृत्तियों या तत्त्वों से सम्बन्धित है जिनके द्वारा वांछित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किसी ढांचे का निर्माण किया जाता है। किसी संगठन के संस्था के ढाँचे का संचालन प्रशासन द्वारा किया जाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रशासन **(administration),** प्रबन्धन **(management)** एवं संगठन **(organization)** तीनों अन्तर्सम्बन्धित **(Intercorrelated)** हैं, परन्तु इन तीनों का पृथक-पृथक सम्प्रत्यय है।

7.2 प्रबंधन का अर्थ एवं परिभाषाएं

प्रबंध से आशय उस कला तथा विज्ञान से लिया गया हैं, जो कार्यकुशल तरीके से एक व्यवसाय के उद्देश्यों की प्राप्ति में योगदान करता है। इस अर्थ में, ''एक संस्था तथा उसमें कार्य करने वाले कर्मचारियों के संगठन, निर्देशन, नेतृत्व एवं नियंत्रण के कार्यों को प्रबंध की संज्ञा दी गई है।''

"Management is a distinct process consisting of planning organizing, actualiting and controlling, utilizing in each both science and art and followed in order to accomplish predetermined objectives."

- George R. Terry

इसके अतिरिक्त कुछ व्यक्ति प्रबंध को सामाजिक प्रयासों की व्यवस्था मानते हैं। इनका कहना हैं कि जब संस्था में एक से अधिक व्यक्ति कार्य करते हैं तभी उनके कार्यों का नियोजन, संगठन, समन्वय एवं नियंत्रण करना आवश्यक होता है ताकि संस्था अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर सके। इस प्रकार सामान्य लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु सामूहिक प्रयासों का नियोजन, संगठ्न, समन्वय, नियंत्रण एवं निर्देशन ही प्रबंध कहलाता है।

प्रबंध एक व्यापक एवं जटिल शब्द है। यह इतना व्यापक है कि इसे आधुनिक औद्योगिक जगत् में कई अर्थों में प्रयोग किया जाता है। प्रबंध की विचारधारा इतनी जटिल है कि, प्राय: विद्वान् इसे अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं और उद्देश्य के संदर्भ में कामचलाऊ आधार पर परिभाषित करते हैं। विभिन्न विद्वानों एवं लेखकों ने प्रबंध के विभिन्न पहलुओं को ध्यान में रखते हुए उसकी परिभाषा को अपने अपने तरीके से स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इसीलिए इसकी कोई सर्वग्राह्य तथा सर्वमान्य परिभाषा आज तक नहीं बन पाई है। सर चाल्र्स रेनोल्ड के अनुसार, ‘‘ प्रबंध अन्य व्यक्तियों से कार्य कराने की युक्ति है। इस दृष्टि से प्रबंध का आशय समुदाय के एक अभिकरण द्वारा अन्य व्यक्तियों से कार्य करवाने से लिया गया है।’’

“Management is the process of getting things done through the agency of community”.

- Sir Charles Renold

प्रबंध की कतिपय प्रमुख परिभाषाएं निम्नलिखित हैं -

1. प्रो. आर.सी. डेविस के शब्दों में, ‘‘प्रबंध कार्यकारी नेतृत्व का कार्य हैं, यह संगठन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इसकी क्रियाओं के आयोजन, संगठन तथा नियंत्रण का काम है।’’
   “Management is the function of executive leadership anywhere. It is work of planning, organizing and controlling the activities of the organization in the accomplishment of its objectives.

   - R.C. Davis

2. जी. ई. मिलवर्ड के अनुसार, ‘‘ प्रबंध प्रक्रिया और एजेन्सी है जिसके माध्यम से नीतियों का क्रियान्वयन, नियोजन, और पर्यवेक्षण किया जाता है।’’ इस प्रकार मिलवर्ड प्रबंध को एक प्रक्रिया एवं एजेन्सी मानते हैं जिसके द्वारा नीतियों के क्रियान्वयन की योजना तैयार की जाती है तथा समय - समय पर उसका पर्यवेक्षण किया जाता है।
   “Management is the process and the agency through which the execution of policy is planned and supervised.”

   - G.E. Milward

3. ई.एफ.एल.ब्रेच के अनुसार, ‘‘प्रबंध एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत किसी उपक्रम के निर्धारित उद्देश्य अथवा कार्य को पूरा करने के हेतु क्रियाओं का प्रभावपूर्ण आयोजन एवं नियमन करने का उत्तरदायित्व सन्निहित है’’।

"Management is a social process entailing social responsibility of effective planning and regulation of the operations of an enterprise in fulfillment of a given purpose a task."

4. जी.ई. मेकफारलैण्ड के अनुसार,'' प्रबंध वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रबंधन उद्देश्यपूर्ण संगठनों का व्यवस्थित, संतुलित एवं सहकारितापूर्ण मानवीय प्रयासों के द्वारा सृजन करते हैं, निर्देशन करते हैं, बनाए रखते हैं तथा संचालन करते हैं।''

"Management is that process by which managers create, direct, maintain and operate purposive organisations through systematic, coordinated, cooperative human effort."

-G.E. Mc Farland

5 विलसन भी अन्य विद्वानों की भांति प्रबंध का आशय एक प्रक्रिया से लगाते हैं, जो निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए मानवीय शक्तियों के प्रयोग एवं निर्देशन से प्रबंध रखती है।

6 जार्ज आर, टैरी ने प्रबंध को परिभाषित करते हुए लिखा है कि, प्रबंध एक विशिष्ट प्रक्रिया है, जिसमें नियोजन, संगठन, उत्प्रेरण एवं नियंत्रण सम्मिलित हैं। इनमें से प्रत्येक में कला एवं विज्ञान दोनों का प्रयोग करते हुए पूर्व निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अनुवर्तन किया जाता है।''

Management is a distinct process consisting of planning organizing, actuating and controlling, performed to determine and accomplish the objectives by the use of art and science both."

- George R. Terry

7 प्रो. जॉन एफ.मी के अनुसार, ''प्रबंध से आशय न्यूनतम प्रयासों द्वारा अधिकतम परिणाम प्राप्त करने की कला से है जिससे कि नियाक्ता एवं नियोक्ति दोनों के लिए अधिकतम समृद्धि एवं खुशहाली तथा जनता के लिए सर्वश्रेष्ठ सेवा संभव हो सके।''

Management is the art of securing maximum results with a minimum effort so as to secure maximum prosperity and happiness for both employer and employee and give the public the best possible service."

- John F. Mee

8. मेकफारलैण्ड प्रबंध की गत्यात्मक प्रकृति का बोध कराते हुए प्रबंध के विभिन्न कार्यों को अपनी परिभाषा में समाविष्ट करते हैं।

9. प्रबंध के विश्वविख्यात विद्वान पीटर एफ. ड्रूकर के शब्दों में, ''प्रबंध एक बहुउद्देश्यीय तत्व हैं जो एक व्यवसाय का प्रबंध करता हैं, प्रबंधकों का प्रबंध करता है तथा कार्य करने वालों का प्रबंध करता है।

`Management is a multipurpose organ that manages a business and manages managers and manages workers and work."

– Peter F. Drucker

10 मेरी कुशिंग नाइल्स के अनुसार, ''अच्छा प्रबंध वह है जो सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति मानवीय तथा भौतिक शक्ति एवं समय क सर्वोत्तम उपयोग के साथ उपलब्ध कराने का प्रयास करता है।

Goo Management achieve a social objectives with the best use of human and material energy and time and with satisfaction of the participants and the public.

– Marry Cushing Niles

निष्कर्ष - उपर्युक्त परिभाषाओं का अध्ययन करने के पश्चात हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि प्रबंध व्यक्तियों अथवा समूह के साथ मिलकर कार्य करते हुए संगठन के उद्देश्यों एवं सामाजिक अभिवृद्धि को प्राप्त करने की कला तथा विज्ञान है।

7.3 प्रबंध की प्रकृति

प्रबंध तथा प्रशासन शब्दों को लेकर विवाद होता रहा है। इस संबंधमें तीन बातें प्रमुख रूप से चर्चित हैं -

1- प्रबंध तथा प्रशासन एक ही हैं।
2- प्रशासन, प्रबंध के ऊपर है।
3- प्रशासन, प्रबंध का अंग है।

ब्रीच के शब्दों में - प्रबंध उपक्रम के कार्यों के प्रभावपूर्ण ढंग से नियोजित व नियमित करने का उत्तरदायित्व है। इस उत्तरदायित्व में अ योजनानुसार चलते रहने के लिये उपयुक्त कार्य विधि तैयार करना, उसे बनाये रखना, ब और उपक्रम की संरचना करने वाले तथा उसके कार्यों को सम्पन्न करने वाले कर्मचारियों का मार्ग निर्देशन, संगठन, संगठन तथा निरीक्षण निहित है। अत: स्पष्ट है कि प्रशासन तथा प्रबंध निष्पादन तथा उत्तरदायित्व संबंधीकार्यों में अन्तर पाया जाता है।
इस आधार पर प्रबंध की प्रकृति इस प्रकार है -

1- **प्रबंध एक जन्मजात प्रतिभा है -** प्रबंधक, नेतृत्व प्रदान करता है। नैता पैदा होते हैं, बनाये नहीं जाते। उनके वंशगत प्रभाव उनकी कार्य प्रणाली को प्रभावित करते है।
2- **प्रबंध एक सामाजिक विज्ञान है -** प्रबंध, केवल प्रक्रिया नहीं है, यह सामाजिक विज्ञान के रूप में उभरा है। यह कार्य कारण संबंधोंका विवेचन करता है।
3- **प्रबंध एक कला है -** प्रबंधक का कार्य है दूसरों से काम लेना। दूसरो से काम लेना एक कला है। किसी कार्य को करने के सर्वश्रेष्ठ ढंग से कला कहै।
4- **प्रबंध एक व्यवसाय है -** आजकल प्रबंध को व्यवसाय के रूप में लिया जाता है। प्रबंध विज्ञान का प्रशिक्षण प्राप्त कर व्यक्ति अपनी योग्यताओं एवं क्षमताओं का उपयोग प्रतिष्ठित संस्थानों में करता है। प्रत्येक व्यवसाय में इन तथ्यों का पाया जाना आवश्यक है -
    1- प्रत्येक व्यवसाय में संगठित ज्ञात तथा विशेष ज्ञान का अस्तित्व होता है।
    2- सिद्धान्तों के औपचारिक प्रशिक्षण की व्यवस्था होती है।
    3- प्रबंध व्यवसाय के प्रतिनिधि संस्था विद्यमान है।
    4- व्यवसाय के सदस्यों की सामान्य आचार संहिता होती है।
    5- व्यवसाय में सेवा की प्रकृति तथा मात्रा के अनुसार पारिश्रमिक की व्यवस्था होती है।

5. **प्रबंध एक सामाजिक दायित्व है -** एच.ए. साइमन के शब्दों में प्रबंध अर्थ व्यवस्था का केवल एक सामान्य अंग मात्र ही नहीं है अपितु उसका निर्माता भी है। जिस सीमा तक वह आर्थिक परिस्थितियों को नियंत्रित करता है और सतत प्रयत्नां से उन परिस्थितियों की बदलता है, उसी सीमा त कवह अच्छा प्रबंध करता है।

6 **प्रबंध एक सार्वभौमिक क्रिया है** - जीवन तथा समाज का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जिसमें प्रबंध की आवश्यकता न हो। सामाजिक कुशलता के निर्माण में प्रबंध एक सार्वभौम प्रक्रिया के रूप में जाना जाता है।

7.4 प्रबंध के क्षेत्र

शैक्षिक प्रबंध एक व्यापक प्रक्रिया है। इसमें देश की आवश्यकता, संसाधन मानव शक्ति नियोजन आदि निहित होते हैं। प्रबंध के क्षेत्र की व्याख्या करते हुए हेनरी फेयोल ने कहा है - 'प्रबंध एक सार्वभौमिक विज्ञान है जो वाणिज्य, उद्योग, राजनीति, धर्म, युद्ध या जनकल्याण सभी पर समान रूप से लागू होता है। टेलर के शब्दों में - वैज्ञानिक प्रबंध के आधारभूत सिद्धान्त हमारे साधारण से साधारण व्यक्तिगत कार्यों को लेकर हमारे विशाल नियमों के कामों तक लागू होते हैं। इस दृष्टि से शैक्षिक प्रबंध के नौ क्षेत्र है।

1- **उत्पादक प्रबंध -** इसके अन्तर्गत उत्तम शैक्षिक उपलब्धि की दृष्टिगत रखा जाता है।
2- **वित्तीय प्रबंध -** शिक्षा संस्थाओं के संचालन के लिये वित्तीय प्रबंध किया जाता है।
3- **विकास प्रबंध** - विद्यालयों को प्रोन्नत करने के लिये विकास की व्यवस्था की जाती है।
4- **वितरण प्रबंध -** विद्यालयी संसाधनों का वितरण किया जाता है।
5- **क्रय प्रबंध -** विद्यालयों में सामान्य क्रय करने का प्रबंध किया जाता है।
6- **परिवहन प्रबंध -** विद्यालय में समान, छात्रों, स्टाफ के लाने ले जाने की व्यवस्था की जाती है।
7- **संस्थापन प्रबंध -** संस्था के भवन, उपकरण, अन्य साधनों का प्रबंध किया जाता है।
8- **सेवी वर्गीय प्रबंध -** शिक्षक, कर्मचारी आदि की व्यवस्था, पद एवं भूमिका का निर्धारण किया जाता है।
9- **कार्यालय प्रबंध -** प्रत्येक विद्यालय में रिकार्ड की व्यवस्था करने के लिये कार्यालय होता है। जिसके प्रबंध की आवश्यकता होती है।

7.5 प्रबंधन के विभिन्न स्तर

प्रबंधकों के कार्यों तथा अधिकारों के आधार पर प्रबंध को निम्न चार स्तरो ंमें विभाजित किया जा सकता है -

1- शीर्ष प्रबंध - इसके अन्तर्गत संचालक मण्डल तथा प्रबंध संचालक को सम्मिलित किया जाता है। उच्च प्रबंध का मुख्य कार्य लक्ष्य निर्धारित करना, नीति निर्धारण करना तथा महत्वपूर्ण निर्णय लेना होता हैं। किसी भी प्रबंध की सफलता या असफलता का उत्तरदायित्व मूल रूप से शीर्ष प्रबंध पर ही होता है। लिविंग्स्टन ने शीर्ष प्रबंध के कार्यों को तीन वर्गों में विभक्त किया है –

2-

शीर्ष प्रबंध के कार्य

निर्णय संबंधीकार्य | मन्त्रणा संबंधीकार्य | न्याय संबंधीकार्य

1- किसी भी कार्य को करने अथवा न करने का विचार शीर्ष प्रबंध के पास ही आता है।
2- यह विभागीय प्रबंधकों से मंत्रणा करके उस कार्य को पूरा कराने की योजना बनाता है कि क्या करना है, कब करना है तथा किसके द्वारा कार्य को पूरा करना है।
3- शीर्ष प्रबंध भी प्रबंध के कार्ये को पूरा करने के लिए कार्यक्रम तैयार करता है और अपने अधीनस्थों के लिए अधिकारों तथा दायित्वों का निर्धारण करता है।
4- प्रबंध के लिए नीतियां बनाना तथा वित्त की व्यवस्था करना भी शीर्ष प्रबंध का ही दायित्व होता है।
5- शीर्ष प्रबंध इस बात का मूल्यांकल करता है कि जो परिणाम सामने आ रहे हैं, वे उचित हैं या अनुचित। समय समय पर यह अपने निर्णयों तथा नीतियों का मूल्यांकन करके उनमें आवश्यक सुधार भी करता है।

शीर्ष प्रबंध के कार्य - शीर्ष प्रबंध के कार्य निम्नलिखित हैं -

1- उपक्रम के व्यवसाय को सफलतापूर्वक चलाने के लिए पर्याप्त वित्त की व्यवस्था करना।
2- उपक्रम के विभिन्न विभागों के कार्यों को समन्वय स्थापित करना।
3- उन प्रमुख नितियों का निर्धारण करना जो व्यवसाय संचालन के लिए आवश्यक होती है।
4- लाभों की जानकारी प्राप्त करना तथा लाभांस की घोषणा करना।
5- उपक्रम के प्रबंध को सफलतापूर्वक चलाने के लिए महत्वपूर्ण पदों पर प्रबंधकों की नियुक्ति करना।
6- संगठन का निर्धारण करना।
7- सम्पूर्ण उपक्रम के लिए सम्पूर्ण योजना तैयार करना
8- उपक्रम के प्रमुख लक्ष्यों का निर्धारण करना।

शीर्ष प्रबंध के कार्य - शीर्ष प्रबंध के कार्य निम्नलिखित हैं -

1- उपक्रम के व्यवसाय को सफलतापूर्वक चलाने के लिए पर्याप्त वित्त की व्यवस्था करना।
2- उपक्रम के विभिन्न विभागों के कार्यों को समन्वय स्थापित करना।
3- उन प्रमुख नीतियों का निर्धारण करना जो व्यवसास संचालन के लिए आवश्यक होती है।
4- लाभों की जानकारी प्राप्त करना तथा लाभांश की घोषणा करना
5- उपक्रम के प्रबंध को सफलतापूर्वक चलाने के लिए महत्वपूर्ण पदों पर प्रबंधकों की नियुक्ति करना।
6- संगठन का निर्धारण करना
7- सम्पूर्ण उपक्रम के लिए सम्पूर्ण योजना तैयार करना।
8- उपक्रम के प्रमुख लक्ष्यों का निर्धारण करना।

2 **शीर्ष मध्य प्रबंध -** शीर्ष मध्य प्रबंध में विभागीय प्रबंधकों को सम्मिलित किया जाता है। मुख्य रूप से प्रबंध में विपणन, वित्त, सेविवर्गीय तथा कार्यालय आदि प्रमुख विभागों के प्रबंधक होते हैं, जो अपने अपने विभाग के कार्यों के लिए उत्तरदायी होते हैं। इस शीर्ष मध्य प्रबंध के कार्य शीर्ष प्रबंध के निर्देशानुसार अपने विभाग के संबंध में निर्णय लेना, नीतियां बनाना, संगठन की व्यवस्था करना, विभागीय कार्य का क्रियान्वयन करना तथा लागत नियंत्रण आदि होते हैं।

हेम्पेल के अनुसार, संगठन की स्थापना अच्छे प्रशासकीय एवं अन्य कार्यकर्ताओं का चयन, योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिए पर्याप्त लोगों की नियुक्ति, उचित विभाग खोलना, कार्य निर्धारण, पर्याप्त कोष प्राप्त करना तथा वित्त नियंत्रण, विभागों में बजट का नियंत्रण, बजट के अनुसार धन का वितरण, श्रम संबंधआदि सभी समस्याओं का उचित ढंग से निवारण करना ही शीर्ष मध्य प्रबंध का कार्य है।

इस प्रकार शीर्ष मध्य प्रबंध में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ये विभागीय प्रबंधक समय समय पर सभाओं का आयोजन करके सभी विभागों की क्रियाओं में समन्वय रखते हैं तथा आपसी सहयोग करते हैं । सामूहिक बैठको एवं सभाओं में विभागीय प्रबंधक एक दूसरे की समस्याओं एवं कठिनाईयों का भी सुनते हैं और समझते हैं तथा उसी के अनुरूप अपने विभाग की क्रियाओं का संचालन करके एक दूसरे का सहयोग करते हैं।

शीर्ष मध्य प्रबंध के कार्य

शीर्ष प्रबंध में विभागीय प्रबंधकों को सम्मिलित किया जाता है। इस स्तर के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं -

1- शीर्ष प्रबंध द्वारा निर्धारित योजना को कार्यान्वित करना तथा शीर्ष प्रबंध को आवश्यक सूचनाएं प्रेषित करना।
2- अपने विभाग की समस्त क्रियाओं में समन्वय स्थापित करना।
3- अपने विभाग के लिए योग्य कर्मचारियों की नियुक्ति करना।
4- विभाग के अन्तर्गत स्थापित उप विभागों के अधिकारियों को आवश्यक आदेश निर्देश देना।
5- शीर्ष प्रबंध द्वारा बनाई गई वृहत् योजना के अनुरूप विभागीय योजना बनाना।
6- विभागीय प्रबंधक द्वारा अपने अपने विभाग के संगठन की स्थापना करना
7- विभागीय कार्यों के बारे में नीतियां बनाना।

3 **मध्य स्तरीय प्रबंध -** मध्यस्तरीय प्रबंध में अधीक्षक, शाखा प्रबंधक तथा सहायक तथा सहायक एवं उपविभागीय प्रबंधकों को सम्मिलित किया जाता है। इनका प्रमुख कार्य विभागीय प्रबंधकों की सहायता करना होता है ।

मेरी कुशिंग नाइल्स ने मध्य स्तरीय प्रबंध के निम्नलिखित कार्य बतलाये हैं -

1- प्रशिक्षण एवं अनुभव के आधार पर सफल नेतृत्व का विकास करना।
2- संगठन के कार्य को सुचारू रूप से चलाने मे विभागीय प्रबंधकों का सहयोग करना तथा विभागीय कार्यों में समन्वय स्थापित करना।
3- विभागीय प्रबंधकों को आवश्यक सूचनाएं प्रेषित करना।
4- कर्मचारियों में अपनत्व तथा टीम भावना जागृत करना
5- समान स्तर के अधिकारियों के कार्य मे ंसमन्वय स्थापित करना।

6- संगठन की नीतियों, योजनओं एवं कार्य प्रणालियों को अच्छी तरह से समझकर क्रियान्वित करना।
7- विभिनन समस्यओं का समाधान निर्धारित नीतियों के आधार पर अपने ही स्तर पर करना ताकि शीर्ष प्रबंध अपना अधिकांश समय अच्छी योजनाओं के निर्माण में लगा सकें।

ये मध्य स्तरीय प्रबधक अपने विभागीय प्रबंधकों के आदेशानुसार कार्य तो करते ही हैं, साथ साथ उचित परामर्श देने का कार्य भी करते हैं। इनका प्रथम स्तर प्रबंध के व्यक्तियों तथा कर्मचारियों से सीधा सम्पर्क होता है। ये उनके लिए योजना बनाते हैं तथा उनके कार्यों पर नियंत्रण करते हैं।

4 **प्रथम स्तरीय प्रबंध -** प्रबंध के इस स्तर में सुपरवाईजर्स को सम्मिलित किया जाता है। इनका चपरासी तथा कर्मचारियों से सीधा सम्पर्क होता है। ये लोग चपरासी को कार्य करने के लिए आवश्यक उपकरण तथा सुविधाएं उपलब्ध कराते हैं तथा उनको कार्य सौंपते हैं। चपरसी को कार्य करने के लिए समय समय पर आवश्यक आदेश एवं निर्देश भी देते हैं। ये चपरासी की सामान्य समस्याओं का भी अपने स्तर पर समाधान करते हैं तथा कार्यों का निरीक्षण एवं नियंत्रण करते है।

प्रथम स्तरीय प्रबंध के कार्य

प्रबंध के इस स्तर को निम्न स्तरीय प्रबंध की कहा जाता है। वर्तमान समय में मानवीय संबंधों की अवधारणा के विकास से इसको प्रथम स्तरीय प्रबंध कहा जाता है। इस स्तर पर प्रबंध के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं -

1. कार्य की दशाओं तथा श्रमिकों की समस्याओं के बारे में उच्च अधिकारियों को जानकारी कराना।
2 कर्मचारियों से व्यक्तिगत सम्पर्क करके उनकी भावनाओं को समझना तथा उनकी परिवेदनाओं का निवरण करना।
3 विभागीय प्रबंधकां द्वारा लिए गए निर्णयों को कर्मचारियों से वास्तविक रूप से कार्यान्वित करना।
4 कर्मचारियों के मनोबल को बढ़ाना तथा उनमें उपक्रम के प्रति अपनत्व की भावना का विकास करना।
5 उद्देश्य प्राप्ति के लिए कार्य की दैनिक योजनाओं का निर्धारण।

7.6 शैक्षिक प्रबन्ध का अर्थ (Meaning of Education Management)

शैक्षिक प्रबन्ध' यह सम्प्रत्यय दो शब्दों के योग से बना है - शैक्षिक और प्रबन्ध । इसमें शैक्षिक से तात्पर्य है शिक्षा से सम्बन्धित । इसमें शिक्षा से जुड़े हुए भौतिक एवं मानवीय सभी प्रकार के घटक आ जाते हैं एवं प्रबन्ध से सामान्यतया यह अर्थ लिया जाता है कि पूर्व निर्धारित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संस्था के कार्यकर्ताओं के वैयक्तिक एवं सामूहिक प्रयासों के नियोजन, संगठन , निर्देशन एवं नियंत्रण से संबंधितहै । शैक्षिक प्रबन्ध से तात्पर्य शिक्षा से जुड़े हुए सभी पहलुओं की व्यवस्था या प्रबन्ध एवं कार्य करने की कला से है । शैक्षिक प्रबन्ध में योजना, संगठन, निर्देशन, ।नियंत्रण, समन्वय आदि प्रक्रियाओं को महत्वपूर्ण माना गया है । 'शैक्षिक प्रबन्ध' शिक्षा के क्षेत्र में

वांछित शैक्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए की जाने वाली प्रक्रिया है। शिक्षा व्यवसाय में प्रबन्ध का विशेष महत्त्व है। प्रबन्ध से तात्पर्य शिक्षा से जुड़े हुए सभी पहलुओं की व्यवस्था या प्रबन्ध से है। शैक्षिक प्रबन्ध के द्वारा शिक्षण एवं अधिगम के लिए न केवल मानवीय तथा भौतिक संसाधनों की व्यवस्था की जाती है अपितु उनमें इस प्रकार समन्वय किया जाता है जिससे शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति सहज हो सके। 'शैक्षिक प्रबन्ध' इस सम्प्रत्यय को कुछ शिक्षा-शास्त्रियों ने परिभाषित भी किया है जिसको समझना प्रसंगोचित रहेगा।

7.7 शैक्षिक प्रबन्ध की परिभाषाएँ (Definitions of Educational Management)

'शैक्षिक प्रबन्ध' को विद्वानों ने निम्नानुसार परिभाषित किया है - '

1. **जे. बी. सीयर्स के अनुसार -** "शैक्षिक प्रबन्ध एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसका सम्बन्ध ऐसी व्यवस्था करने से है जिसमें सम्पूर्ण शैक्षिक कार्यक्रम सफलतापूर्वक व्यावहारिक रूप में सम्पन्न हो सके।"

   ("Educational Management is the process which concerns with making arrangement so that the purpose of the entire Educational Programme may be achieved practically")
2. **विलियम शुल्टजे के अनुसार** - "शैक्षिक प्रबन्ध का तात्पर्य आवश्यक मानवीय साधनों, सामग्री तथा साज-सज्जा की अनेक वस्तुओं को इस प्रकार क्रमबद्ध तथा प्रभावशाली ढंग से जुटाना है जिससे वांछित उद्देश्यों की अधिकतम प्राप्ति हो सके।"

   ("An Educational Management is a combination of the necessary human designs materials, tools, equipment, working, spaces and appliances bright together in systematic and effective co-ordination to accomplish some desired objects.")
3. **पिफनर के अनुसार -** "शैक्षिक प्रबन्ध का तात्पर्य व्यक्तियों तथा व्यक्तियों के बीच, वर्गों का वर्गों के बीच उन सम्बन्धों को आयोजित करना है जिससे श्रम का क्रमबद्ध विभाजन किया जाता है।"

   ("Educational Management consisting of the relationship of individuals to individuals and of group, which are so related as to bring about and orderly division of labour.")
4. **वर्गीस टी. पाल के अनुसार** - "शैक्षिक प्रबन्ध का प्रमुख आधार उचित वर्गीकरण तथा श्रम का उचित विभाजन है। शिक्षक का कक्षा के साथ, कक्षा का कमरे के साथ, छात्रा का पाठ्यवस्तु के साथ तथा शिक्षण विधियों के साथ समायोजन होना और समय का उचित विभाजन - आदि ऐसी बातें हैं जो शैक्षिक प्रबन्ध के स्वरूप बनाने में सहायक हैं।"
5. **लूथर गुलिक के मतानुसार** - "शैक्षिक प्रबन्ध सत्ता का औपचारिक ढाँचा है जिसके अन्तर्गत निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए विभागीय कार्यो को क्रमबद्ध रूप में विभाजन करना, परिभाषित करना तथा समन्वित करना सम्मिलित होता है।"

("Educational Management is the normal structure of authority through which work subdivision are arranged and coordinated for the defined objective.")

6. **जे.डी.मुने के अनुसार** - "सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रत्येक मानवीय संस्था को ही शैक्षिक प्रबन्ध कहा जा सकता है।"

   ("Educational Management is in the form of every human association for the attainment of common purpose.")

7. **एल. एफ. उरविक्र के अनुसार** - "शैक्षिक प्रबन्ध का तात्पर्य किसी भी कार्य अथवा योजना के लिए आवश्यक क्रियाओं का निर्धारण करना तथा उन्हें क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित करके विभिन्न व्यक्तियों को सौंपना है।

   ("Educational Management is the determining of what activities are necessary to any purpose and arranging them in groups which may be assigned to individuals.")

8. **जी. ई. मिलवर्ड के अनुसार** - "प्रबन्ध वह प्रक्रिया तथा एजेन्सी है जिसके माध्यम से नीतियों के क्रियान्वयन का आयोजन तथा पर्यवेक्षण किया जाता है।"

   ("Management is the process and the agency through which the execution of policy is planned and supervised.")

   उपर्युक्त परिभाषाओं के निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि शैक्षिक प्रबन्ध एक सोद्देश्य प्रक्रिया है और इन उद्देश्यों की प्राप्ति करने हेतु मानव दारा योजना निर्मित की जाती है। इस योजना को व्यवस्थित रूप से सम्पादित करने का प्रयास किया जाता है। शैक्षिक प्रबन्ध में नियोजित एवं क्रमबद्ध रूप में कार्य किया जाता है। यह कला एवं विज्ञान दोनों है। यह एक ऐसी कला और सुव्यवस्थित वैज्ञानिक प्रक्रिया है जो किसी संस्था के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति में नेतृत्व, सहायता तथा मार्गदर्शन प्रदान करती है|

7.8 शैक्षिक प्रबन्ध के उद्देश्य (Objective of Educational Management)

शिक्षा राष्ट्र की सांस्कृतिक धरोहर है। यह मूल्यों एवं आदर्शों के संरक्षण का साधन भी है। शिक्षा के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों के आधार पर ही शैक्षिक प्रबन्ध एवं संगठन के उद्देश्य निर्धारित किए जाने अपेक्षित होते हैं। शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति उपयुक्त एवं समुचित शाला प्रबन्ध से ही सम्भव है। शिक्षा का उद्देश्य छात्र की रुचि, योग्यता, क्षमता एवं भविष्य को ध्यान में रखते हुए इस प्रकार शिक्षा देना है कि वह अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास कर सके। विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास करने वाले समस्त भौतिक एवं मानवीय साधन विद्यालय में उपलब्ध होने चाहिए जिससे विद्यालय में सभी शैक्षिक कार्यक्रम एवं सहगामी।

क्रियाएँ प्रभावी ढंग से संचालित हो सके और बालक का सर्वांगीण विकास हो सके।

प्रत्येक विद्यालय की स्थापना से पूर्व उस विद्यालय के उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। विद्यालय का प्रबन्धन करने वालों को विद्यालय के उद्देश्यों को अवश्य ध्यान में रखकर प्रबंधन करना चाहिए। विद्यालय प्रबन्धकों को यह अवश्य प्रयास करना चाहिए कि जो प्रबन्धन किया जा रहा है वह पूर्व

निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति में कहाँ तक सहायक हैं ? इस प्रश्न पर विचार करें कि विद्यालय प्रबन्ध के क्या उद्देश्य होने चाहिए ? विद्यालय प्रबन्धन के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित होने चाहिए -

1. **विद्यार्थियों को शिक्षा प्राप्ति हेतु अनुकूल वातावरण उपलब्ध- करवाना** - किसी भी विद्यालय का प्रथम उदेश्य विद्यार्थियों को समुचित शिक्षा प्राप्त करने के लिए अनुकूल वातावरण उपलब्ध करवाना होना चाहिए। विद्यालय में शिक्षा पाठ्यक्रम के माध्यम से दी जाती है। पाठ्यक्रम के अन्तर्गत कक्षा शिक्षण-अधिगम के साथ ही अन्य अनेक आवश्यक पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन भी होता है। इस पाठ्य सहगामी क्रियाओं के सफल एवं पूर्ण संचालन हेतु विद्यालय में आवश्यक भौतिक एवं मानवीय संसाधन उपलब्ध होने चाहिए जिससे विद्यार्थियों को उत्कृष्ट श्रेणी की शिक्षा प्रदान की जा सके। विद्यालय मे योग्य एवं प्रशिक्षित शिक्षक, सुविधाजनक कक्षा-कक्ष, खेल के मैदान, पुरतकालय, प्रयोगशालाएँ, छात्रावास इत्यादि की समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए जिससे विद्यार्थियों का शैक्षिक एवं सह शैक्षिक विकास सम्यक् रूप से हो सके।
2. **भौतिक एवं मानवीय संसाधनों में समन्वय** - विद्यालय में भौतिक एवं मानवीय संसाधनों की व्यवस्था हो जाने के पश्चात् इन साधनो का आपस में समन्वय स्थापित किया जाना चहिए। इसका तात्पर्य यह है कि यदि विद्यालय में खेल का मैदान उपलब्ध है तो छात्र खेल के मैदान में खेलते हुए दिखाई देने चाहिए। विद्यालय में यदि पुस्तकालय विद्यमान है तो विद्यार्थी पुस्तकालय में अध्ययन करते हुए दिखाई देने चाहिए । इसी प्रकार यदि प्रयोगशाला उपलब्ध है तो विद्यार्थी प्रयोगशाला में प्रयोग करते हुए दिखाई देने चाहिए। शिक्षकों की कक्षा में पर्याप्त मात्रा में छात्रों की संख्या उपलब्ध होनी चाहिए। इस प्रकार विद्यालय में भौतिक एवं मानवीय संसाधनों में समन्वय होना चाहिए।
3. **कर्मचारियों में प्रेम एवं सद्भवना का विकास करना** - उच्च श्रेणी के विद्यालय प्रबन्धन में यह एक ? अहम् मुद्दा है कि विद्यालय में सेवारत विभिन्न श्रेणी के समस्त कर्मचारियों में प्रेम एवं सद्भवना होनी चाहिए। वे आपस में प्रेम एवं विश्वास की भावना रखे। विद्यार्थी से स्वाभाविक रूप से स्नेह करें तथा प्रबन्धकों के प्रति उनमें विश्वास हो। वही विद्यालय अपने उद्देश्यों में सफल होगा, जहाँ सेवारत कर्मचारी एवं शिक्षक समर्पित भाव से कार्य करते हों। परन्तु यह समर्पण भाव कर्मचारियों में तभी जाग्रत होगा जब कर्मचारी वर्ग को यह विश्वास हो जाए कि प्रबन्धक हमारी समस्याओं के प्रति संवेदनशील है। अत: यह कहा जा सकता है कि सफल प्रबन्धन हेतु आवश्यक है कि प्रबन्धक मण्डल, कर्मचारीगण एवं विद्यार्थी में आपस में प्रेम एवं सद्भवना होनी चाहिए।
4. **समय का सदुपयोग करना** - प्रबन्धक मण्डल को यह प्रयास करना चाहिए कि विद्यालय में कार्यरत कर्मचारी एवं शिक्षक अनावश्यक एवं अनुत्पादक कार्य में श्रम, समय एवं शक्ति नष्ट नहीं करे। कर्मचारी कार्य भी करें और उस कार्य में सफलता नहीं प्राप्त हो और कर्मचारी जटिलता से जूझता रहे। यह स्थिति विद्यालय में उत्पन्न नहीं हो यह देखना भी प्रबन्धन का प्रमुख कार्य एवं उद्देश्य है।
5. **मूल्यांकन करना** - प्रबन्धन को अपने कार्यों का समय-समय पर मूल्यांकन अवश्य किया जाना चाहिए । मूल्यांकन जहाँ अपनी उपलब्धियों को रेखांकित करता है वही अपनी सीमाओं एवं कमियों की ओर भी संकेत करता है । इससे आगे के कार्यक्रम एवं भावी

योजनाओं में सहायता प्राप्त होती है। इस सम्बन्ध में यह भी विचार किया जा सकता है कि जो संसाधन विद्यालय में उपलब्ध कराए गए हैं वे विद्यार्थियों को विधाध्ययन के लिए किस सीमा तक अनुकूल एवं उपयुक्त वातावरण प्रदान करने मै सफल हो रहे हैं।

6. **शिक्षकों को व्यावसायिक वृद्धि हेतु अवसर उपलब्ध करवाना** - समय-समय पर शिक्षा में नवाचार होते रहते हैं। शिक्षक को इन नवाचारों से अवगत होना चाहिए। अत: प्रबन्धन को चाहिए कि जो शिक्षक विद्यालय में नियुक्त हैं उन्हें अपनी व्यावसायिक वृद्धि हेतु समुचित अवसर प्रदान करने चाहिए और अवसर आने पर उन्हें व्यावसायिक वृद्धि हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए। क्योंकि यदि शिक्षक नवाचारों से परिचित होंगे और व्यावसायिक दक्ष होंगे तो वे छात्रों का सर्वांगीण विकास करने में अधिक सक्षम होंगे।
7. **संसाधनो का अधिकतम उपयोग करना -** प्रबन्धन को हर समय प्रयासरत रहना चाहिए कि जो संसाधन' विद्यालय में उपलब्ध हैं उनका अधिकतम उपयोग किया जाए औ र यह उपयोग सही रूप में किया जाना चाहिए। सभी साधनों का सही रूप से उपयोग हो और साधनों का दुरुपयोग न हो तथा ऐसी स्थिति उत्पन्न न हो कि इनका उपयोग ही न होता हो तथा जुटाए गए सभी संसाधन निरर्थक प्रमाणित होते हों। यह नियंत्रण भी सफल प्रबंधक हेतु आवश्यक है। अत: प्रबन्धक को यह प्रयास करते रहना चाहिए कि विद्यालय में उपलब्ध सभी संसाधनों का अधिकतम उपयोग हो।
8. **छात्रों के व्यक्तिगत विकास पर ध्यान देना -** छात्रों को शिक्षा प्रदान करते समय उनकी व्यक्तिगत रुचियों, योग्यताओं, क्षमताओं एवं आवश्यकताओं पर ध्यान देते हुए उनका सर्वांगीण (बौद्धिक, शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, चारित्रिक, सामाजिक, नैतिक) विकास करना तथा सभी प्रकार के विद्यार्थियों (प्रतिभाशाली, सामान्य एवं मन्दबुद्धि) का समुचित विकास करना चाहिए।
9. **कार्यकर्ता को योग्यता. क्षमता एवं दक्षता के अनुसार कार्य देना -** प्रबन्धन को अपने विद्यालय / संस्थान में अनेक प्रकार के कार्य कार्यकर्ताओं के माध्यम से करवाने होते हैं अत: प्रबन्धन को यह पता लगा लेना चाहिए कि कौन सा कार्यकर्ता कौन से कार्य में योग्य, सक्षम एवं दक्ष है। इसके पश्चात् ही जो कार्यकर्ता जिस कार्य में योग्य, सक्षम एवं दक्ष है उसे ही वह कार्य प्रदान करना चाहिए जिससे वह कार्य अधिक गुणात्मक एवं कम समय में सम्पन्न हो सकेगा।
10. **छात्रों में सुनागरिकता के गुणों का विकास करना** - विद्यार्थियों में राष्ट्रीय चेतना, राष्ट्रीय एकता एवं अन्तर्राष्ट्रीय सद्भवना, स्वाभिमान, परिश्रम के प्रति उचित दृष्टिकोण का विकास, सहयोगात्मक ढंग से कार्य करने की आदत, नेतृत्व भाव इत्यादि गुणों का विकास करना प्रबन्धन का उद्देश्य होना चाहिए जिससे विद्यार्थियों में सुनागरिकता के गुणों का विकास हो सकेगा।
11. **छात्र एवं समाज केन्द्रित शिक्षण एवं योजना** - विद्यालय एवं प्रबन्धन का मुख्य केन्द्र छात्र एवं समाज होता है। अत: प्रबन्धन को चाहिए कि विद्यालय में आयोजित की जाने वाली प्रत्येक गतिविधियों / योजना, पाठ्यक्रम निर्माण सभी छात्र एवं समाज की आवश्यकताओं के अनुसार ही सम्पादित किए जाने चाहिए। पाठ्यक्रम को शिक्षा का साधन मानना चाहिए। अत: पाठ्यक्रम छात्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर

लचीला बनाना चाहिए । विद्यालय को 'समुदाय केन्द्रित' (Community) बनाना तथा छात्रों में सामुदायिक भावना का विकास करना चाहिए।

12. **कार्यकर्ताओं की सन्तुष्टि -** प्रत्येक संस्था ? विद्यालय का विकास कार्यकर्ताओं के द्वारा ही सम्भव होता है। अत: प्रबन्धन द्वारा ऐसा वातावरण प्रदान करना चाहिए कि विद्यालय / संस्था में कार्यरत प्रत्येक कार्यकर्ता सन्तुष्ट हो सके । क्योंकि कार्यकर्ता की सन्तुष्टि के फलस्वरूप ही विद्यालय का समुचित विकास हो सकता है।

इस प्रकार संक्षेप में यह कहा जाना प्रसंगोचित रहेगा कि शैक्षिक प्रबन्धकों को शाला प्रबन्ध के उद्देश्य एवं उनको पूरा करने के सम्बन्ध में बहुत निश्चित एवं स्पष्ट होना आवश्यक है। इन उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिए विद्यालय प्रबन्धकों को कुछ आवश्यक एवं अपेक्षित क्रियाएं की जानी चाहिए।

7.9 शैक्षिक प्रबन्ध की आवश्यकता एवं महत्व (Need and Important of Educational Management)

शिक्षण संस्थाओं तथा अन्य औधोगिक क्षेत्रों में हड़तालें एवं अनुशासनहीनता '-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। शिक्षा के क्षेत्र में बढता हुआ विनियोजन सार्थक नजर नहीं आ रहा हे। निरन्तर बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार, अनैतिक प्रतियोगिता तथा अपव्यय जैसी समस्याएँ हमारे सामने हैं । समस्याओं से छुटकारा प्राप्त करना आवश्यक है और इन समस्याओं से छुटकारा प्राप्त करने हेतु –हमे कुशल प्रबन्धन की आवश्यकता होती है । भारत जैसे विकासशील देश में शिक्षा जगत के लिए कुशल प्रबन्ध अति महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि **कोठारी शिक्षा आयोग** (1964-66) के अनुसार, "भारत का भविष्य कक्षाओं में निर्मित हो रहा है। उक्त शब्दों में गणतंत्र के लिए योग्य नागरिक तैयार करने में संस्थाओं के कुशल प्रबन्ध का महत्त्व स्वीकार किया गया है। जिसके द्वारा विद्यालयों में अनुकूल ' निर्मित कर "शैक्षिक उद्देश्यों की सम्प्राप्ति' करने में सहायता मिलती है। किसी विद्यालय की उसके 'प्रबन्धन' एवं 'व्यवस्था' पर निर्भर है अत: लाभकारी एवं प्रभावपूर्ण शिक्षा के लिए 'शैक्षिक प्रबन्ध ' या संगठन अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षा के निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए शैक्षिक प्रबन्ध की अत्यन्त आवश्यकता है । विद्यालय की साज-सज्जा, पठन सामग्री एवं उपकरण की व्यापकता, समय विभाग चक्र के उचित संचालन, शिक्षकों के कार्य के नियंत्रण में शैक्षिक प्रबन्ध की आवश्यकता महसूस होती है।

पीटर एफ. ड्रकर (Peter F.Drucker) ने प्रबन्धन के-महत्त्व के संदर्भ ' कहा है कि- "प्रबन्ध प्रत्येक उपक्रम का गतिशील एवं जीवनदायक तत्त्व होता है।" **(Management is the dynamic and life giving organ of the enterprisese's body)** इसके बिना साधन केवल साधन। ही रह जाते हैं और वे कभी उत्पादक नहीं बन पाते। प्रबन्धन शैक्षिक संगठन को बल प्रदान करता है,? उसे संचालित करता है, नियंत्रित करता है। प्रबन्धन के माध्यम से ही अव्यवस्थित साधनों को व्यवस्थित किया जा सकता है, कमजोर कडियों को मजबूत बनाया जा सकता है और नवीन तकनीकी तथा विधियों के माध्यम से उद्देश्यों को पूरा किया जा सकता है। इन्हीं कारणों से शैक्षिक प्रबन्ध का महत्त्व उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है। शैक्षिक प्रबन्ध के महत्त्व को निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर समझा जा सकता है-

1. **मानवीय संसाधनों का विकास करने में सहायक -** शैक्षिक प्रबन्ध ?एक मानवीय क्रिया है। किसी न किसी रूप में प्रबन्ध की सभी क्रियाएँ मानव व्यवहार से ही सम्बन्धित होती है ?हैं। कुशल प्रबन्धक निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए योग्य व्यक्तियों का चयन करते हैं, उन्हें अपेक्षित प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। उनकी व्यक्तिगत क्षमताओं को पहचान कर उन्हें कार्य का आवंटन करते है। उनकी समस्याओं का निराकरण करते हैं तथा उन्हें विकास के अवसर एवं प्रेरणा प्रदान करते हैं। इस प्रकार मानव संसाधनों के विकास में प्रबन्ध का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है।
2. **शिक्षा के निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक -** प्रबन्धन शैक्षिक संगठन का अनिवार्य अंग है। कुशल प्रबन्धन के द्वारा ही शिक्षा के निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है नेतृत्वकारी अपने नेतृत्वकारी कार्यों के द्वारा इकाई के समस्त साधनों, कर्मचारियों और क्रियाओं इस प्रकार सम्बन्धित एवं नियोजित करता है जिससे निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वे सब एक साथ मिलकर प्रयत्नशील हो जाते हैं। ' फलस्वरूप पूर्व योजनानुसार लक्ष्य की प्राप्ति निर्धारित समय में सम्भव होती है।
3. **न्यूनतम साधनों से श्रेष्ठतम परिणामों की प्राप्ति में सहायक** - प्रबन्ध एक ऐसी शक्ति है जिसके द्वारा कम समय, धन एवं श्रम का उपयोग करके अधिकतम उपलब्धियॉ प्राप्त की जा सकती हैं। साधनों के मितव्ययता पूर्ण उपयोग द्वारा वांछित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है। भारत जैसे विकासशील देश के लिए यह और जरूरी है कि सीमित साधनों का विवेकपूर्ण उपयोग हो ताकि इससे श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त हो सके।
4. **शैक्षिक समस्याओं का समाधान करने में सहायक -** किसी भी उपक्रम अथवा शैक्षिक संस्थान में अधिकारियों, कर्मचारियों तथा श्रमिकों अथवा विद्यार्थियों के रचनात्मक सहयोग के बिना किसी भी कार्य का संपादन करना कठिन होता है। एक अच्छा एवं कुशल शैक्षिक प्रबन्धक इस सहयोग को सरलता से प्राप्त कर लेता है। तत्पश्चात् दोनों ही एक-दूसरे के माध्यम से अपने-अपने हितों को पूरा करने की चेष्टा करते हैं। प्रबन्धक अपने कर्मचारियों की समस्याओं का समाधान करता है। यदि वह हल नहीं कर पाता है तो उस पर उचित कार्यवाही करके सन्तुष्टि प्रदान करता है।
5. **विभिन्न कारकों में समन्वय में सहायक** - किसी भी निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति में यदि एक से अधिक कारक सम्मिलित होते हैं तो उन सभी कारकों में परस्पर समन्वय आवश्यक होता है। शिक्षा एक ऐसा सामूहिक प्रयास है जो अनेकानेक कारकों से प्रभावित होता है। मानवीय कारकों में समन्यय न हो तो शिक्षा के उद्देश्य प्राप्त होना असंभव है। प्रबन्ध इन सभी में समन्वय स्थापित करता है।
6. **वैज्ञानिक तथा तकनीकी आविष्कार का उपयोग करने में सहायक** - भारत देश में उत्तरोत्तर वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास होता दिखाई दे रहा है। भारत विकसित राष्ट्रों के समान स्थान प्राप्त करने का प्रयास कर रहा है। इसी के अनुसार भारत की शिक्षा प्रणाली में पाठ्यक्रम, उद्देश्य, शिक्षण प्रणालियों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन हुए । खुले विश्वविद्यालय, खुले विद्यालय (Open School), शैक्षिक अवसरों की समानता, सारे देश के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति तथा दूरवर्ती शिक्षा कार्यक्रम आदि शैक्षिक आविष्कार का ही परिणाम है। शिक्षा के उद्देश्यों को प्रभावशाली ढंग से प्राप्त करने हेतु तकनीकी का प्रयोग

शैक्षिक परिस्थितियों में किया जाना चाहिए । शिक्षण तकनीकी, सूचना तकनीकी एवं प्रणाली विश्लेषण आदि के उपयोग से शिक्षण प्रक्रिया को रोचक एवं आकर्षक बनाया जा सकता है । शैक्षिक प्रबन्ध का यह दायित्व है कि वह तकनीकी प्रयोग एवं दक्षता उत्पन्न करने का प्रयास, करें ।

7. **उद्देश्यों तथा नीतियों के निर्धारण में सहायक** - प्रत्येक संस्था के जीवन में उद्देश्य का बड़ा महत्व होता है । लक्ष्य विहीन संस्था पथभ्रष्ट राही के समान निरर्थक प्रयास करती है । प्रबन्ध द्वारा संस्था की प्रत्येक इकाई का लक्ष्य निर्धारित किया जाता है । उसी के द्वारा इकाई की मूलभूत नीतियों का निर्माण किया जाता है ।
8. **शैक्षिक उत्पादन की गुणवत्ता में सहायक** - नियोजित विकास के द्वारा ही शैक्षिक उत्पादन की गुणवत्ता में वृद्धि की जा सकती है तथा यह दायित्व शैक्षिक प्रबन्ध पर आता है कि वह उपलब्ध परिस्थितियों में, सुनियोजित तरीके अपनाकर शैक्षिक उत्पादन की गुणवत्ता बढाने का प्रयास करे ।
9. **व्यक्तियों की योग्यता के विकास में सहायक** – विद्यालय की अधिकांश गतिविधियाँ मानवीय । व्यवहार से संबंधितहोती है । प्रबन्ध व्यक्तियों की कार्यकुशलता एवं कार्यक्षमता में वृद्धि करता है और सर्वांगीण विकास करता है । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि व्यक्तियों के विकास में प्रबन्ध का महत्त्वपूर्ण स्थान है ।
10. **विभिन्न शैक्षिक क्रियाओं के समन्वय में सहायक** - शिक्षा के क्षेत्र में अव्यवस्था एवं अपव्यय को रोकने हेतु शैक्षिक क्रियाओं का समन्वय आवश्यक है। शैक्षिक प्रबन्धक एवं प्रशासक सरकार के नियम एवं कानून की क्रियान्विति में भेदभाव नहीं करते और कर्मचारियों के सभी कार्यों का समन्वय इस प्रकार करते हैं कि शैक्षिक कार्यक्रमों में बाधा नहीं आए । हमें अपने शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न शक्तियों को एकत्रित कर उनमें प्रभावी समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए जिसके व्यक्तियों की कार्यक्षमता में वृद्धि की जा सके । चहुंमुखी व्यक्तित्व के विकास के लिए विभिन्न।' शैक्षिक क्रियाओं का समन्वय बहुत आवश्यक है ।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि शैक्षिक जगत में प्रबन्ध का महत्वपूर्ण योगदान होता है । प्रभावी शैक्षिक प्रबन्ध व्यवस्था के बिना आज कोई भी राष्ट्र व समाज प्रतियोगिता वर्तमान युग में सफल नहीं हो सकता है । शैक्षिक प्रबन्ध शिक्षा का महत्त्वपूर्ण अंग है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती ?

7.10 शैक्षिक प्रबंध की तकनीकियाँ

प्रबंध की तकनीकों से आशय उन विधियों से हैं जो किसी संगठन का प्रबंध एवं संचालन करते समय प्रबंध द्वारा काम में लायी जाती हैं। ये प्रबंधकीय तकनीकें प्रबंध कार्य को अधिक प्रभावी बना देती हैं। प्रबंधकों द्वारा इन तकनीकों का प्रयोग करने से कार्य संचालन निर्बाध गति से हाता है और कार्य में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न नहीं होती है। प्रबंध की प्रमुख तकनीकें निम्नलिखित हैं -

1- **अधिकार -** शैक्षिक संगठन के प्रबंधकों के पास अधिकार सत्ता होती हैं। अधिकार सभी प्रबंधकीय कार्यों की कुंजी है। अधिकार एक ऐसी शक्ति हैं जिनके माध्यम से अधिकारी या प्रबंधक संस्था के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अपने अधीनस्थों अन्य साधनों का आवश्यकतानुसार प्रयोग करता है। अधिकार शक्ति के आधार पर ही एक प्रशासक निर्णय

लेता हैं और अपने अधीनस्थों से उन निर्णयों को कार्यान्वित कराता है। यह अधिकार सत्ता सामान्यतया किसी पद से जुड़ी हुई होती है।

2- **नेतृत्व -** नेतृत्व शैक्षिक प्रबंधक की प्रभावपूर्ण तकनीक है जिसके माध्यम से एक शैक्षिक प्रबंधक अपने अधीनस्थों का कार्य संचालन के संबंध में सहयोग प्राप्त करता है। नेतृत्व शैक्षिक प्रशासक या प्रबंधक का व्यक्तिगत गुण हाता है जिसके द्वारा वह अन्य व्यक्तियों के मार्गदर्शन का कार्य करता है। नेता के रूप में शिक्षा अधिकारी अपने अधीनस्थों की क्रियाओं का संचालन करता है। प्रबंधकीय तकनीक के रूप में नेतृत्व से आशय अधिकारी वर्ग की उस क्षमता से है जिसके माध्यम से वह लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अन्य लोगों की क्रियाओं को प्रभावित करता है।

चेस्टर आई.बनोर्ड के अनुसार, नेतृत्व का आशय व्यक्ति के व्यवहार के उस गुण से हैं जिसके द्वारा वह अन्य लोगों का संगठित प्रयास से संबंधितकार्य करने में मार्गदर्शन करता है। नेतृत्व के अन्तर्गत एक अधिकारी या प्रबंधक निम्न कार्य करता है -

1- संगठन में संदेशवाहक की व्यवस्था करना,
2- विभिन्न व्यक्तियों से आवश्यक कार्य कराना
3- अपने समूह के सदस्यों का मार्गदर्शन करना,
4- संगठन के उद्देश्य एवं लक्ष्य निर्धारित करना, तथा?
5- संगठन में अनुशासन बनाये रखना

3- **नियंत्रण -** नियंत्रण वह तकनीक हैं जिसके माध्यम से शिक्षा प्रबंधक या प्रया ासक संगठन के निर्धारित उद्देश्यों को पूरा कराता है। नियंत्रण कार्य संचालन में संगठन के व्यक्तियों की जिम्मेदारी निश्चित करने की प्रक्रिया है।

नियंत्रण प्रक्रिया के निम्नलिखित चार चरण होते हैं -

1- संगठन या कर्मचारियों के लिए लक्ष्यों एवं प्रमापों को निर्धारित करना।
2- कर्मचारियों द्वारा किये जाने वाले कार्यो को पूर्वनिर्धारित प्रमापों के संदर्भ में मूल्यांकन करना
3- प्रमापों से कार्य के विचलनों के कारणों को ज्ञात करना
4- सुधारात्मक कार्यवाही करना।

4. **पर्यवेक्षक -** पर्यवेक्षक वह शैक्षिक प्रबंधकीय तकनीक है जिसके माध्यम से शिक्षा प्रशासक संगठन में संचालित की जाने वाली क्रियाओं की देख रेख करता है। सामान्यतया लोग पर्यवेक्षक को निरीक्षण कह देते हैं, परन्तु पर्यवेक्षक से आशय एक ऐसी क्रिया से है जिसके अन्तर्गत एक अधिकारी अपने अधीन काम करने वाले कर्मचारियों के कार्यों का निरीक्षण करता है तथा उनको आवश्यक परामर्श एवं मार्गदर्शन प्रदान करता है।

मागरेट विलियम्स के अनुसार, ‘‘पर्यवेक्षक एक ऐसी क्रिया है जिसमें स्टाफ का एक निश्चित सदस्य (अधिकारी) शैक्षिक कर्मचारियों को आवश्यकतानुसार काम सीखने अपने ज्ञान और कुशलता का अच्छे से अच्छा प्रयोग करने तथा उनकी योग्यताओं में सुधार करने का प्रयास करता है, ताकि वे अपने कार्य को अधिक प्रभावशाली रूप में तथा स्वयं और संस्था के संतोष के साथ सम्पन्न कर सकें । शैक्षिक पर्यपेक्षक कर्मचारियों की कार्यकुशलता को बढ़ाने में सहायक होता है।

5. **केन्द्रीकरण एवं विकेन्द्रीकरण -** निर्णय लेने, नीति निर्धारण तथा अन्य प्रबंधकीय कार्यों को सम्पन्न करने के लिए शिक्षा प्रबंधकों के अधिकारों का आवश्यकतानुसार केन्द्रीकरण एवं विकेन्द्रीकरण किया जाता है। अधिकार केन्द्रीकरण से आशय उस स्थिति से जिसमें उपक्रम या संगठन किये जाने वाले कार्योग् को करने के लिए निर्णय लेने का अधिकार उच्च अधिकारी के पास रहता है। केन्द्रीकरण के अन्तर्गत निर्णय लेने का काम उच्च अधिकारी करता है और अधीनस्थों को उन निर्णयों को लागू करना होता है।

विकेन्द्रीकरण से आशय उच्च अधिकारियों द्वारा अपने अधिकार एवं दायित्व स्थायी आधार पर अधीनस्थों को प्रत्यायोजित कर दिया जाना है। विकेन्द्रीकरण के अन्तर्गत नैत्यक कार्यों के संबंध में अधिकारों को अधीनस्थों को सौंपा जाता है ताकि उच्च अधिकारी महत्वपूर्ण निर्णयों पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सकें और संगठन का काम भी सुचारू रूप से चलता रहे।

6 **अधिकार प्रत्यायोजन -** अधिकार प्रत्यायोजन के अन्तर्गत उच्च अधिकारी अपने अधीनस्थों को निदिष्ट सीमाओं के अन्तर्गत कार्य करने संबंधी अधिकारी सौंपते हैं। अधिकार प्रत्यायोजन में अस्थायी रूप से अधीनस्थों को अधिकार दिए जाते हैं, जबकि विकेन्द्रीकरण के अन्तर्गत स्थायी रूप से अधीनस्थों को अधिकार प्रदान किए जाते हैं। अधिकार प्रत्यायोजन से उच्च अधिकारियों के कार्यभार में कमी आती है तथा संगठन की कार्यकुशलता में वृद्धि होती है।

7. **सम्प्रेषण -** सम्प्रेषण या संचार भी प्रबंध का एक महत्वपूर्ण कार्य एवं तकनीक माना जाता है। सम्प्रेषण के द्वारा संगठन में कार्यरत विभिन्न स्तर के शैक्षिक अधिकारियों एवं कर्मचारियों के बीच विचारों तथा सूचनओं का आदान प्रदान होता है। सम्प्रेषण के माध्यम से शिक्षा प्रबंधकआदेश एवं निर्देश कर्मचारियों तक पहुंचाते हैं तथा कर्मचारी अपनी समस्याएं, प्रतिक्रियाएं एवं सुझाव प्रबंधकों तक पहुंचाते हैं। सभी प्रकार के संगठनों में प्रभावशाली एवं खुले सम्प्रेषण का विशेष महत्व होता है। यही कारण है कि आजकल संगठन में सम्प्रेषण प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। प्राय: शैिक्षक संगठनों में लिखित तथा मौखिक दोनों ही प्रकार का सम्प्रेषण होता है। संगठन की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए सम्प्रेषण रेखाओं का पहले से ही निर्धारण कर दिया जाता है। सम्प्रेषण संगठन के कार्य संचालन में आने वाली बाधाओं को दूर करता है।

8. **समन्वय -** शैक्षिक संगठन के अलग अलग कर्मचारियों, विभागों तथा कर्मचारी समूहें की क्रियाओं में इस प्रकार से सामंजस्य स्थापित करना कि वे संगठन को न्यूनतम लागत पर अधिकतम परिणामों की प्राप्ति करा सके, समन्वय कहलाता है। समन्वय के अन्तर्गत संगठन में व्याप्त विभिन्न प्रकार की विभिन्नताओं को समाप्त कर लोगों के दृष्टिकोण एवं व्यवहार तथा प्रयासों में एकरूपता स्थापित की जाती है। समन्वय प्रबंध का सार तत्व है, क्योंकि उपक्रम में जो भी कार्य सम्पन्न किये जाते हैं,

वे विभिन्न विभागों द्वारा दिये जाते हैं। समन्वय इन विभिन्न विभागों की क्रियाओं में सामंजस्य बनाए रखता है ताकि कार्यों को दोहराव न हो तथा कोई कार्य बिना हुआ न रहे। समन्वय से कर्मचारियों का मनोबल बढ़ता है और संगठन की कुल उपलब्धियों में वृद्धि होती है।

9 **जन संपर्क -** कोई भी संगठन अकेला काम नहीं कर सकता है। संगठन का बाहरी व्यक्तियों, अन्य संगठनों, सरकार तथा समाज से संस्थाओं एवं संगठनों को सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना पड़ता है। प्रशासन में जनसम्पर्क के माध्यम से जनभावनाओं को ज्ञात किया जाता है। जनसामान्य में प्रशासन द्वारा किये जाने वाले कार्यों के बारे में जनचेतना जागृत की जाती है तथा प्रशासन द्वारा किये गए कार्यों की जानकारी भी दी जाती है।

7.11 शैक्षिक प्रबन्ध के सिद्धान्त (Principles of Educational Management)

सिद्धान्तों का ज्ञान प्रबन्धकों एवं प्रशासकों को बदलती परिस्थितियों से मुकाबला करने के लिए एवं समस्याओं के समाधान में सहायक होता है । प्रसिद्ध प्रबन्ध शास्त्री 'फ्रेडरिक विन्सलो टेलर' ने प्रबन्धकीय प्रक्रिया पर विचार व्यक्त किए हैं कि ' 'प्रशासन का मुख्य कार्य दक्षता प्राप्त कर इस प्रकार से कार्य करना है जिससे अधिकाधिक उत्पादन हो । उनके अनुसार किसी भी संगठन की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि प्रशासक अपने कार्मिकों से कार्य किरन प्रभावपूर्ण ढंग से करवाए कि थोड़े समय एवं अल्प व्यय में अधिक उत्पादन प्राप्त हो सके । " इसका तात्पर्य न्यूनतम साधनों के अधिकतम उपयोग से है । इसके अन्तर्गत न्यूनतम साधनों के अधिकतम उपयोग द्वारा अधिकतम उत्पादन का प्रयास किया जाता है । इस हेतु प्रबंधक को मात्र अनुभव से नहीं वरन् नवीन सिद्धान्तों से परिचित होना आवश्यक है ताकि वह परिस्थिति के अनुसार सिद्धान्तों का प्रयोग कर सके । एक? कुशल प्रबंधक को प्रशिक्षण की अनिवार्यत: आवश्यकता होती है । एक प्रबन्धक को निम्नलिखित सिद्धान्तों का ज्ञान होना आवश्यक है-

1. **कार्य का विभाजन (Division of Work) -** इसे विशिष्टीकरण का सिद्धान्त (Principle Of Specialization) या श्रम विभाजन का सिद्धान्त के नाम से भी जाना जाता है । इस सिद्धान्त का आधार योग्यता एवं दक्षता के अनुसार व्यक्ति को कार्य सौंपने से है । इस सिद्धान्त के अनुसार प्रबन्धक सर्वप्रथम यह पता लगाता है कि कौनसा व्यक्ति किस कार्य में योग्य एवं दक्ष है । तत्पश्चात् जो व्यक्ति जिस कार्य में योग्य एवं दक्ष होता है उस व्यक्ति को प्रबंधक वही कार्य आवंटित करता है । कार्य के विभाजन के आधार पर उपयुक्त कार्य के लिए उपयुक्त व्यक्ति की नियुक्ति करके अधिक गुणात्मक एवं मात्रात्मक कार्य कराया जा सकता है क्योंकि कार्य विभाजन के द्वारा ही कार्य में कुशलता एवं विशिष्टता आती है और कर्मचारी अपने कार्य में अधिक कार्यकुशल होते हैं ।
2. **आदेश की एकता (Unity of Command)** - आदेश की एकता से तात्पर्य है किसी कार्य विशेष को करने के लिए किसी एक समय में एक ही अधिकारी द्वारा आदेश प्रदान किया जाए । इस सिद्धान्त के अनुसार कार्यकर्ता जब एक ही अधिकारी के नेतृत्व में कार्य करते हैं तभी आदेश की एकता सफल हो पाती है । यह सभी संगठनों के लिए आवश्यक हो जाता है कि प्रत्येक कार्यकर्ता एक ही अधिकारी से आदेश प्राप्त करे । एक ही व्यक्ति को यदि एक ही समय में एक से अधिक अधिकारी आदेश देंगे तो वह अपने सभी अधिकारियों द्वारा प्रदत्त आदेशों की पालना नहीं कर पाएगा । ऐसी स्थिति में संगठन में हर तरफ भ्रान्ति की स्थिति उत्पन्न होगी । परिणामस्वरूप कभी-कभी कर्मचारियों में अशान्ति, असन्तोष एवं अनुशासनहीनता की भावना भी पैदा हो जाती है । अत: प्रबन्धन को चाहिए कि आदेश की एकता रखे ।

3. **अधिकार एवं उत्तरदायित्व (Authority and Responsibility) -** अधिकार एवं उत्तरदायित्व एक ही किया के दो पहलू हैं। अधिकार एवं उत्तरदायित्व सहगामी हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार प्रबन्धन द्वारा यदि किसी व्यक्ति को किसी प्रदत्त कार्य के परिणामों के लिए उत्तरदायी बनाया जाता है तो उसे यह अधिकार भी प्रदान करना चाहिए कि उस कार्य की सफलता के लिए जो भी कदम आवश्यक हों वह उठा सके । अधिकार उत्तरदायित्व के अनुरूप हो और उत्तरदायित्व अधिकार के अनुरूप हों। अधिकार एवं उत्तरदायित्व सौंपने से कार्यकर्ताओं की कार्यकुशलता में प्रभावोत्पादकता आती है।
4. **समय का अध्ययन (Study of Time) -** प्रबन्धक द्वारा किसी भी कार्य को कार्यकर्ताओं के मध्य आवंटित करने से पूर्व अपने आप में यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि अमुक कार्य को पूर्ण करने में न्यूनतम कितना समय लगेगा। इस समय सीमा का ज्ञान होने के पश्चात् ही उस कार्य को कार्यकर्ताओं के मध्य आवंटित करना चाहिए तथा कार्यकर्ताओं के लिए इस कार्य को पूर्ण करने के लिए समय सीमा निर्धारित कर लेनी चाहिए। साथ ही प्रबंधक को कार्य की प्रगति के विषय में समय-समय पर कार्यकर्ताओं से जानकारी प्राप्त करते रहना चाहिए।
5. **अनुशासन का सिद्धान्त (Principle of Discipline) -** शैक्षिक '_प्रबन्ध में यह सिद्धान्त महत्वपूर्ण है। फेयोल महोदय ने इस विषय में बताया है कि - "अनुशासनहीनता हक अपराध है जो अकुशल नेतृत्व का परिणाम है ।" (Bad discipline is an evil which usually comes from bed leadership) वर्तमान समय में शिक्षा जगत् में अनुशासनहीनता दिखाई दे रही है । उसका मुख्यतम कारण संस्था प्रधानों का सही नेतृत्व नहीं होना है । शिक्षकों एवं विधार्थियों में नियम पालन एवं कर्त्तव्यपरायणता की भावना में उत्तरोत्तर कमी दिखाई दे रही है। उसके पीछे मुख्य कारण अनुशासनहीनता ही है और इस अनुशासनहीनता के पीछे मुख्य कारण कर्तव्यपरायणता एवं नियम पालन में कमी आना है। अत: शैक्षिक प्रबन्धक को चाहिए कि वह अपनी संस्था में नियम पालन एवं कर्त्तव्य परायणता के द्वारा अनुशासन बनाए रखे।
6. **उद्देश्यों का सिद्धान्त (Principle of Objectives) -** किसी भी संस्था की स्थापना के पीछे कुछ उद्देश्य निहित होते हैं। इस संस्था / संगठन की प्रत्येक क्रिया इन की पूर्ति हेतु की जानी चाहिए। संगठन की प्रत्येक इकाई को उपक्रम संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति में योगदान प्रदान करना चाहिए। परन्तु संगठन को भी अपने उद्देश्यों में अपने आपको स्पष्ट होना चाहिए । प्रबन्धक को अपने कार्यकर्ताओं को इन उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए कार्य करने हेतु मार्गदर्शन प्रदान करना चाहिए जिससे सभी उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके।
7. **नियोजन का सिद्धान्त (Principle of Planning) -** कोई भी कार्य जितना योजनाबद्ध तरीके से किया जाता है वह कार्य उतना ही सफल एवं-श्रेष्ठ परिणाम देने वाला होता है। श्रेष्ठ नियोजन श्रेष्ठ प्रबन्ध की पूर्व आवश्यकता है । इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक कार्य पूर्व निर्धारित नियोजन के अनुसार होना चाहिए। नियोजन करते समय उपलब्धियों, उपलब्ध साधनों एवं भावी परिस्थिति का पूरा ध्यान रखना चाहिए। सत्र प्रारम्भ होने से पूर्व ही विद्यालय में शैक्षिक कार्य, वित्त कार्य स्टाफ की व्यवस्था आदि की योजना बना लेनी चाहिए ताकि सत्रारम्भ के प्रथम दिवस से ही नियमित रूप से कार्य प्रारम्भ किया जा सके।
8. **सामुदायिक हितों के लिए व्यक्तिगत हितों का समर्पण (Subordination of Individual Interest of Group Interest) -** यद्यपि कुशल प्रबन्धकों को व्यक्तियों हितों

एवं सामुदायिक हितों के मध्य समन्वय करते हुए प्रबन्धन करना चाहिए। परन्तु यदि कहीं ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाए जिसमें 'किंकर्त्तव्यमूढ वाली स्थिति बनती हो वहाँ व्यक्तिगत हितों की अपेक्षा, हितों को प्राथमिकता देना चाहिए। यह सामाजिकता एवं त्याग की भावना से ही संभव हो सकता।

9. **निर्देशन की एकता (Unity of Disoction) -** प्रबन्धन के किसी एक घटक के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु क्रियाओं के एक समूह का संचालन एक ही व्यक्ति द्वारा किया जाना चाहिए। इसके लिए कार्य योजना भी एक ही होनी चाहिए। आदेश की एकता कार्यकर्ताओं के निर्देशन से संबधित होती है। जबकि निर्देशन की एकता सम्पूर्ण संस्था के दिशा बोध से संबंधितहोती है। इस सिद्धान्त के अनुसार सम्पूर्ण दिशा बोध एक ही व्यक्ति के हाथ में देना चाहिए जिससे निर्धारित उद्देश्यों की सही! ढंग से प्राप्ति हो सके।
10. **समानता के व्यवहार का सिद्धान्त (Principle of Equity of Behaviour)** - इस सिद्धान्त का तात्पर्य है प्रबन्धक को अपने अधीन कार्य करने वाले सभी कर्मचारियों के साथ समानता एवं निष्पक्ष भाव से व्यवहार करना चाहिए जिससे कार्यकर्ताओं के मध्य आपस में सहयोग एवं सद्भभवना बनी रहे। साथ ही कार्यकर्ताओं की प्रबन्धक के प्रति भी सहयोग एवं सद्भभवना बनी रहे। इसमे कार्यकर्ताओं का मनोबल बढ़ता है जिसके परिणामस्वरूप वे स्वेच्छा से अधिकाधिक कार्य करने के लिए प्रेरित हो उठते हैं।
11. **पहल का सिद्धान्त (Principle of Initiative)** - पहल का सिद्धांत से तात्पर्य है कार्यकर्ताओं तथा अधिकारियों को किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने प्रस्तावित करने और उसको क्रियान्वित करने की स्वतंत्रता देने से है। कार्यकर्ताओं को कार्य करने एवं क्रियान्वित करने ?? स्वतंत्रता देने से उनमें आत्मविश्वास, उत्साह तथा कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। अत: को अपने कार्यकर्ताओं एवं अधिकारियों के लिए स्वतंत्रतापूर्वक कार्य निष्पादन करने का वातावरण प्रदान करना चाहिए।
12. **पदाधिकारी सम्पर्क का सिद्धान्त (Principle of Sealer Chain)** - पदाधिकारी सम्पर्क शृंखला से तात्पर्य संगठन के उच्चतम अधिकारियों से लेकर निम्नतम स्तर के अधिकारियों के मध्य संचार शृंखला से है। ऐयोल महोदय का इस सन्दर्भ में कहना है कि सभी पदाधिकारियों के मध्य सीधा सम्पर्क हो ताकि इससे कार्य के दुहराव को रोका जा सकता है और कार्य के पूरा होने वाले विलम्ब को भी समाप्त किया जा सकता है। प्राय: एक फाईल नीचे के स्तर से उच्च अधिकारी तक पहुँचने तथा फिर उसी स्तर तक उस फाईल के आने में काफी समय व्यतीत हो जाता है। यदि संबधित अधिकारी सीधा उच्च अधिकारी से मिले तो इस कार्य को शीघ्र पूरा किया जा सकता है।
13. **कर्मचारियों में स्थायित्व का होना (Stability of Tenure of Personnel)** - किसी भी संस्थान में अस्थायी कर्मचारी ज्यादा लाभप्रद सिद्ध नहीं हो पाते हैं। शैक्षिक शोध के ऑकड़े बताते हैं कि स्थायी कर्मचारियों की संस्था के प्रति प्रतिबद्धता अस्थायी कर्मचारियों की तुलना में अधिक पाई जाती है। अस्थायी कर्मचारी स्थायित्व के बिना नौकरी समाप्त होने की शंका से भयभीत रहते हैं। इस भय के कारण वे संस्थान के प्रति कर्त्तव्यनिष्ठ होकर कार्य नहीं कर पाते हैं। अत: प्रबंधक को अपने संस्थान में योग्य एवं कुशल कार्यकर्ताओं को यथाशीघ्र स्थायित्व प्रदान

कर देना चाहिए जिससे कार्यकर्ता मन लगाकर समर्पित भाव से कार्य कर सकेंगे जिसके फलस्वरूप संस्थान को फायदा होगा।

14. **केन्द्रीकरण का सिद्धान्त (Principle of Centralization)** - इस सिद्धान्त से तात्पर्य यह है कि प्रबंधक को प्रबन्ध से संबंधितकुछ अधिकारों एवं शक्तियों को अपने पास सुरक्षित रखना चाहिए। प्रबन्ध कार्यों (नियोजन, संगठन, निर्देशन, समन्वय और नियंत्रण) के अधिकार एवं शक्तियाँ संस्था प्रधान के हाथ में ही होने चाहिए। किन्तु यह उसी सीमा तक होनी चाहिए जिससे संस्था के विधार्थियों को वह अधिनायकवादी महसूस नहीं हो।
15. **समन्वयन का सिद्धान्त (Principle of co-ordination)** - संस्था के विकास में सभी कार्यकर्ताओं एवं श्रमिकों विधार्थियों में समन्वय (Co-ordination) बहुत आवश्यक है। इस संदर्भ में एच. फेयोल का कथन है कि, ' 'किसी संस्था के कार्य-संचालन को सुविधाजनक एवं सफल बनाने के लिए उसकी समस्त क्रियाओं में सामंजस्य स्थापित करना ही समन्वय है। 'संस्था प्रधान द्वारा शिक्षकों एवं विधार्थियों की समस्त गतिविधियों में समन्वय अर्थात् तालमेल एवं एकता बनाए रखना वांछनीयहै जिससे शैक्षिक लक्ष्यों को स्पष्टता से प्राप्त किया जा सके।
16. **कर्मचारियों के पारिश्रमिक का सिद्धान्त (Principle of Remuneration of Personnel)** - इस सिद्धान्त के अनुसार कार्यकर्ताओं को वेतन लाभांश के समानुपात में दिया जाना चाहिए। अर्थात् संगठन जितना अधिक लाभार्जन करे उसी अनुरूप कार्यकर्ताओं को वेतन मिलना चाहिए। इस प्रकार दिया जाने वाला पारिश्रमिक एवं भुगतान न्याययुक्त एवं संतोषजनक होना चाहिए। पारिश्रमिक नियोक्ता तथा कार्यकर्ताओं दोनों की दृष्टि से उचित होना चाहिए अन्यथा संस्था में तनाव की स्थिति उत्पन्न होने की संभावना रहती है। अत: प्रबन्धक को इस सिद्धान्त का पूरा पालन करना चाहिए ताकि कार्यकर्ता अपने कार्य को पूर्ण रुचि, क्षमता एवं लगन से कर सके। इस सिद्धान्त के पालन से कार्यकर्ताओं में कार्य करने के प्रति उत्साह बना रहता है।
17. **व्यवस्था का सिद्धान्त (Principle of arrangement)** - इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति और वस्तु के लिए अपना निश्चित स्थान होना चाहिए। कार्य को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए यह अति आवश्यक है। प्रत्येक संस्थान में उपयोग में आने वाली वस्तुओं का स्थान निश्चित होता है यही नियम कार्यकर्ताओं पर भी लागू होता है। किसी भी कार्यकर्ता को उसके निश्चित स्थान होने के कारण पहचाना जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार न्यूनतम समय एवं वित्त व्यय के फलस्वरूप अधिक कार्य कराया जा सकता है।
18. **सहयोग का सिद्धान्त (Principle of co-operation)** – संगठन के सभी कार्यकर्ताओं को मिल-जुलकर टीम भावना से कार्य करना चाहिए। पारस्परिक सहयोग ही सिद्धि का मूल मंत्र है। किसी भी संगठन के कार्यकर्ताओं को संस्थान अथवा सर्वहित के लिए, अपने मतभेदों को भुलाकर सहयोग की भावना से मिल जुलकर कार्य करना चाहिए तभी वह संस्थान अपेक्षित प्रगति कर सकेगा। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि किसी भी संगठन/संस्था को करने हेतु प्रबन्धक एवं कार्यकर्ताओं को इन सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप में अपनाना आवश्यक है। यद्यपि शैक्षिक प्रबन्ध के उपर्युक्त सिद्धान्तों के अतिरिक्त और भी सिद्धान्त हैं। शिक्षा का मुख्य उद्देश्न देश के लिए सुयोग्य नागरिक तैयार करना है अत: शैक्षिक प्रबन्धों के सिद्धान्त अन्य

प्रबन्धों की तरह ही। लेकिन उनकी क्रियान्विति शैक्षिक स्थितियों / वातावरण के अनुसार सूझबूझ एवं दूरदर्शिता पूर्ण की जानी चाहिए।

शैक्षिक प्रबन्ध का दायित्व है कि वह आदर्श नेतृत्व युक्त शैक्षिक वातावरण करे । साथ ही कार्यकर्ताओं में निष्ठापूर्वक एवं ईमानदारी की भावना से कार्य करने की आदतों का विकास करे, जिससे संगठन अपने निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त कर सके।

7.12 सारांश (Summary)

इस इकाई के अन्तर्गत प्रबन्ध एवं शैक्षिक प्रबन्ध का सम्प्रत्यय स्पष्ट किया गया है। शैक्षिक प्रबन्ध एक उद्देश्यों प्रक्रिया है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु मानव द्वारा योजना निर्मित की जाती है एवं इस योजना को व्यवस्थित रूप से सम्पादित करने का प्रयास किया जाता है। शैक्षिक प्रबंध में नियोजित एवं क्रमबद्ध रूप में कार्य किया जाता है। शैक्षिक प्रबंध वधार्थियों को शैक्षिक वातावरण उपलब्ध करवाता है। भौतिक एवं मानवीय संसाधनों में समन्वय, कार्यकर्ताओं में प्रेम एवं सहभावना उत्पन्न करना, समय का सदुपयोग करना, शिक्षकों को व्यावसायिक वृद्धि हेतु अवसर उपलब्ध करवाना, " का अधिकतम उपयोग करना, छात्रों के व्यक्तिगत विकास पर ध्यान देना, कार्यकर्ताओं को योग्यता कार्य प्रदान करना, छात्रों में सुनागरिकता के गुणों का विकास करना इत्यादि शैक्षिक प्रबन्ध के उद्देश्य। इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु शैक्षिक प्रबन्ध की विशेष आवश्यकता अनुभव की जाती है। मानवीय संसाधनों के विकास करने, शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति करने, शैक्षिक समस्याओं के समाधान करने, समन्वय करने, उद्देश्यों तथा नीति निर्धारण में, वैज्ञानिक एवं तकनीकी आविष्कार करने में शैक्षिक प्रबन्ध का विशेष महत्व अनुभव होता है।

शैक्षिक प्रबन्ध के मुख्य कार्य नियोजन, संगठन, निर्देशन, ' समन्वय, नियंत्रण, अभिप्रेरणा, एकीकरण, सम्प्रेषण, नवाचार, मूल्यांकन इत्यादि है। शैक्षिक प्रबन्धन के ' के अंतर्गत कार्य विभाजन, आदेश की एकता, अधिकार एवं उत्तरदायित्व, समय का अध्ययन, का सिद्धान्त उद्देश्यों का सिद्धान्त, नियोजन का सिद्धान्त, निर्देशन की एकता, समानता का व्यवहार पहल, पदाधिकारी की श्रृंखला, केन्द्रीयकरण का सिद्धान्त, समन्वयन का सिद्धान्त, कर्मचारियों के पारिश्रमिक , का सिद्धान्त, व्यवस्था एवं सहयोग का सिद्धान्त प्रमुख हैं।

इस प्रकार इस इकाई में प्रबन्ध एवं शैक्षिक प्रबन्ध का सम्प्रत्यय, प्रबन्ध के उद्देश्य, आवश्यकता, महत्व, कार्य एवं सिद्धान्तों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

7.13 अभ्यास प्रश्न

1 ‘प्रबन्ध’ का अर्थ बताइए I

2 ‘मिल्वर्ड ’ ने प्रबन्ध को किस प्रकार परिभाषित किया है ?

3 ‘शैक्षिक प्रबन्ध’ का सम्प्रत्यय बताइए I

4 ‘हेरी ’ ने शैक्षिक प्रबन्ध को किस प्रकार परिभाषित किया हे I

लघुरात्मक प्रशन

1 शैक्षिक प्रबन्धन के कोई दो उद्देश्य बताइए।

2 शैक्षिक प्रबन्ध की आवश्यकता संक्षेप में बताइए।

3 शैक्षिक प्रबन्ध के महत्त्व के कोई चार बिन्दु बताइए।

4 शैक्षिक प्रबन्धन के कीन्ही तीन सिद्धांतों का नामोल्लेख।

5 प्रबन्धन को कार्य विभाजन के समय किन-किन बाटो का ध्यान रखना चाहिए ?

6 शैक्षिक प्रबन्धन मे उद्देश्यों का सिद्धान्त" क्या हे ? स्पष्ट कीजिये।

निबंधात्मक प्रश्न (Exercise)

1 शैक्षिक प्रबन्धन के अर्थ, परिभाषाओं, उद्देश्य एवं आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए एक समालोचनात्मक निबन्ध लिखिए।

2 शैक्षिक प्रबन्धन के कार्य एवं सिद्धान्तों को उदाहरण सहित स्पष्ट करिए।

7.14 संदर्भ सूची

- अग्रवाल, जे. सी. (2006), स्कूल प्रबंध, सूचना तथा सम्प्रेषण तकनीकी, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
- Ediger, Maslow & Rao, D, Bnaskara (2003). Improving School Administration, Discovery Publishing House, New Delhi.
- Goel, S.L. (2001), Management Techniques : Principal and Practices. Deep & Deep Publications Pvt.Ltd., New Delhi.
- John D.Millet (1954), Management in Public Service; McGraw Hill Company, New York.
- 5.ओड, लक्ष्मी लाल (2005). शैक्षिक प्रशासन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
- राजपूत, जे. एस. एवं देवल, ओंकार सिंह (2001) विद्यालय शिक्षा के क्षेत्र में अनुभव. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली
- शर्मा, देवदत्त (1991) शैक्षिक प्रबंध के मूल तत्व. विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
- सिडाना अशोक एवं शर्मा, अंजलि (2005). शैक्षिक प्रबंधन एवं विद्यालय संगठन. शिक्षा प्रकाशन, जयपुर
- सिंह, डी. पी. सभा, वाजपेयी एवं अन्य (2001) विद्यालय प्रबन्ध एवं शिक्षा कीं समस्याएँ रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर
- सिंह, एच. पी. एवं रावत, आर. के. एवं अन्य (2007). शैक्षिक तकनीकी का, आवश्यकताएं प्रबन्ध क्रियात्मक अनुसंधान एवं स्वास्थ्य विभाग. राधा प्रकाशन मन्दिर, आगरा
- S.K. Bhatia & Nirmal Singh (2000). Principles and Techniques of Personal Management/Human Resources Management. Deep & Publications, New Delhi.
- सुखिया, एस. पी. (2005), विद्यालय प्रशासन एवं संगठन. विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
- तरुण, हरिवंश (2005), विद्यालय प्रबंध एवं स्वास्थ्य शिक्षा. प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली

- त्यागी, ओ एस. एवं सिंह बिजेन्द्र (2006). शैक्षिक प्रबंध एवं विद्यालय संगठन. अरिहन्त शिक्षा प्रकाशन, जयपुर
- वर्मा, जे. पी. एवं वर्मा, मंजू (2002), विद्यालय प्रबंधन. आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
- शर्मा, जे. पी. (2002), शैक्षिक प्रबंधन. राजस्थान हिन्दी नथ अकादमी, जयपुर
- वर्मा, जी.एस (2005), शैक्षिक प्रबंध. लायल बुक डिपो, मेरठ
- Venktaish, S (2001) Management Education. Anmol Publication Pvt.Ltd,New Delhi.

इकाई – 8

स्व प्रबंधन एवं समय प्रबन्धन

(Personal Management & Time Management)

इकाई की रूपरेखा

8.1 उद्देश्य

8.2 प्रबन्धन की परिभाषा

8.3 प्रबन्धक के गुण

8.4 प्रबन्धन में गुणात्मक विकास हेतु कुशल नेतृत्व की आवश्यकता

8.5 स्वप्रबंधन

8.6 समय प्रबन्धन

8.7 समय प्रबन्ध के उपकरण

8.8 समय प्रबन्ध के चरण

8.9 समय प्रबन्ध के लिए सुझाव

8.10 अभ्यास प्रश्न

8.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

8.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने क उपरान्त विघार्थी

- प्रबन्धन का अर्थ व परिभाषा जान सकेंगें।
- स्वप्रबन्धन सम्प्रत्यय व आय प्रेरणा से संबंधबता सकेगें।
- समय प्रबन्ध के उपकरण बता सकेगें, प्रक्रिया का विश्लेषण कर सकेगें एवं नवीन सुझाव दे सकेगें।

8.2 प्रबन्धन की परिभाषा

प्रबन्ध प्रत्येक व्यवसाय की गत्यात्मक एवं जीवनप्रदायी तत्व है जिसके नेतृत्व के अभाव में उत्पादन के साधन केवल साधन मात्र ही रह जाते हैं, कभी उत्पादन नहीं बन पाते।

''हेनरी फेयोल'' ने कहा है कि ''प्रबन्ध से आशय पूर्वानुमान लगाना, योजना बनाना, संगठित करना, निर्देश देना, समन्वय करना व नियंत्रण करना है।''

किसी भी विद्यालय के उचित प्रबन्ध द्वारा यह निश्चित करने का प्रयत्न किया जाता है कि साधनों तथा परिस्थितियों को इस तरह नियोजित, संगठित, निर्देशित, समन्वित तथा नियंत्रित किया जाये कि सभी विद्यार्थियों को साधनों की सीमाओं में रहते हुए उचित वातावरण में अच्छी से अच्छी दिशा प्रदान की जा सके। प्रबन्ध विद्यालय के सभी कार्य-कलापों की कुंजी, उनकी सुव्यवस्था हेतु एक अच्छी अलार्म घड़ी तथा उनमें आपसी तालमेल हेतु एक अच्छी संचार एवं सम्प्रेषण व्यवस्था तथा सुमार्ग पर चलने हेतु एक अच्छे पथ प्रदर्शक और नियंत्रक का कार्य करता है।

मानव जीवन का प्रत्येक सफलतम भाग प्रबन्ध से जुड़ा होता है। अनियोजित ढंग से बढ़ने वाले व्यक्तियों को बहुत कम सफलता की प्राप्ति होती है। जीवन को सुखमय बनाने के लिए साधन-सुविधाएं जुटाना एवं सामाजिक परिधि का विस्तार करने जैसी जीवन की तमाम गतिविधियों में क्रमबद्धता एवं नियोजशीलता की आवश्यकता रहती है।

प्रबन्ध एक व्यापक एवं सार्वभौमिक प्रक्रिया है। प्रबन्ध का क्षेत्र शनैःशनैः विस्तृत होता जा रहा है। व्यक्ति के छोटे से छोटे कार्य से लेकर बड़े से बड़े कार्यों को पूर्ण करने के लिए प्रबन्घ की आवश्यकता है। किसी भी लक्ष्य अथवा उद्धेश्यों की प्राप्ति हेतु जब प्रयासों को नियोजित, संगठित, निर्देशित, समन्वित व नियंत्रित किया जाता है उसे हम प्रबन्ध की संज्ञा दे सकते हैं।

वर्तमान में शिक्षा ने व्यवसाय का रूप धारण कर लिया है। शिक्षा का स्वरूप धीरे-धीरे संस्थागत होता जा रहा है। प्रत्येक संस्था अपने उद्धेश्यों की पूर्ति के लिए प्रबन्ध के सिद्धान्तों का पालन करते हुए गुणात्मक प्रबन्ध का प्रयास कर रही है। अच्छा प्रबन्ध मानवीय व भौतिक ऊर्जा तथा समय के अधिकतम सदुपयोग के द्वारा सहभागिता व जन सामान्यों को सन्तुष्ट करते हुए सामाजिक लक्ष्य को प्राप्त करता है।

8.3 प्रबन्धक के गुण

1. प्रबन्ध व्यवस्था में उचित सम्प्रेषण व्यवस्था की जानी चाहिए।
2. प्रबन्धक को अपने विद्यालय में नई-नई तकनीकों का उपयोग करना चाहिए।
3. विद्यालय में प्रबन्धक का व्यक्तित्व आकर्षक होना चाहिए।
4. विद्यालय की प्रबन्ध व्यवस्था में सभी क्रियाओं को अपनाना चाहिए।
5. एक प्रबन्धक को नवीन विचारधाराओं को अपनाना चाहिए।
6. कर्मचारियों को आवश्यक सुविधायें प्रदान करनी चाहिए।

8.4 प्रबन्धन में गुणात्मक विकास हेतु कुशल नेतृत्व की आवश्यकता

गुणात्मक प्रबन्ध हेतु नेतृत्व की भूमिका महत्वपूर्ण है। नेतृत्व का आशय व्यक्ति के व्यवहार के उस गुण से है जिसके द्वारा वह अन्य लोगों को संगठित प्रयास से सम्बन्धित कार्य करने में मार्गदर्शक का कार्य करता है। नेतृत्व कुशल अधिकारी विशिष्ट लक्ष्यों को चुनने और उन्हें पाने में विवेकपूर्ण ढंग से निर्देश देता है, पथ प्रदर्शन करता है तथ प्रभावित करता है। नेतृत्व एक विशिष्ट प्रक्रिया है जो प्रबन्धक को व्यक्तियों से उच्च निष्पादन प्राप्त करने में समर्थ बनाता हैं

1. आत्मविश्वास एवं कार्य के प्रति उत्साह होना

2. उचित एवं त्वरित निर्णय शक्ति होना।

3. विश्वास प्राप्त करने की क्षमता होना तथा दूसरों पर विश्वास भी करना।

4. सम्प्रेषण में कुशल हो। आवश्यक सूचनाओं एवं तत्वों को तुरन्त समझने की योग्यता तथा उचित रूप से सम्प्रेषित करने में योग्य हो।

5. सहयोगी भावना तथा मानवीय एवं नैतिक कर्तव्यों का बोध होना।

6. निष्पक्ष रहते हुए कार्यों का संचालन करना।

7. कर्मचारियों की प्रतिभा, क्षमता तथा कमजोरियों को जानने की समर्थ होना। उनका मूल्यांकन करने की योग्यता हो।

8. स्वयं कार्य करने की पहल करें तथा उचित नीतियों का निर्माण करें।

9. सहनशक्ति एवं संवेगात्मक स्थिरता हो।

10. उच्च बौद्धिक क्षमता तथा ज्ञानवान हो।

11. महत्वाकांक्षा भी कुशल नेतृत्व का महत्वपूर्ण गुण है।

इन सभी गुणों के माध्यम से नेतृत्वशील व्यक्ति प्रबन्ध में गुणात्मक विकास कर सकता है। नेतृत्व शक्ति का व्यवहार उसके गुण तथा उसके सामाजिक दृष्टिकोण प्रबन्ध को प्रभावित करते हैं। नेतृत्व क्षमता के आधार पर ही आज हम देखते हैं कि प्रत्येक संस्था का प्रबन्ध कार्य एक समान नीतियों से निर्धारित होते हुए भी पृथक दिखाई देता है। सफल नेतृत्व संस्था को गतिशील एवं प्रभावी बनाता है। प्रबन्ध कितना भी अच्छा क्यों न हो कुशल नेतृत्व के अभाव में असफल रहता है।

8.5 स्वप्रबंधन

ईश्वर द्वारा रचित सभी वस्तुओं में मानव ही उसकी सर्वश्रेष्ठ कृति है। मानव में तर्क एवं विवेक है जिससे वह अच्छे-बुरे की पहचान कर सकता है। समय प्रबन्धन के मुख्य स्त्रोतों में मानव प्रथम स्थान पर है। इस क्रम में अन्य महत्वपूर्ण स्त्रोत है। सामग्री, सम्पति, मशीन, प्रतियोगिता एवं गति। सामग्री का जहाँ तक प्रश्न है, संस्था प्रधान को उसकी गुणवत्ता पर ही ध्यान देना चाहिए। समय प्रबन्धन का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है सम्पति या धन। एक अन्य दृष्टि से तो समय स्वयं ही धन है। समय के प्रति सजग व्यक्ति को यह सदैव याद रखना चाहिए कि ''करोड़ो स्वर्ण मुद्राएं देकर भी आयु एक क्षण प्राप्त नहीं किया जा सकता है। ऐसी दशा में बहुमूल्य क्षण को जो व्यर्थ गंवाता है, उस मनुष्य को तो दूर से ही नमस्कार है।''

अभिप्रेरणा एवं स्वप्रबन्धन:- अभिप्रेरणा के बिना कोई भी कार्य सम्भव नहीं है। जब तक व्यक्ति के अन्दर यह शक्ति संचालित नहीं होती, तब तक वह कार्य करने में असफल होता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए स्किनर ने कहा था, ''अभिप्रेरणा सीखने के लिए राजमार्ग है।'' व्यक्ति जब तक किसी कार्य को करने के लिए अभिप्रेरित नहीं होता, वह उस कार्य को नहीं सीख पाता। व्यक्ति की सफलता के लिए बाह्य अभिप्रेरणा ही नहीं वरन् आंतरिक अभिप्रेरणा का होना भी अति आवश्यक है।

अभिप्रेरणा का प्रबन्धन पर प्रभाव देखने के लिए महान मानवतावादी विचारक अब्राहम लिंकन मास्लो के मांग सिद्धान्त का अवलोकन करना आवश्यक हो जाता है। उन्होनें बताया कि मनुष्य की अनेक आवश्यकताएं होती है, जो कि क्रमबद्धता लिये होती हैं जिसमें निचली पूर्ति के पश्चात् ही मानव ऊपर की मांगों पूर्ति की आवश्यकता महसूस करता है। अर्थात् सर्वप्रथम दैहिक आवश्यकताओं की पूर्ति के उपरान्त, सुरक्षा मांग की आवश्यकता होती है। इसकी पूर्ति के पश्चात क्रमशः स्नेह, आत्मविश्वास तथा आत्मविश्लेषण की पूर्ति करने का प्रयास किया जाता है। आत्मविश्लेषण की विशेषताओं में इंटीग्रिटीए रेस्पोसिंबिलिटी, आत्मविश्लेषण आदि तत्व होते हैं। आत्मविश्लेषक स्वयं से हटकर अन्य से संबंधितसमस्याओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं। इस सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जब तक व्यक्ति की निचली आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती तब तक उससे उत्तरदायित्व, स्वाभाविकता, समस्या समाधान की योग्यता जैसे आत्मविश्लेषण विशेषताओं की अपेक्षा नहीं की जा सकती। अतः शिक्षण संस्थान को प्रबन्ध की सफलता के लिए आवश्यक रूप से अपने शिक्षकों को ना केवल अच्छा वेतन, नौकरी की सुरक्षा, तथा अन्य सुविधाएं देकर उनकी दैनिक आवश्यकताओं व सुरक्षा मांगों की पूर्ति करनी चाहिए बल्कि उन्हें अपने शिक्षकों से स्नेहयुक्त, सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार के द्वारा उनकी स्नेह रूपी आवश्यकताओं की पूर्ति करके स्वस्थ वातावरण व प्रोत्साहन देकर उनकी आत्मसम्मान की मांग को पूरा करना चाहिए जिससे उनके द्वारा इंटीग्रिटी, रेस्पोंसिबिलिटी आदि आत्मविश्लेषक तत्व स्वंय ही प्रस्तुत होने लगते है जो कि शिक्षा एवं व्यावसायिक प्रबन्ध की मांग हैं।

अभिप्रेरित शिक्षक या व्यवसायी आकस्मिक एवं महत्वपूर्ण कार्यों को पहले करते हैं। सामान्यतः ऐसे शिक्षक या व्यवसायी प्रतिदिन किये जाने वाले कार्यों की सूची निर्मित कर लेते हैं। फोन्तता 1993 के अनुसार यदि हम अपने समय का बेहतर उपयोग करते हैं तो हम अधिक कार्यदक्ष एवं उत्पादक होते हैं। लम्बे समय के लिए योजना बना सकते है, अपने कार्य एवं वृति से अधिक संतुष्ट हो सकते है, कम तनाव ग्रस्त होते हैं, स्वयं के लिए अधिक समय बचा पाते हैं और अपना कार्य पूर्ण करने के अधिक अवसर प्राप्त करते हैं। शिक्षक विभिन्न तकनीकों का उपयोग करते हुए स्वंय समय का बेहतर प्रबन्ध कर सकता है तथा -

- न कहना
- वरीयता के आधार पर लक्ष्य निर्धारण करना
- निर्बाध समय का सृजन करना
- समय का उचित विभाजन करना
- कार्य का व्यवस्थापन करना
- कार्य हेतु दिन के उपयुक्त समय का चयन करना
- प्रशासनिक कार्यों का व्यवस्थापन करना
- एक समय में एक काम करना
- अपने स्वंय के समय का उपयोग करना

- अपनी कार्य-गति का विकास करना
- कार्य के लिए समय सीमा तय करना
- स्पष्ट एवं यथार्थ उद्धेश्य तय करना आदि।

विभिन्न तकनीकों का विचारणपूर्ण उपयोग करते हुए शिक्षक व अन्य व्यवसायी अपने समय एवं कक्षा कक्ष में की जाने वाली गतिविधियों के लिए समय का उचित प्रबन्ध कर सकते हैं। शिक्षकों में समय प्रबन्ध के प्रति (समय का बेहतर उपयोग करने के प्रति) संवेदनशीलता का विकास करने के लिए अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम में इस आशय हेतु विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है। शिक्षक विभिन्न अद्यतन तकनीकों का उपयोग करते हुए अपनी सदिश चेष्टा द्वारा समय का अधिक उद्धेश्यपूर्ण ढंग से उपयोग कर सकते हैं।

8.6 समय प्रबन्धन

समय के बारे में बैंजामिन फ्रेंकलिन ने कहा है कि ''याद रखो कि समय धन है।'' इसी प्रकार गांधीजी ने कहा है कि ''जो समय बचाते हैं वे धन बचाते है और बचाया हुआ धन कमाये हुए धन के बराबर है। इसलिए जो समय का मूल्य नहीं जानते वे दुनिया का कितना धन खो देते होंगे इसका हिसाब कौन लगा सकता है।'' डॉ. एस.एन. मुखर्जी के अनुसार ''किसी देश की सभ्यता एवं संस्कृति का ज्ञान ही वहाँ के नागरिकों के द्वारा अवकाश के समय के उपयोग की प्रकृति से ज्ञात होता है।

समय प्रबन्धन की आवश्यकता:- आज के मशीनी युग मे सभी के सामने यह चुनौती है कि समय का सर्वाधिक श्रेष्ठ उपयोग कैसे किया जाये? एक व्यक्ति के जीवन में भी भिन्न-भिन्न अवसरों पर विविधता देखने को मिलती है और इसी विविधता के कारण समय प्रबन्ध का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है।

युवा पीढ़ी को आधुनिक समाज में अपने अस्तित्व को बनाये रखने, जीवन को बेहतर ढंग से जीने व समायोजन करने के लिए तथा बिना रूके जीवन रूपी युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए अपने समय का उपयोग करना है। इसके विपरित किशोर वर्ग अपने समय का सदुपयोग नहीं करते हैं तो शैक्षिक, सामाजिक व आर्थिक उपलब्धि की दृष्टि से पिछड़ जायेंगे। जिसका परिणाम अन्ततोगत्वा स्वयं किशोर को व समाज को भुगतना पड़ेगा। अन्त बातों के रहते किशोरावस्था में समय का सदुपयोग न करने पर शैक्षिक एवं व्यावसायिक असफलताओं का सामना करना होगा, जो सम्पूर्ण जीवन को दिशा-विहीन कर सकता है। उसके भावी जीवन व मानसिक स्वास्थ्य को भी प्रभावित करता है। अति प्रतियोगिता, जीवन की जटिलता व व्यस्तता आदि कई महत्वपूर्ण कारक हैं जो समय प्रबन्धन की आवश्यकता के महत्व को परिलक्षित करते हैं। आज प्रबन्ध केवल शिक्षा में ही नहीं वरन् हर क्षेत्र में देखा जा सकता है।

शैक्षणिक एवं व्यवसायिक प्रबन्ध सिद्धान्त और अभ्यास की वह शाखा है जो शिक्षा संगठनों जैसे विद्यालय, महाविद्यालय, युवक, सेवाओं और समुदाय विकास के कार्यक्रम से सम्बन्धित है। इस प्रकार शैक्षणिक एवं व्यवसायिक प्रबन्ध लोगों के समूह की क्रियाओं को पथ प्रदर्शित करने की एक कला है, जिससे शिक्षा एवं व्यवसायिक के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

8.7 समय प्रबन्ध के उपकरण

1. **अत्यधिक भार:-** किशोर अपने विवेक से अत्यधिक कार्यभार को निर्धारित कर सकते हैं। अत्यधिक कार्यभार का समय, दिन, सप्ताह, माह अथवा मौसम की निश्चित समयावधि में हो सकता है। यह अत्यधिक कार्य का समय ही अत्यधिक कार्यभार कहलाता है। कुछ किशोरों के लिए अध्ययन का समय विद्यालय जाना, गृहकार्य करना, परीक्षा के समय अध्ययन करना, अत्यधिक कार्यभार का समय होता है।

2. **कार्य का वक्र:-** कार्य के व्यवस्थापन का एक यंत्र कार्य का वक्र है, जिसका प्रारम्भ उद्योगों से हुआ। उद्योगों में यह कार्यकत्र्ता द्वारा किये गये कार्य की इकाई को दर्शाने के लिए प्रयोग में लाया जाता था लेकिन किशोरों के द्वारा किया गया अध्ययन का समय दिन में या सप्ताहान्त में कुछ कम होता है, क्योंकि यह समय परिवारजन के साथ मौजमस्ती में व्यतीत होता है। सोमवार को पुनः समायोजित हो जाता है।

3. **विश्राम का समय:-** विश्राम का अर्थ होता है -कुछ समय कार्य के तनाव से मुक्ति। इसका अर्थ यह कदापि नहीं होता कि कार्य पूर्णरूप से बन्द ही कर दिया जाय। विश्राम काल से किशोर के स्वास्थ्य और उसकी कार्यक्षमता पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। विश्राम करने की विधि टी.वी. देखना, मित्रों के साथ बातें करना, बाहर घूमना आदि कुछ भी हो सकती है। यह उचित प्रकार से विश्राम किया जायें तो कम समय में ही थकान को दूर किया जा सकता है जैसे कठिन कार्य के बाद सरल कार्य।

समय प्रबन्ध की प्रक्रिया:- योजना समय प्रबन्ध करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

1. महत्वपूर्ण कार्यों की योजना बनानी चाहिये।
2. कार्य का क्रम निर्धारित किया जाना चाहिये।
3. योजना बनाते समय किशोर के समय की बचत का ध्यान रखा जाय।
4. अध्ययन के लिये पर्याप्त समय होना चाहिए, जिससे कार्य तनाव रहित होकर किया जा सकें।
5. योजना में पर्याप्त जॉच होनी चाहिए - परिस्थिति में उसमें परिर्वतन कर समायोजन किया जा सके।

8.8 समय प्रबन्ध के चरण

1. समस्त कार्यों की सूची बनाना।
2. कार्य को सम्पन्न करने का अनुमानित समय निर्धारित करना।
3. कुल लगने वाले समय को जोड़ना और उपलब्ध समय के साथ समन्वय करना।
4. समय क्रम निर्धारित करना।
5. योजना को लिखना।
6. व्यक्तिगत योजना अन्य सदस्यों के सहयोग से होता हो तो उसमें समन्वय करना।

समय प्रबन्ध की सकल योजना वही होती है, जिसके द्वारा किशोर उपलब्ध साधनों का अपव्यय किये बिना तथा बिना मानसिक तनाव के व्यक्तिगत व भावी जीवन को शैक्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति अनुकूलतम ढंग से कर सकें।

8.9 समय प्रबन्ध के लिए सुझाव

यह ठीक से समझ लिया जाना चाहिए कि समय कम नहीं किया जा सकता या इसे आप किसी से उधार भी नहीं ले सकते हैं। आपके पास जो 24 घण्टे हैं उनका आप ही उपयोग कर सकते हैं, और उनका सदुपयोग समय प्रबन्धन के द्वारा ही सम्भव है। इसीलिए चेस्टर फील्ड ने अपने पुत्र को लिखा कि, ''मिनिटों की चिन्ता करो, क्योंकि घण्टे तो अपनी चिन्ता स्वंय कर लेंगे।'' इस भाँति तुलसीदास जी ने रामचरित मानस में एक स्थान पर कहा है -''दिवस जात नहीं लागाहि बारा''

यदि आप दिन में किये जाने वाले कार्यों की प्राथमिकताएं निश्चित कर लें, दिनभर के कार्यों की योजना बना लें तो आप समय के दुरूपयोग करने से या नष्ट करने से बच सकते हैं। आप कार्यों की प्राथमिकताएं निश्चित रूप से अतिआवश्यक, आवश्यक, सामान्य, कामचलाऊ एवं उपेक्षित वर्गों में बना सकते हैं। समय के सुप्रबन्धन के लिये कुछ और बातों पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए जैसे अधीनस्थों को जो भी आदेश दिये जायें वे निश्चित रूप से स्पष्ट हो। अच्छा यह होगा कि कार्य निष्पादन में लगने वाले समय का अनुमान लगाते समय प्राविधिक विकास, प्राकृतिक विपदाएं, राजनैतिक दबाव, समय की सीमा का ध्यान रखा जाये।

8.10 अभ्यास प्रश्न

1 प्रबन्धन का सम्प्रत्यय स्पष्ट करें।

2 स्वप्रबन्धन एवं समय प्रबन्धन में अन्तर स्पष्ट करें।

3 समय प्रबन्धन के प्रमुख उपकरण कौनसे है।

4 समय प्रबन्धन हेतु उचित सुझाव दीजिए।

8.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

- वाटर हाऊस, पी. (1983), मैनेजिंग द लर्निंग प्रासेज, मैडनहैंड, मेकग्राहिल।
- अडेयर, जे. (1988), इफेक्टिव टाइम मैनेजमेन्ट, हाऊ टू सेव टाइम एण्ड स्पेण्ड इट वाइजली, लन्दन, पैन बुक्स।
- फोन्ताना, डी. (1993), मैनेजिंग टाइम, लिसेस्टेर, ब्रिटिश साइकोलोजिकल सोसायटी बुक्स।
- कैंपल सुजन एवं मारलिन लिस्क (1997), लर्निंग टू टीच इन दी सैकण्डरी स्कूल, अ कम्पीनियन टू स्कूल एक्सपीरियन्स, लन्दन, रोटलेड्ज।
- मोहन जगन्नाथ (2004) स्कूल मैनेजमेंट, न्यू टे्न्डस एण्ड इनोवेशन्स, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली
- बगाडे, एस.डी. (2005), टोटल क्वालिटी मैनेजमेंट, हिमालय पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली।

इकाई- 9

व्यक्तित्व का विकास

Personality Development

इकाई की रूपरेखा

9.0 प्रस्तावना
9.1 उद्देश्य
9.2 व्यक्तित्व विकास का अर्थ
9.3 व्यक्तित्व विकास की परिभाषा एवं विशेषताये
9.4 व्यक्तित्व के प्रकार
9.5 व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारक
9.6 कैरियर के विकास में व्यक्तित्व को प्रभावी बनाने वाले कारक
9.7 व्यक्तित्व विकास की आवश्यकता
9.8 व्यक्तित्व विकास का महत्व
9.9 छात्रों के लिए व्यक्तित्व विकास
9.10 छात्रों के व्यक्तित्व विकास में माता पिता की भूमिका
9.11 छात्रों के व्यक्तित्व विकास में शिक्षकों की भूमिका
9.12 साक्षात्कार के लिए व्यक्तित्व विकास
9.13 सारांश
9.14 शब्दावली
9.15 अभ्यास प्रश्न
9.16 संदर्भ ग्रन्थ सूची

9.0 प्रस्तावना

व्यक्ति को सांसारिक जीवन सही ढ़ंग से जीने के लिए अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करनी होती है। जिसके बिना मनुष्य का अस्तित्व कुछ भी नहीं आवश्यकताओं की पूर्ति धन के बिना सम्भव नहीं है और धन किसी रोजगार अथवा व्यवसाय के बिना नहीं कमाया जा सकता है।

आज के अत्यधिक प्रतिस्पर्धी दुनिया में शीतल कौशल, व्यक्तित्व वृद्धि का एक विशेष प्रशिक्षण जरूरी है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने साथी कार्यकर्ताओं के साथ सूचनाओं का आदान-प्रदान कर फैसला करता है और विभिन्न पस्थितियों को प्रतिक्रिया के रूप में व्यक्तित्व विकास कार्यस्थल पर एक अनिवार्य भूमिका निभाता है। एक व्यक्ति कार्यस्थल पर कैसे बर्ताव करता है उसके व्यक्तित्व पर निर्भर करता है। व्यक्तित्व विकास व्यक्तियों को चमकाने एवं सवारने में मदद करता है और संगठन के लिए उन्हे बेहतर और कुशल संसाधनों के अनुकूल बनाता है।

व्यक्तित्व विकास तनाव के स्तर को कम करता है और मुस्कान के साथ बुरी परिस्थितियों का सामना करना सिखाता है साथ एक पेशेवर वातावरण में खुद को ढाल लेता है। एक व्यक्तित्व के द्वारा ही मनुष्य अपनी समस्याओं को पेशेवर जीवन से अलग रखता है।

कार्य स्थल पर व्यक्तित्व विकास की कक्षाऐं व्यक्तियों का सबसे अच्छा करने और अपने स्तर पर सर्वश्रेष्ठ देने के लिए प्रोत्साहित करते है। तनाव कभी - कभी हमें अपने आपको भूला देता है। काम से थकान के बाद कभी - कभी मुस्कराना भी भूल जाते हैं। व्यथ्क्तत्व विकास की कक्षाऐं व्यक्ति के जीवन में मुस्कराहट वापस लाने के लिए आवश्यक हो जाती है। अपने संगठन के लिए आप कठोर परिश्रम व लगन से अपने आपको साबित करते है और जल्द ही सफलता की ओर अग्रसर होते हैं। अच्छा परिश्रम करने व व्यक्तित्व का विकास करने के लिए अपनी क्षमताओं तथा कौशलों का अधिकतम अपयोग करना होता है।

व्यक्ति के पास धन, व्यवसाय, रहन - सहन तथा कार्य उसके व्यक्तित्व से किसी न किसी प्रकार से प्रभावित होते है। प्रत्येक व्यक्ति को कोई न कोई व्यवसाय एवं रोजगार चुनने एवं प्रवेश करने व उसकी प्रगति में व्यक्तित्व की आवश्यकता महसूस होती है क्यों कि व्यवसाय एवं रोजगार की भावी योजनायें व्यक्तित्व पर ही निर्भर करती है। एक आकर्षक व्यक्तित्व के कारण लोग आपको पसंद करते हैं और अपका सम्मान भी किया जाता है।

9.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप

- विभिन्न व्यवसाय/रोजगार में प्रवेश के लिए अपनी दक्षताओं को जान सकेंगे।
- व्यक्तित्व विकास के अर्थ एवं परिभाषाओं को समझ सकेंगे।
- व्यक्तित्व विकास की आवश्यकता एवं महत्व को समझ सकेंगे।
- व्यक्तित्व विकास को प्रभावी बनाने वाले करकों के बारे में जान सकेंगे।
- व्यक्तित्व विकास, आत्म समझ, को बढ़ावा देने के बारे में जान सकेंगे।
- व्यक्तित्व विकास एक सफल रोजगार अथवा व्यवसाय के लिए कैसे प्रासंगिक है जान सकेंगे।
- छात्रों के लिए व्यक्तित्व विकास के बारे में जान सकेंगे।
- छात्रों के व्यक्तित्व विकास में माता पिता एवं शिक्षकों की भूमिकाओं को समझ सकेंगे।
- साक्षात्कार के लिए व्यक्तित्व विकास क्यो जरूरी है समझ सकेंगे।

9.2 व्यक्तित्व विकास का अर्थ

विकास अधिकतम प्रभावकारिता और अनुपालना पता लगाने के लिए ''व्यक्तियों के कौशल, ज्ञान और हितों को बढ़ावा देने के लिए आकार देने की एक स्थायी प्रक्रिया है। यह लेटिन भाषा से लिया गया है जिसका शाब्दिक अर्थ है ''साधन या मुखौटा''।

विकास कॉर्पोरेट शिष्टाचार एवं व्यक्तित्व विकास का ज्ञान है जिसमें गतिविधियों के एक वर्गीकरण को शामिल किया गया है। कार्यक्रम का उद्देश्य आत्म विश्वास बढ़ाने एवं आत्म सम्मान तथा प्रतिभागियों के समग्र व्यक्तित्व में सुधार हेतु औपचारिक एवं अनौपचारिक परिस्थितियों में सामाजिक और पेशेवर, उचित व्यवहार के बारे में उन्हे सुग्राही बनाने के माध्यम से प्रतिभागियों को संवारने के लिए किया जाता है।

व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु रोजगार एवं व्यवसाय में अपनी योग्यताओं, सोच एवं व्यवहार के अनुसार कार्य करता है। व्यक्ति की सोच व योग्यता के आधार पर किया गया कार्य ही व्यक्तित्व को दर्शाता है। व्यक्तित्व का विकास मौलिकता बढ़ाने संवारने और अपने जीवन में सकारात्मक बदलाव लाने के लिए अपने व बाहरी व्यक्तियों से सम्पर्क कर विकसित किया जाता है। जिसमें व्यक्तित्व अनुग्रह की शैली व समझ तथा कौशल एवं शिष्टाचार के द्वारा लोगों का दायरा बढ़ाकर एक समग्र समूह का निर्माण कर सकता हैं, जो व्यक्तित्व को अद्वितीय व्यक्ति बना देता हैं। इसी आधार पर कह सकते हैं कि केरियर में सफल होने के लिए व्यक्तित्व विकास की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।

व्यवसाय एवं रोजगार में खुद की छाप छोडने के लिए एक प्रभावशाली व्यक्तित्व की आवश्यकता होती है। क्योकि आपको कार्यस्थल पर स्मार्ट दिखने की जरूरत होती है जो कि आपकी भाषा के साथ- साथ आपके कपडे व हावभाव से स्पष्ट होता है। कार्यस्थल पर आपका आत्मविश्वास और सकारात्मक रवैया चुनौतियों को हंसी के साथ स्वीकार करना आलोचनाओं और बईमानियों से दूर रहना व कार्य के प्रति पारदर्शिता आपके व्यक्तित्व विकास को प्रभावित करती है। एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में उसके व्यक्तित्व के आधार पर आसानी से फर्क किया जा सकता है।

व्यक्तित्व के तीन प्रमुख आधार है, जैसे: काया, स्वभाव, व्यवहार अनुवांषिकता से जन्म तक की परिस्थितियॉं निर्धारित होती है। एक व्यक्ति अपने जीवन के दौरान के अनुभव के आधार पर व्यक्तित्व के गठन में भारी मात्रा में योगदान करते हैं। व्यक्ति की आनुवांशिकता और पर्यावरण के मध्य सामन्जस्य उनके व्यक्तित्व के लक्षण के रूप में जाना जाता है जो उनके विकास को जन्म देता है। लक्षण के कुछ उदाहरणों में सफाई, ईमानदारी, उत्साह हैं।

9.3 व्यक्तित्व विकास की परिभाषा

''किसी भी पेशेवर कार्य को अपनी सोच, व्यवहार तथा योग्यता के आधार पर आगे बढ़ाना, प्रगति करना तथा कुशल संसाधनों के अनुकूल बनाना ही व्यक्तित्व विकास कहलाता है।''

''व्यक्तित्व एक दूसरे से भिन्न भेदभावों, विचारों, भवनाओं और व्यवहारों से प्रभावित करने वाले होते है। जो किसी भी कार्य को सार्थक तरीके से करते है।''

डोरोथी, जोंगवार्ड और मुरिएल जेम्स द्वारा : ''जीतने के लिए जन्में प्रत्येक व्यक्ति विजेता होने के लिए पैदा हुआ है। हमारी अपनी क्षमता हमारी प्रगति को टटोल लिया है कि विकास के पाठ्यक्रम में बचपन से लापरवाही व्यस्कता के लिए और एक परिणाम के रूप में पूरी करने के लिए हमारे अद्वितीय गुण का उपयोग करने में सक्षम है।''

Allport (1937) व्यक्तित्व व्यक्ति के उन मनोवैज्ञानिक गुणों का गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण में उनके अपूर्ण समायोजन को निर्धारित करता है।

फ्रायड के अनुसार व्यक्तित्व आईडी, अहंकार और **Superego** से मिलकर बनती है। आई डी मानसिक उर्जा का भण्डार है और मानव सहज ज्ञान का स्त्रोत हैं यह एक व्यक्तित्व की गतिविधियों को बनाने के लिए अहंकार का बाहरी दुनिया के साथ सम्पर्क में अलग-अलग रहता है और अपने सहज ज्ञान की अभिव्यक्ति के लिए पाया जाता है जो आईडी **(ID)**का विशेष अंग है और **Superego** वह अपने माता पिता से हांसिल कर लेता है जिससे व्यक्तित्व का विकास होता है।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर व्यक्तित्व की निम्नलिखित विशेषतायें हैं -

1- **मनोदैहिक तंत्र (Psychophysical system)** व्यक्तित्व एक ऐसा तंत्र है जिसमें शारीरिक तथा मानसिक दोनों तन्त्र होते हैं। यह दोनों तन्त्र एक दूसरे से अलग होते हुये भी पूर्ण रूपेण एक दूसरे पर आश्रित हैं।

2- **गत्यात्मक तन्त्र (Dymamic organization)** गत्यात्मक संगठन से तात्पर्य यह है कि मनोशारीरिक तन्त्र से भिन्न तत्व, आदत, शीलगुण आदि एक दूसरे से सम्बन्धित होकर संगठित रहते हैं ओर इसमें परिवर्तन भी होता रहता है।

3- **संगतता (Consistancy)**व्यक्तित्व कमोबेश स्थायी रहता है साथ ही व्यवहार में निरन्तरता भी बनी रहती है।

4- **वातावरण में अपूर्व समायोजन का निर्धारण (Determination of unique adjustment to environment)** प्रत्येक व्यक्ति में मनोशारीरिक गुणों का एक गत्यात्मक संगठन पाया जाता है जिसमें उसका व्यवहार वातावरण में अपने-अपने ढ़ंग का अपूर्व होता है।

9.4 व्यक्तित्व के प्रकार

मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व के विभिन्न प्रकार बताये है जो निम्न प्रकार हैं -

1- **हिप्पोक्रेटस का वर्गीकरण** : हिप्पोक्रेटस ने व्यक्तित्व के चार प्रकारों का वर्गीकरण किया है। हिप्पोक्रेटस के अनुसार व्यक्ति के शरीर में चार प्रकार के द्रव्य पाये जाते है।

A- **पीला पित्त (Yellow bile) :** पीले पित्त वाले व्यक्तियों का स्वभाव या चित्त प्रकृति चिडचिडा होता है अर्थात तुनक मिजाज होते हैं। गुस्सैल प्रकार के होते हें।

B- **काले पित्त (Black bile) :** काले पित्त प्रधान व्यक्तियों का स्वभाव उदास व विषादी प्रकार का होता है। विषादी व्यक्ति निराशावादी होते हैं।

C- **रक्त प्रधान पित्त (Blood bile) :** रक्त प्रधान व्यक्तियों का स्वभाव प्रसन्न एवं खुश मिजाज दृष्टिगोचर होता है। इस प्रकार के व्यक्ति आशावादी व उत्साही होते हैं।

D- **कफ प्रधान (Phlegm) :** कफ प्रधान व्यक्तियों का स्वभाव शान्त निश्क्रय प्रकार का होता है। इनमें भाव शुन्यता पाई जाती है।

2- **क्रेश्मर का वर्गीकरण :** जर्मन मनोचिकित्सक क्रेश्मर 1925 ने शारीरिक गुणों के आधार पर चार प्रकार के व्यक्ति बताये हैं।

A- **स्थूलकाय प्रकार (Pyknic type) :** : इस प्रकार के व्यक्ति छोटे - मोटे स्थूलकाय व गोल प्रकार के होते हैं। चित्त प्रकृति की दृष्टि से ये लोग मिलनसार, प्रसन्नचित्त तथा मित्रता वाले होते हैं।

B- **कृश्काय प्रकार (Asthemic type) :** इनका शरीर दुबला पतला होता है लेकिन कद की दृष्टि से यह अधिक लम्बे होते हैं। ऐसे लोग आत्मकेन्द्रित तथा शान्त स्वभाव के व एकान्तप्रिय तथा अर्न्तमुखी होते हैं।

C- **पुष्टकाय प्रकार (Athletic type) :** ये हष्ट-पुष्ट प्रकार के होते है। ये जोशीले व साहसी होते हैं।

D- **मिश्रितकाय प्रकार (Dysplatic type) :** इस प्रकार के व्यक्तियों में उपर्युक्त तीनों प्रकार के व्यक्तित्व के शारीरिक व मानसिक लक्षण पाये जाते हैं।

3- **शेल्डन का वर्गीकरण** : शेल्डन ने शारीरिक बनावट के आधार पर व्यक्तित्व के तीन प्रकार बतायें हैं।

A- **एण्डोफर्मी (Endomorphy) :** इस प्रकार के व्यक्ति मोटे व नाटे होते हैं और इनका शरीर गोलाकार दिखता है। इस प्रकार की शरीरिक बनावट वाले व्यक्ति आराम पसन्द, खुशमिजाज, सामाजिक तथा खाने पिने की चीजों में रूचि दिखाते है।

B- **मेसोमर्फी (Mesomorphy):** इस प्रकार के व्यक्तियों का शारीरिक गठन हष्ट पुष्ट एवं सुडौल होता है। इनमें जोखिम तथा बहादुरी का कार्य करने की तीव्र प्रवृत्ति, आक्रामकता आदि गुण पाये जाते हैं।

C- **एक्टोमर्फी (Ectomorphy):** इस प्रकार के व्यक्ति दुबले पतले एवं लम्बे होते हैं ऐसे व्यक्तियों को अकेला रहना, लोगों से कम मिलना अधिक पसन्द आता है।

4- युंग के आधार पर व्यक्तित्व के प्रकार **:** युंग ने मुख्यत**:** दो प्रकार बताये हैं।

A- **बहिर्मुखी व्यक्तित्व (Extrovert personality):** इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति समाजवादी, यथार्थवादी, व्यवहारकुशल, भावप्रधान, संकोचरहित, भोतिकवादी, कार्यशील, वर्तमान को महत्व देने वाले, शीघ्र निर्णय लेने वाले तथा वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण वाले होते हैं।

B- **अन्तर्मुखी (introvert personality):** इस प्रकार के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति संकोची, विचार प्रधान, एकांतप्रिय, कम व्यवहार कुशल, आदर्शवादी, देर से निर्णय लेने वाले, कम वाक शक्ति वाले तथा भविष्य को महत्व देने वाले होते है।

उभयमुखी **(Ambivert personality):** आधुनिक मनोवैज्ञानिक ने युंग के व्यक्तित्व की दो प्रकारों की आलोचना करते हुये कहा कि अधिकांशत: लोगों में दोनों प्रकार के गुण पाये जाते है।

9.5 व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारक

उपरोक्त विवेचन से व्यक्तित्व का अर्थ स्पष्ट हो जाता है लेकिन जब तक हम व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारकों को नहीं जान लेते तब तक व्यक्तित्व के बारे में समूचित जान पाना मुश्किल है। हम यह भी जानते हैं कि व्यक्ति के जीवन की प्रत्येक घटना उसके व्यक्तित्व को प्रभावित करती है। जो तीन प्रकारों पर आधारित है-

1- **जैविक आधार** - जैविक कारक से तात्पर्य ऐसे कारकों से होता है जो आनुवांशिक होते है। जो जन्म से या जन्म से पहले गर्भाधारण के समय से ही व्यक्ति में मौजूद होते हैं जो व्यक्ति को प्रभावित करते हैं। जीवविज्ञानी मानते हैं कि व्यक्तित्व को प्रभावित करने में शरीर की रचना प्रमुख होती है, उनका मानना है कि शारीरिक विशेषताओं के अनुसार ही व्यक्ति अपनी विशेष परिस्थियों में अनुकूलन करता है। इस प्रकार अनेक विद्वान आज भी व्यक्ति की सफलता/असफलता को शारीरिक रचना से सम्बन्धित मानते है। जीववादी व्यक्तित्व को प्रभावित करने में शरीर रचना के योगदान को वंशानुक्रम, नाड़ीतंत्र, अन्त:स्त्रावी ग्रन्थियॉं और बौद्धिक योग्यता के महत्व को स्वीकारा है।

a- **वंशानुक्रम** : वंशानुक्रम वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बच्चा अपने माता पिता के गुणसूत्र तथा वाह कणुओं के द्वारा विभिन्न शारीरिक व मानसिक विशेषतायें प्राप्त करता है। शारीरिक रचना से सम्बन्धित ये शीलगुण वंशानुगत हाते है। जैसे - प्राय: यह देखा गया है कि लम्बे माता पिता के बच्चे लम्बे तथा गौरे माता पिता के बच्चे गौरे होते है। कभी-कभी बच्चों की शारीरिक रचना अपने माता पिता से न मिलकर अपने पूर्वजों से भी मिलती है। एक व्यक्ति गोरा, लम्बा, सुस्त, मेहनती, आकर्षक, भद्दा, मुर्ख, बुद्धिमान आदि कैसा होगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि उसे अपने वंशानुक्रम में किस प्रकार के जीन प्राप्त हुये हैं।

b- नाड़ी तंत्र : नाड़ीतंत्र का कार्य शरीर रचना को गति देने के साथ-साथ विचारों व आदतों का निर्माण करना भी है। व्यक्ति का नाड़ी तंत्र तीन भागों में विभकत है।

1. मस्तिष्क **2.** रीढ़ सम्बन्धी तंतु **3.**सेरेब्रल कोर्टेक्स

c- अन्त:स्त्रावी ग्रन्थियॉं : अन्त:स्त्रावी ग्रन्थियों का महत्व व्यक्तित्व के निर्धारण में बहुत है। इससे निकलने वाला स्त्राव हारमोन्स कहलाता है और व्यक्तित्व के विकास को प्रभावित करता है। जैसे- कण्ठ ग्रन्थि से थाइराक्सिन नामक हारमोन्स निकलता है। अगर थायराक्सिन नामक हारमोन्स बचपन में ही कम हो जाता है तो व्यक्ति बौना हो जाता है। इस प्रकार विभिन्न अन्त: स्त्रावी ग्रन्थियॉं व्यक्ति को प्रभावित करती है।

2- समाजिक कारक - उपरोक्त तीनों आधारों को देखने के बाद यह कहना उचित है कि व्यक्तित्व के विकास में मात्र एक कारक को श्रेष्ठता देना अन्य कारकों की अवेहलना करने जैसा है।व्यक्ति, समाज एवं संस्कृति के तीनों कारण मिलकर ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। इसलिए किम्बल यंग ने कहा है कि ‘‘व्यक्तित्व का विकास सामाजिक सांस्कृतिक घेरे में ही काम करता है जो व्यक्ति के जैविकीय आधार पर निर्भर है।’’

व्यक्ति की शारीरिक रचना एक निष्क्रिय कारक है, जवकि समाज व्यकितत्व के निर्माण का सक्रिय कारक है। इसी को स्पष्ट करते हुये किम्बालयंग ने लिखा है कि ‘‘समाज वह रंगमंच है जिसमें व्यक्तित्व का विकास होता है।’’ समाज व्यक्ति को जिन दो प्रमुख प्रक्रियाओं द्वारा प्रभावित करता है उन्हे हम सामाजिक अन्त:क्रियाओं की प्रक्रिया तथा सामाजीकरण की प्रक्रिया कह सकते है।

समाजिक अन्त: क्रियाऐं व्यक्तित्व के निर्माण का महत्वपूर्ण माध्यम है जो मुख्यत: तीन प्रकार की होती है-

1- व्यक्ति की व्यक्ति के प्रति अन्तक्रिया।

2- समूह व व्यक्ति की अन्तक्रिया।

3- एक समूह से दूसरे समूह की अन्तक्रिया।

3- **सांसकृतिक आधार** - सांस्कृतिक सिद्धान्त के अनुसार व्यक्तित्व के निर्माण का आधारभूत कारक व्यकित का सांस्कृतिक पर्यावरण है। सांस्कृतिक पर्यावरण ही यह निष्चित करता है कि व्यकित में किस प्रकार की मनोवृतियॉं, विचार, आदतें और सामाजिक मूल्यों के प्रति निष्ठा उत्पन्न होगी। व्यक्ति के व्यवहार प्रतिमानों का निर्धारण भी उसकी सांस्कृतिक विशेषताओं के आधार पर ही होता है।

9.6 केरियर के विकास में व्यक्तित्व को प्रभावी बनाने वाले कारक

एक सफल और सन्तोष जनक केरियर के बारे में सोचतें हैं तो पहले खुद को समझने की जरूरत है। कार्यस्थल पर सबसे अच्छा प्रदर्शन करने के लिए सीखने की जरूरत होती है। कैरियर के विकास में महत्व पूर्ण कारकों में से कुछ इस प्रकार है-

1- **रोजगार से संतुष्टि :-** रोजगार अथवा व्यवसाय के लिए व्यक्ति के व्यक्तित्व व जब नौकरी व्यक्ति के मूल्यों और नजरिये के साथ कतार में है तो सबसे मजबूत पहलुओं में नौकरी से संतुष्टि अपने उच्चतम शिखर पर है । कर्मचारी व संगठन के बीच फिट है। एक संगठन की प्रकृति और संस्कृति के मामले में कर्मचारी और संगठन के बीच फिट प्रत्यक्ष रूप से एक कर्मचारी के कैरियर के विकास, प्रदर्शन और सफल होने की सम्भावना है, तो प्रभावित करता है।

2- **नेतृत्व कौशल :-** तनाव के साथ सामना करने की क्षमता को प्रभावी ढ़ंग से आज के कार्यस्थल में कैरियर की सफलता के लिए नेतृत्व कौशल कैरियर के विकास में एक और महत्वपूर्ण कारक है।

3- मूल्यांकन :- उपकरण, व्यक्तियों, कार्य शैली को अपनी पसंदीदा गतिविधियों को समझने में मदद मिलती है। अन्य लोगों के साथ काम करने के बेहतरीन तरीके जानने के लिए और अच्छा प्रबन्धन कर सकते हैं। मूल्यांकन को पूरा करने के लिए एक व्यक्ति को पूरा लाभ अपने या अपने कैरियर के विकास के लिए और अधिक प्रभावी बनाता है।

4- व्यवहार- इसके अन्तर्गत व्यक्ति की आन्तरिक एवं बाहरी प्रतिक्रिया सुलभ होनी चाहिये।

5- चरित्र - कार्यस्थल पर व्यक्ति को अपने चरित्र पर ध्यान देना चाहिये अर्थात चरित्रवान होना चाहिये। भवनात्मक, संज्ञानात्मक व व्यवहारिक होना चाहिये।

6- **अनुभूति**- कार्यस्थल पर दिये गये आदेश को जानना एवं मानना चाहिये। याद करने के लिए संज्ञानात्मक क्षमता होनी चाहिये।

7- आकर्षण- आकर्षक व्यक्तित्व पेशेवर जीवन के लिए महत्वपूर्ण है। व्यक्ति अपनी कुशल एवं योग्यता के द्वारा अपनी बात को मनवा सके यह तभी सम्भव है जब वह आकर्षक व्यक्तित्व रखता हो।

8- **सकारात्मकता-** व्यक्ति किसी भी कार्य को करने के लिए अपनी सोच सकारात्मक रख कर कार्य कार्य करे तो निश्चित ही सफलता उसके कदम चूमती है।

9.7 व्यक्तित्व विकास की आवश्यकता

आप एक सफल केरियर चाहते हैं तो एक पेशेवर रवैया विकसित करें इस क्षेत्र में बाहर की और देखें जहॉ सम्पूर्ण जगत में प्रतियोगिता है। इसके लिए पेशेवर होना आवश्यक है। पेशेवर रवैये के लिए दिये गये पहलूओं का ध्यानपूर्वक अध्ययन करें।

1- **आकर्षक व्यक्तित्व :-** आकर्षक व्यक्तित्व पेशेवर जीवन के लिए महत्वपूर्ण है। पेशेवरों के लिए एक आकर्षक व्यक्तित्व होना चाहिये क्योंकि इनको विभिन्न लागों के साथ बैठक में शामिल होकर अपनी बात कहनी होती है। अपनी टीम का नेतृत्व करना होता है और अपने सहाकर्मियों को साथ लेकर आगे बढ़ना होता है। आपको लगातार लोगों से वार्तालाप कर उनको प्रभावित करना होता है।

2- **मुस्कराहटः-**कार्यस्थल पर आपके चेहरे पर हमेशा मुस्कान होनी चाहिये जिससे आप थके हुये तथा बीमार जैसे ना दिखें।

3- **कठौर वक्ता:-** पेशेवर होने के लिए आपको थोड़ा कठोर भी होना चाहिये जिससे आपके द्वारा दिये गये आदेशों का पालन हो सके।

4- **सकारात्मक रवैया:-** आप एक कठोर वक्ता के साथ - साथ कार्यकर्ताओं की मदद के लिए भी तैयार रहें जिससे कार्यकर्ताओं में सहानुभूति बनी रहै और कार्यकर्ताओं को संतुष्ट किया जा सके।

5- **पेशेवर व्यवहार:-** समय की पाबन्दी एक पेशेवर रवैया दर्शाता है। आपके हमेशा देर से आने की वजह से दूसरों पर इसका प्रभाव पड़ता है। इसलिए पेशेवर व्यवहार होना जरूरी है।

6- अच्छा व्यवहार:- न केवल हमारी पेशेवर सफलता हमारे तकनीकी कौशल पर निर्भर करती है बल्कि अपने व्यवहार पर निर्भर करता है, कि हम ठीक से व्यवहार करें और कार्य संतुष्टि करें तथा अपने सहकार्यकर्ता से विनम्रता से पेश आयें। अपने गुस्से पर पाबन्दी लगायें और सबसे जरूरी है कि आप दूसरों का सम्मान करें।

9.8 व्यक्तित्व विकास का महत्व

एक व्यक्ति का व्यक्तित्व अन्य लोगों के साथ उसकी उपस्थिति, विशेषताओं, रवैया, मानसिकता तथा व्यवहार को दर्शाता है। व्यक्तित्व विकास तनाव व संघर्ष को कम करने का एक रास्ता है। यह जीवन के उज्जवल पक्षों को देखने के लिए प्रोत्साहित करता है। एक मुस्कान के साथ बुरी परिस्थितियों का सामना एवं अपनी समस्याओं को नजरअन्दाज कर देना भी व्यक्तित्व का ही प्रभाव है।

व्यक्तित्व विकास आपके जीवन में एक सकारात्मक दृष्टिकोण के विकास में मदद करता है। एक नकारात्मक रूख के साथ व्यक्ति को हर परिस्थिति में एक समस्या पैदा होती है, इतना ही नहीं आस पास के लोगों के द्वारा आलोचना भी की जाती है। इस पूरी स्थिति का विश्लेषण कर एक उपयुक्त समाधान खोजने के प्रयास करे तो किसी भी समस्या का हल आसानी से निकाला जा सकता है। यदि समस्या के समय अपने आप को विचलित कर लिया गया तो समस्या का समाधान खोजने में और अधिक परेशानियों का सामना करना पड़ जाता है।

व्यक्ति को आस पास के लोगों से अच्छी तरह से व्यवहार करने के लिए यह आवश्यक है कि वह अन्य लोगों से भी विनम्रतापूर्वक व्यवहार करें, जिससे आप लोकप्रिय बन जायेंगे और सम्मान व गौरव भी अर्जित करेंगे। और यदि बुरा बर्ताव किया तो फिर आप सम्मान की मांग नहीं कर सकते। इसलिए व्यक्तित्व विकास द्वारा ही आपको आस पास के लोगों के साथ ही समाज में भी मान्यता व इज्जत प्राप्त होगी।

व्यक्तित्व विकास न केवल निजी जिन्दगी बल्कि पेशेवर जीवन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह एक अनुशासित व्यक्ति, समयनिष्ठ और उसके संगठन की परिसम्पत्ति बनता है। अनुशासित व्यक्ति एक लम्बा जीवन जी पाता है और अपने बॉस, साथी कर्मचारियों एवं दोस्तो के साथ परिवार , रिश्तेदारों में भी सम्मान दिलाता है। अच्छे व्यक्तित्व वाले व्यक्ति कभी किसी का मजाक नहीं उड़ाते और नही कभी किसी की आलोचना करते।

व्यक्तित्व विकास आपको प्रभावशाली व्यक्तित्व बनाने में मदद करता है, साथ ही संचार कौशल लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है जिसके कारण आप अपने विचारों को व्यक्त करने की कला में भी निपूण हो जाते जिसके कारण आप एक विश्वस्त बन जाते है।

9.9 छात्रों के लिए व्यक्तित्व विकास

स्कूल चरण एक छात्र के लिए सबसे महत्वपूर्ण चरण है। उसमे अपने शिक्षकों और सहपाठियों से अपने स्कूली समय में विभिन्न व्यक्तित्व लक्षण विकसित होते है। यह इस स्तर के बुरे प्रभावों को दूर करने के लिए बहुत मुश्किल है। इसलिए एक छात्र के लिए एक अच्छे व्यक्तित्व का विकास जरूरी है। जिसके लिए निम्नलिखित बहुमूल्य सुझाव है:-

1- हमेशा नई चीजों को जानने के लिए तैयार रहो।
2- समय एक छात्र के लिए सबसे मूल्यवान सम्पत्ति है, इसे बर्बाद ना करें।
3- हमेशा अपने बड़ों व शिक्षकों का सम्मान करें।
4- हमेशा अपने ज्ञान को बढ़ाने का प्रयास करें।
5- अपने शिक्षकों से प्रश्न पूँछने में संकोच नहीं करें। आत्म विश्वास से उचित सवाल पूँछते हैं तो शिक्षक पर भी इसका अच्छा प्रभाव पड़ता है।
6- हमेशा नम्रता रखें।
7- अपनी बुद्धि पर कभी भी गर्व नहीं करें।

विद्यार्थी उम्र व्यक्तित्व विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इसलिए अपना समय बर्बाद ना करें और जीवन में निरन्तर प्रयास करते रहें।

9.10 छात्रों के व्यक्तित्व विकास में माता पिता की भूमिका

माता पिता की भूमिका भी एक छात्र के व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण है, क्योंकि बच्चे की पहली पाठशाला उसके माता पिता ही होते हैं। इसी लिए माता पिता के व्यक्तित्व का प्रभाव अपने बच्चे पर अच्छा या बुरा पडता है। इसके लिए उन्हे सावधान रहना चाहिये। इसके लिए निम्न सुझाव है।:-

1- बच्चों के सामने कभी धुम्रपान नहीं करना चाहिये।
2- अच्छे अध्ययन की आदतें विकसित करने के लिए अपने बच्चे की मदद करें।
3- अपने बच्चे की तुलना अन्य से ना करें।
4- अपने बच्चे के साथ दोस्ती का व्यवहार करें।
5- अपने बच्चे के साथ उचित समय बितायें।
6- अपने बच्चे की प्रगति के बारे में पता लगाने के लिए शिक्षक बैठकों में भाग लें।
7- क्षमता से अधिक प्रदर्शन के लिए बच्चे पर अनावश्यक दबाव ना डालें।

इस तरह एक उदाहरण पेश कर बच्चे का व्यक्तित्व विकास करें।

9.11 छात्रों के व्यक्तित्व विकास में शिक्षकों की भूमिका

छात्रों को शिक्षक को एक आदर्श के रूप में देखना चाहिये। क्योंकि एक छात्र पर शिक्षक के व्यक्तित्व का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। इसीलिए शिक्षकों को भी छात्रों के व्यक्तित्व को विकसित करने की जरूरत है। छात्रों को अच्छा व्यक्तित्व वाला शिक्षक ही लाभ प्रदान करता है। समाज के लिए एक अच्छा नागरिक विकसित करने की जिम्मेदारी भी एक शिक्षक की ही होती है।

शिक्षकों का वयक्तित्व निम्न बिन्दुओं द्वारा दर्शाया गया है, कि शिक्षक को:-

1- आत्मविश्वास से लबरेज होना चाहिये।
2- छात्रों का सहायक होना चाहिये।
3- निष्पक्ष होना चाहिये।
4- अच्छा वक्ता होना आवश्यक है।
5- बुद्धिमान होना चाहिये।
6- छात्रों को प्रेरित करने वाला होना चाहिये।
7- सं्वेदनशील होना चाहिये।
8- दोस्ताना व्यवहार होना चाहिये।
9- स्वयं पर नियन्त्रण होना चाहिये।

9.12 साक्षात्कार के लिए व्यक्तित्व विकास

नौकरी चाहने वालों के लिए साक्षात्कार का सामना करना निश्चित ही है, क्यों कि कभी-कभी आप एक विशिष्ट नौकरी पाने में सक्षम हैं लेकिन आप साक्षात्कारकर्ता को प्रभावित नहीं कर सकते इसके लिए इन पहलूओं को ध्यान में रखकर साक्षात्कार से प्रभावित कर सकते हैं।

1 **प्रभावी लेखन:-** आपका लेखन सुस्पष्ट एवं सरल होना आवश्यक है। यदि आपका लेख स्पष्ट नहीं है या त्रुटिपूर्ण है तो साक्षात्कारकर्ता प्रभावित नहीं होगा और साक्षात्कार पर इसका बुरा प्रभाव पड़ेगा।
2 **पहला प्रभाव:-** साक्षात्कारकर्ता को पहले प्रभाव में ही यदि आपने संतुष्ट कर दिया तो बाकी प्रश्नों पर वह ज्यादा ध्यान न देकर आपको साक्षात्कार में अच्छे अंक प्रदान कर सकता है।
3 **कपड़ों की समझ:-** साक्षात्कार के समय आपके द्वारा पहने गये कपड़े साफ सुथरे एवं आकर्षक होने चाहिये अन्यथा इसका प्रभाव साक्षात्कार पर नकारात्मक होगा।
4 **संचार कौशल:-** साक्षात्कारकर्ता द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर सही ढ़ंग से व तार्किकता पूर्ण होने चाहियें और जितना पूछा गया हो उतना ही उत्तर देना चाहिये।
5 **स्वयं पर विश्वास:-** साक्षात्कार में पूछे गये प्रश्नों के उत्तर पूर्ण विश्वास से दिये जाने चाहिये। हडबडाहट नहीं होनी चाहिये।
6 **नम्रतापूर्ण वार्तालाप:-** साक्षात्कारकर्ता द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर बड़े ही सहज एवं सरलता से दिये जाने चाहिये जिससे साक्षात्कारकर्ता को प्रभावित किया जा सके।

9.13 सारांश

यह एक गम्भीर सोच का विषय है कि व्यक्ति को सांसारिक जीवन सही ढ़ंग से जीने के लिए अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करनी होती है। जिसके बिना मनुष्य का अस्तित्व कुछ भी नहीं आवश्यकताओं की पूर्ति धन के बिना सम्भव नहीं है और धन किसी रोजगार अथवा व्यवसाय के बिना नहीं कमाया जा सकता है। जीवन निर्धारण एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है इसमे जीवन के हर पहलू पर विचार किया गया है चाहे वह रोजगार, व्यवसाय से जुड़ा हुआ हो अथवा दैनिक जीवन से जिसमें व्यक्ति अपने लक्ष्य, योग्यता, व्यवहार मान-सम्मान, गौरव ख्याति आदि प्राप्त करता है। यह सभी

उसके व्यक्तित्व पर निर्भर करता है जैसा व्यक्ति का व्यक्तित्व होगा उसी के अनुरूप ही यह सब प्राप्त होगा यदि व्यक्तित्व सकारात्मक होगा तो उक्त सभी प्राप्त होंगे और नकारात्मक/बुरा होगा तो व्यक्ति जीवन में आगे नहीं बढ़ सकता और जीवन संघर्षपूर्ण एवं कठोर होगा।

9.14 शब्दावली

- **व्यक्तित्व** - व्यक्तित्व शीलगुणों का एक समन्वित पैटर्न है।

9.16 अभ्यास प्रश्न

1- व्यक्तित्व विकास का अर्थ, परिभाषा देते हुये इसकी आवश्यकता एवं महत्व को स्पष्ट कीजिये?

2- व्यक्तित्व को प्रभावी बनाने वाले कारकों का विश्लेषण करते हुये उदाहरण सहित बताइये कि साक्षात्कार के लिए व्यक्तित्व विकास क्यों आवश्यक है ?

3- व्यक्तित्व एक आकर्षण है, जो व्यापार एवं रोजगार के लिए महत्वपूर्ण है। उदाहरण सहित समझाइये ?

4- निम्नलिखित कथन के आगे सही और गलत अंकित करें

a) व्यक्तित्व व्यक्ति के बाहय रूप को कहते है। ( )

b) सफल व्यक्तित्व के लिए आकर्षण जरूरी नहीं है। ( )

c) शिक्षक को एक अच्छा वक्ता होना आवश्यक है।

d) छात्र के व्यक्तित्व पर माता पिता के व्यक्तित्व का प्रभाव नहीं पड़ता है।( )

e) व्यक्तित्व विकास कार्यस्थल पर एक अनिवार्य भूमिका निभाता है।( )

f) प्रभावी लेखन का साक्षात्कार पर बुरा प्रभाव पडता है। ( )

उत्तर:- **1.** सही **2.** गलत **3.** सही **4.** गलत **5.** सही **6.** गलत

9.17 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- Donnellan, M.B.& Robins, R.W. (2009) The development of personality across the lifespan. In P.J. Corr & G. Matthews (Eds.), The Cambridge handbook of personality psychology New York, NY: Cambridge University Press.
- डॉ**0** अरूण कुमार सिंह, समाज मनोवैज्ञानिक की रूपरेखा प्रकाशन- मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली।
- डॉ**0** डी**0**एन**0** श्रीवास्तव**:** आधुनिक समाज मनोविज्ञान - हैर प्रसाद भार्गव, आगरा।
- डॉ आर**0**एन**0**सिंह**:** आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
- WWW.achhikhabar.com
- WWW.jobs.ac.uk/careers...
- Shiklo.jointaca.com/personality..

Unit – 10

Functional English

Structure of the Unit

10.1 Introduction
10.2 Aims and Objective
10.3 Functional English: An Introduction
10.4 Reading Skill
10.5 Writing Skill
10.6 Listening Skill
10.7 Speaking Skill
10.8 Function of Functional English
10.9 Summary
10.10 Glossary
10.11 Reference/ Bibliography
10.12 Questions for Evaluation

10.1 Introduction

Functional English is usage of the English language required to perform a specific function. This is typically taught as a foundation chapter at B.Ed. level, as a very good command of English is often required for academic study and career progression in our country. In some cases, a particular form of technical English may be required for a particular vocation such as teaching. Such specialized usage is known and taught as English for Specific Purposes, especially to develop communication skills at written and verbal level both. Since English is recognized as the global language, to excel in the field of any carrier you required to be well- equipped with the functional English.

10.2 Aims and Objectives

After studying this unit you will be able to-

- Ability to respond quickly and accurately in speech situations
- Knowledge of sufficient vocabulary to use with grammar patterns.

- A practical command of the four skills of the language with special emphasis on oral and writing skill.
- Ability to produce accuracy in both pronunciation and grammar
- Ability to have automatic control of basic structures and sentence patterns.
- To enable the learner to acquire competence in different linguistic functions to reinforce the various sub-skills related to reading, writing, listening and speaking.

10.3 Functional English: An Introduction

Functional English equips students with the necessary knowledge, skills and understanding to use and apply English in everyday life. Gaining these skills will ensure your students can get the most out of their future work and education. Functional English is a separate stand-alone qualification that can be taken whenever your students are ready. Students need to pass Reading, Writing and Speaking, Listening and Communication to gain the qualification.

Teaching of functional English should be based on skill based communicative approach is in Functional English with graded texts followed by learner centred activities. It is recommended that teachers consciously take a back seat, playing the role of a manager, coordinator and facilitator.

This functional English is used in various situations like……

1. Greeting Friends, elders, superiors, strangers
2. Introducing self & others
3. Making Telephone calls or answering them
4. Asking for or giving information
5. Asking for things in shops, counters & restaurants
6. Describing things, people, places or processes
7. Expressing opinions or reactions to programmes, plays, books or films
8. Participating in discussions & debates
9. Giving or receiving Instructions
10. Narrating anecdotes, stories & discussing them
11. Carry on sustained conversation with friends or strangers
12. Giving a report of an event

Without having the expertise in English language the progress in career may be hindered so one should be equipped with the good writing and speaking English

language. Basically there are four language skills which are clearly mentioned through a pictorial presentation for you better understanding. To have better command over English you need to be fluent in all the four language skills mentioned in the pictorial presentation.

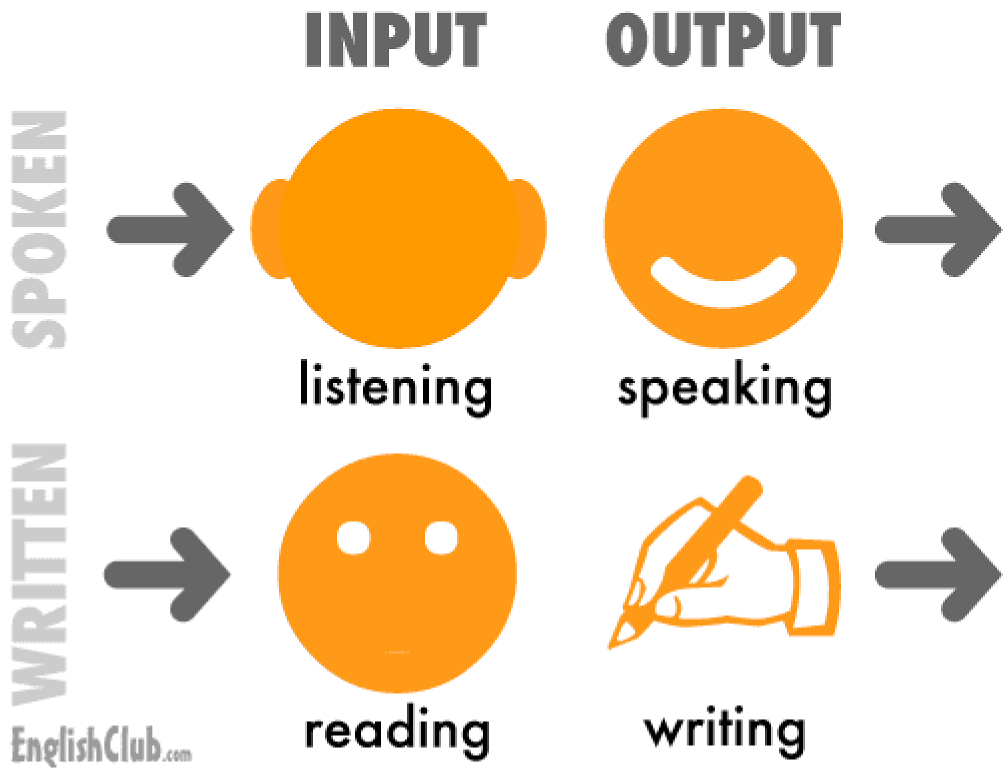

Figure1: Pictorial presentation of language skill (Source: englishclub.com)

Question for exercise

1. What do you mean by functional English?

   ----

2. Explain the usage of four language skills with the help of pictorial presentation.

----

3. In what situation there is a need of functional English? Explain in detail.

10.4 Reading Skill

"Reading" is the process of looking at a series of written symbols and getting meaning from them. When we read, we use our eyes to receive written symbols (letters, punctuation marks and spaces) and we use our brain to convert them into words, sentences and paragraphs that communicate something to us. Reading can be silent (in our head) or aloud (so that other people can hear).

Reading is a receptive skill - through it we receive information. But the complex process of reading also requires the skill of speaking, so that we can pronounce the words that we read. In this sense, reading is also a productive skill in that we are both receiving information and transmitting it (even if only to ourselves). Language teachers are often frustrated by the fact that students do not automatically transfer the strategies they use when reading in their native language to reading in a language they are learning. Instead, they seem to think reading means starting at the beginning and going word by word, stopping to look up every unknown vocabulary item, until they reach the end. When they do this, students are relying exclusively on their linguistic knowledge, a bottom-up strategy. One of the most important functions of the language teacher, then, is to help students move past this idea and use top-down strategies as they do in their native language.

Effective language teachers show students how they can adjust their reading behavior to deal with a variety of situations, types of input, and reading purposes. They help students develop a set of reading strategies and match appropriate strategies to each reading situation.

Strategies that can help students read more quickly and effectively include

- **Previewing:** reviewing titles, section headings, and photo captions to get a sense of the structure and content of a reading selection
- **Predicting:** using knowledge of the subject matter to make predictions about content and vocabulary and check comprehension; using knowledge of the text type and purpose to make predictions about discourse structure; using knowledge about the author to make predictions about writing style, vocabulary, and content
- **Skimming and scanning**: using a quick survey of the text to get the main idea, identify text structure, confirm or question predictions
- **Guessing from context:** using prior knowledge of the subject and the ideas in the text as clues to the meanings of unknown words, instead of stopping to look them up
- **Paraphrasing:** stopping at the end of a section to check comprehension by restating the information and ideas in the text

Teachers can help students learn when and how to use reading strategies in several ways.

- By modeling the strategies aloud, talking through the processes of previewing, predicting, skimming and scanning, and paraphrasing. This shows students how the strategies work and how much they can know about a text before they begin to read word by word.
- By allowing time in class for group and individual previewing and predicting activities as preparation for in-class or out-of-class reading. Allocating class time to these activities indicates their importance and value.
- By using cloze (fill in the blank) exercises to review vocabulary items. This helps students learn to guess meaning from context.
- By encouraging students to talk about what strategies they think will help them approach a reading assignment, and then talking after reading about what strategies they actually used. This helps students develop flexibility in their choice of strategies.

When language learners use reading strategies, they find that they can control the reading experience, and they gain confidence in their ability to read the language.

Reading to Learn :

Reading is an essential part of language instruction at every level because it supports learning in multiple ways.

- **Reading to learn the language:** Reading material is language input. By giving students a variety of materials to read,language teachers provide multiple opportunities for students to absorb vocabulary, grammar, sentence structure, and discourse structure as they occur in authentic contexts. Students thus gain a more complete picture of the ways in which the elements of the language work together to convey meaning.
- **Reading for content information:** Students' purpose for reading in their native language is often to obtain information about a subject they are studying, and this purpose can be useful in the language learning classroom as well. Reading for content information in the language classroom gives students both authentic reading material and an authentic purpose for reading.
- **Reading for cultural knowledge and awareness:** Reading everyday materials that are designed for native speakers can give students insight into the lifestyles and worldviews of the people whose language they are studying. When students have access to newspapers, magazines, and Web sites, they are exposed to culture in all its variety, and monolithic cultural stereotypes begin to break down.

When reading to learn, students need to follow four basic steps:

1. Figure out the purpose for reading. Activate background knowledge of the topic in order to predict or anticipate content and identify appropriate reading strategies.
2. Attend to the parts of the text that are relevant to the identified purpose and ignore the rest. This selectivity enables students to focus on specific items in the input and reduces the amount of information they have to hold in short-term memory.
3. Select strategies that are appropriate to the reading task and use them flexibly and interactively. Students' comprehension improves and their confidence increases when they use top-down and bottom-up skills simultaneously to construct meaning.
4. Check comprehension while reading and when the reading task is completed. Monitoring comprehension helps students detect

inconsistencies and comprehension failures, helping them learn to use alternate strategies.

10.5 Question for exercise

1. What do you mean by reading skill?

----

2. In how many ways reading supports the learning? Explain.

----

3. Explain about the four basic steps which are required in reading to learn?

----

4. What strategies may be utilized by the students to read more quickly and effectively? Explain.

10.6 Writing Skill

Writing is the process of using symbols (letters of the alphabet, punctuation and spaces) to communicate thoughts and ideas in a readable form. To write clearly it is essential to understand the basic system of a language. In English this includes knowledge of grammar, punctuation and sentence structure. Vocabulary is also necessary, as is correct spelling and formatting. Writing is a medium of human communication that represents language and emotion through the inscription or recording of signs and symbols. In most languages, writing is a complement to speech or spoken language. Writing is not a language but a form of technology that developed as tools developed with human society. Within a language system, writing relies on many of the same structures as speech, such as vocabulary, grammar and semantics, with the added dependency of a system of signs or symbols. The result of writing is generally called text, and the recipient of text is called a reader. Motivations for writing include publication, storytelling, correspondence and diary. Writing has been instrumental in keeping history, maintaining culture, dissemination of knowledge through the media and the formation of legal systems.

Remember Basic Rules for Good Written English

It is important that you pay attention to the basic rules for good written English - accurate spelling and correct use of grammar and punctuation. Errors of spelling are best avoided by careful proof reading - and you should never rely simply on your word processor's spell check function. Proof reading is something you should allow time for as part of your structure for re-drafting your work.

Grammar and punctuation can be more difficult to get right, particularly if English is not your first language. For more advice, read the University's Grammar Study Guides:

I. Sentence Structure
II. Using Paragraphs
III. Using Colons and Semi-Colons
IV. Using Apostrophes
V. Using Commas

A student should be capable in expressing their idea in the following manner

1. Use Suitable Registers

2. Use Vocabulary To Write About A Range General Vocational Subject Area.
3. Formal Letters -Leave Application, Permission, Invitation& Replies, Complaints &
4. Replies
5. Draft Letters To The Editor
6. Script Newspaper/Magazine Articles
7. Write About Specific Problems At Work
8. Draft Work Related Reports
9. Describe People, Processes, Functions, Events/Happenings
10. Draft A Written Role-Play Of An Academic Issue/On-Job Situation
11. Design Posters-Commercial/Non-Commercial
12. Draft Circulars And Notices
13. Define Simple Day-To-Day Objects, Places, Persons, Devices, Tools Etc [Can Be
14. Based On A Visual
15. Write A Job Application (With / Without Resume)
16. Draft Formal And Informal Invitations And Replies

There is no second opinion that effective writing emerges from the access to the right resources and guidelines. Of course, with lively and original ideas, many students may write succinctly, and gain marks in the examination, but those who write fluently and accurately should also be able to achieve good results, even if their ideas are pedestrian. Hence, clear guidelines have been incorporated in the design of the activities, to strike a balance between students need to think for themselves and need to achieve learning outcomes in tangible and concrete terms. The writing ability should not only enable the students to produce clear and correct sentences but also help them to write extended pieces of writing through effective and efficient linking of ideas. The activity may be based on inputs such as letters, e-mails, notes, dialogues, excerpts from conversation and messages, besides visuals such as diagrams, pictures and simple graphical representations, flowcharts, advertisements, posters, notes, extracts from speeches etc.

Contextualisation: Before putting pen to paper, the skilled writer contemplates two important questions:

a) What is the purpose of this piece of writing? The purpose of writing will influence the choice of organisation and the choice of language.
b) For whom I am writing this?

Question for Exercise

1. What do you mean by contextualization?

----

2. What basic rules for good written English is required? Explain

----

----

3. What do you mean by writing and writing skill? Explain.

10.7 Listening Skill

Listening is receiving language through the ears. Listening involves identifying the sounds of speech and processing them into words and sentences. When we listen, we use our ears to receive individual sounds (letters, stress, rhythm and pauses) and we use our brain to convert these into messages that mean something to us. Listening in any language requires focus and attention. It is a skill that some people need to work at harder than others. People who have difficulty concentrating are typically poor listeners. Listening in a second language requires even greater focus. Like babies, we learn this skill by listening to people who already know how to speak the language. This may or may not include native speakers. For practice, you can listen to live or recorded voices. The most important thing is to listen to a variety of voices as

often as you can. To become a fluent speaker in English or in any other language, you need to develop strong listening skills. Listening not only helps you understand what people are saying to you. It also helps you to speak clearly to other people. It helps you learn how to pronounce words properly, how to use intonation, and where to place stress in words and sentences. This makes your speech easier for other people **listening to you** to understand!

Adults spend an average of 70% of their time engaged in some sort of communication, of this an average of 45% is spent listening compared to 30% speaking, 16% reading and 9% writing. (Adler, R. et al. 2001).

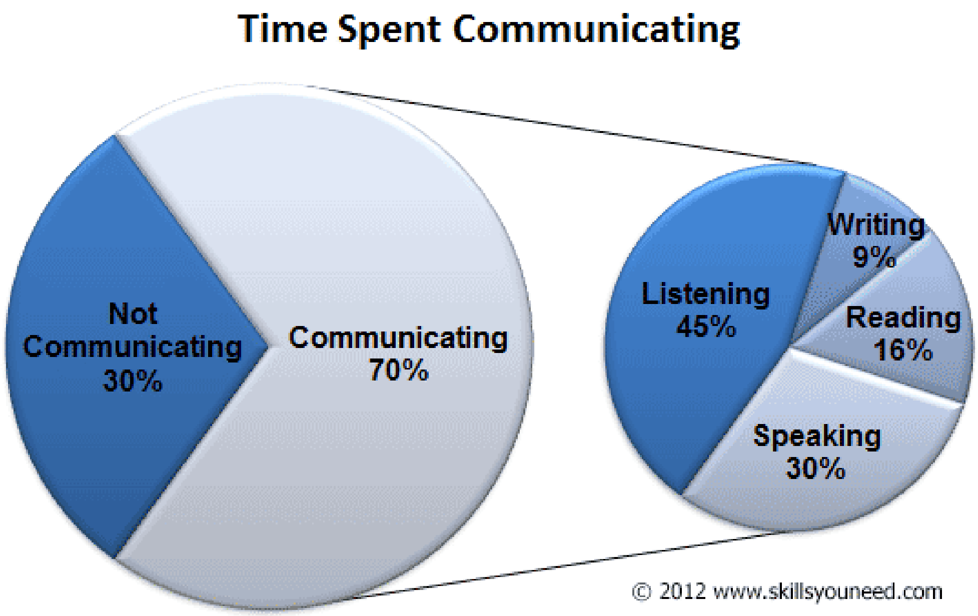

Figure 2: Time spent on communicating (Source : www.skillsyouneed.com)

Listening is basically the absorption of the meanings of words and sentences by the brain. Listening leads to the understanding of facts and ideas. But listening takes attention, or sticking to the task at hand in spite of distractions. It requires concentration, which is the focusing of your thoughts upon one particular problem. A person who incorporates listening with concentration is actively listening. Active listening is a method of responding to another that encourages communication.

Listening is a very important skill, especially for language teachers. Many language teachers tend to talk too much during a tutorial session. This defeats the purpose of tutoring, which is to allow students to learn by discussion. Rather than turning the session into a mini-lecture, language teachers must actively listen and encourage their students to become active learners. Giving a

student your full attention is sometimes difficult because you start to run out of time, or you find yourself thinking about your next question; however, the time you spend actively listening to your student will result in a quality tutoring session. Below a chart is being given for better understanding of poor listening habits and good listening habits.

Poor Listening Habits and Good Listening Habits

Poor Listening Habits	**Poor Listeners...**	**Good Listeners...**
Criticizing a speaker	criticize the speaker's voice, clothes, or looks. Therefore, they decide that the speaker won`t say anything important.	realize that a lecture is not a popularity contest. Good listeners look for the ideas being presented, not for things to criticize.
Finding fault with the speaker	become so involved in disagreeing with something the speaker states that they stop listening to the remainder of the lecture	listen with the mind, not the emotions. Good listeners jot down something they disagree with to ask the speaker later, then go on listening.
Allowing yourself to be distracted	use little distractions -- someone coughing, a pencil dropping, the door opening and closing -- as an excuse to stop listening.	filter out distractions and concentrate on what the speaker is saying.
Faking attention	look at the speaker but don't listen. They expect to get the material from the textbook later.	understand that speakers talk about what they think is most important. Good listeners know that a good lecture may not contain the same information as the textbook.
Forcing every lecture into one format	outline the lecture in detail. The listener is so concerned with organization that he	adjust their style of note-taking to the speaker's topic and method of organization.

	misses the content.	
Listening only for facts	only want the facts. They consider everything else to be only the speaker's opinion.	want to see how the facts and examples support the speaker's ideas and arguments. Good listeners know that facts are important, because they support ideas.
Listening to only the easy material	think it is too difficult to follow the speaker's complicated ideas and logic.A poor listener wants entertainment, not education.	want to learn something new and try to understand the speaker's point. A good listener is not afraid of difficult, technical, or complicated ideas.
Calling a subject boring	decide a lecture is going to be dull and "turn out" the speaker.	listen closely for information that can be important and useful, even when a lecture is dull.
Overreacting to "push button" emotional words	get upset at words which trigger certain emotions -- words such as communist, income tax, Hitler or abortion. Emotion begins and listening ends.	hear these same words. When they do, they listen very carefully. A good listener tries to understand the speaker's point of view.
Wasting thought speed	move along lazily with the speaker even though thinking is faster than speaking. A poor listener daydreams and falls behind.	use any extra time or pauses in the lecture to reflect on the speaker's message. They think about what the speaker is saying, summarize the main points, and think about the next points.

Question for exercise

1. What do you understand by listening skill?

----

2. Write a note on poor listening habits and good listening habits**.**

----

3. Write a note on time spent on communicating.

10.8 Speaking Skill

Speaking is the delivery of language through the mouth. To speak, we create sounds using many parts of our body, including the lungs, vocal tract, vocal chords, tongue, teeth and lips. Students often think that the ability to speak a language is the product of language learning, but speaking is also a crucial part of the language learning process. Effective language teachers teach students speaking strategies -- using minimal responses, recognizing scripts, and using language to talk about language -- that they can use to help themselves expand their knowledge of the language and their confidence in using it. These language teachers help students learn to speak so that the students can use speaking to learn.

1. **Using minimal responses:** Language learners who lack confidence in their ability to participate successfully in oral interaction often listen in silence while others do the talking. One way to encourage such learners to begin to participate is to help them build up a stock of minimal

responses that they can use in different types of exchanges. Such responses can be especially useful for beginners.

Minimal responses are predictable, often idiomatic phrases that conversation participants use to indicate understanding, agreement, doubt, and other responses to what another speaker is saying. Having a stock of such responses enables a learner to focus on what the other participant is saying, without having to simultaneously plan a response.

2. **Recognizing scripts:** Some communication situations are associated with a predictable set of spoken exchanges -- a script. Greetings, apologies, compliments, invitations, and other functions that are influenced by social and cultural norms often follow patterns or scripts. So do the transactional exchanges involved in activities such as obtaining information and making a purchase. In these scripts, the relationship between a speaker's turn and the one that follows it can often be anticipated.

   Instructors can help students develop speaking ability by making them aware of the scripts for different situations so that they can predict what they will hear and what they will need to say in response. Through interactive activities, language teachers can give students practice in managing and varying the language that different scripts contain.

3. **Using language to talk about language:** Language learners are often too embarrassed or shy to say anything when they do not understand another speaker or when they realize that a conversation partner has not understood them. Language teachers can help students overcome this reticence by assuring them that misunderstanding and the need for clarification can occur in any type of interaction, whatever the participants' language skill levels. Language teachers can also give students strategies and phrases to use for clarification and comprehension check.

   By encouraging students to use clarification phrases in class when misunderstanding occurs and by responding positively when they do, language teachers can create an authentic practice environment within the classroom itself. As they develop control of various clarification strategies, students will gain confidence in their ability to manage the various communication situations that they may encounter outside the classroom.

This vocalized form of language usually requires at least one listener. When two or more people speak or talk to each other, the conversation is called a "dialogue". Speech can flow naturally from one person to another in the form of dialogue. It can also be planned and rehearsed, as in the delivery of a speech or presentation. Of course, some people talk to themselves! In fact, some English learners practise speaking standing alone in front of a mirror.

Speaking can be formal or informal:

4. Informal speaking is typically used with family and friends, or people you know well.
5. Formal speaking occurs in business or academic situations, or when meeting people for the first time.

Speaking is probably the language skill that most language learners wish to perfect as soon as possible. It used to be the only language skill that was difficult to practice online. This is no longer the case. English learners can practice speaking online using voice or video chat and services like Skype. They can also record and upload their voice for other people to listen to.

10.9 Function of functional English

Functional English is usage of the English language required to perform a specific function. This is typically taught as a foundation subject as a good command of English is often required for academic and career progression this functional English is used in various situations like……

1. Greeting Friends, elders, superiors, strangers
2. Introducing self & others
3. Making Telephone calls or answering them
4. Asking for or giving information
5. Asking for things in shops, counters & restaurants
6. Describing things, people, places or processes
7. Expressing opinions or reactions to programmes, plays, books or films
8. Participating in discussions & debates
9. Giving or receiving Instructions
10. Narrating anecdotes, stories & discussing them
11. Carry on sustained conversation with friends or strangers
12. Giving a report of an event

Question for Exercise

1. What is the function of functional English? Explain in detail.

   ----

2. What do you understand by functional English?

10.9 Summary

Functional English is usage of the English language required to perform a specific function. This is typically taught as a foundation chapter at B.Ed. level, as a very good command of English is often required for academic study and career progression in our country. For better understanding of language, one must be equipped with the four skill language formula.

I. Listening
II. Writing
III. Speaking
IV. Reading

10.10 Glossary

- **Functional English:** Functional English is usage of the English language required to perform a specific function.
- **Listening:** Listening is receiving language through the ears. Listening involves identifying the sounds of speech and processing them into words and sentences.
- **Writing:** Writing is the process of using symbols (letters of the alphabet, punctuation and spaces) to communicate thoughts and ideas in a readable form.

- **Reading:** "Reading" is the process of looking at a series of written symbols and getting meaning from them. When we read, we use our eyes to receive written symbols (letters, punctuation marks and spaces) and we use our brain to convert them into words, sentences and paragraphs that communicate something to us.
- **Speaking:** Speaking is the delivery of language through the mouth. To speak, we create sounds using many parts of our body, including the lungs, vocal tract, vocal chords, tongue, teeth and lips
- **Informal Speaking:** Informal speaking is typically used with family and friends, or people you know well.
- **Formal Speaking:** Formal speaking occurs in business or academic situations, or when meeting people for the first time.

10.11 Reference and bibliography

- चॉम्स्की, एन. 1957, सिनटेक्टिक स्ट्रक्चर्स, दी हेग: मौटेन कं.।
- चॉम्स्की, एन. 1959, रिव्यू ऑफ स्किनर्स वर्बल बिहेवियर. लैंग्वेजेस 35.1.26-58
- चॉम्स्की, एन. 1972, लैंग्वेज एंड माइंड, न्यूयार्क: हारकोर्ट ब्रास जोवानोविच।
- चॉम्स्की, एन. 1996, पॉवर्स एंड प्रोस्पेक्ट्स: रिफलेक्शंस ऑन ह्यूमन नेचर एंड द सोशल आर्डर, दिल्ली: माध्यम बुक्स।
- चॉम्स्की, एन. 1965, आस्पेक्ट्स ऑफ़्फ द थ्योरी ऑफ सिनटेक्स, कैंब्रिज : एम. आई. टी. प्रेस।
- चॉम्स्की, एन. 1986, नॉलेज ऑफ लैंग्वेज, न्यूयार्क : प्रागर।
- चॉम्स्की, एन. 1988, लैंग्वेज एंड प्रॉब्लम्स ऑफ़्फ नॉलेज, वैंफब्रिज, मास: एम. आई. टी.।
- दुआ, एच. आर. 1985, लैंग्वेज प्लानिंग इन इंडिया, दिल्ली: हरनाम पब्लिशर्स।
- हैबरमास, जे. 1998, ऑन द प्रागमैटिक्स ऑफ कम्युनिवेफशन, कैंब्रिज, मास: एम. आई. टी. प्रेस।
- हैबरमास, जे. 1998, दी फिलॉस्फिकल डिसकोर्स ऑफ़्फ मॉडर्निटी, कैंब्रिज, मास: एम. आई. टी. प्रेस।
- शिक्षा मंत्रालय, शिक्षा आयोग कोठारी कमीशन 1964 -1966, शिक्षा एवं राष्ट्रीय विकास, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार 1966

- नेशनल पॉलिसी ऑन एजुकेशन, 1986, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, शिक्षा विभाग, नयी दिल्ली।
- पटनायक, डी. पी. 1981, मल्टीलिंगुएलिज्म एंड मदस्टंग एजुवेफशन, ऑक्सपफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- पटनायक, डी. पी. 1986, स्टडी ऑफ लैंग्वेजेज, ए रिपोर्ट, नयी दिल्ली: एन.सी.ई.आर.टी।
- रिचड्र स, जे. सी. 1990, दी लैंग्वेज टीचिंग मैट्रिक्स, कैब्रिज :कैब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
- सायर, डी. 1924, दी इफेक्ट आफ बैलिंगुअलिज्म ऑन इंटेलिजेंस, ब्रिटिश जर्नल ऑप़फ साइकोलॉजी 14:25-38
- श्रीधर, के.के. 1989, इंग्लिश इन इंडियन बाइलिंग्वलिज्म,नयी दिल्ली, मनोहर।
- तिवारी, बी. एन., चतुर्वेदी, एम. और सिंह, बी. 1972 (संपादकगण), भारतीय भाषा विज्ञान की भूमिका, दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
- यूनेस्को, 2003, एजुवेफशन इन ए मल्टीलिंगुएल वल्ड, यूनेस्को एजुकेशन पोजिशन पेपर, पेरिस।
- व्योगोत्सकी, एल. एस. 1978, माइंड इन सोसायटी: दी डेवलपमेंट ऑप़फ हायर साइकोलॉजिकल प्रोसेस, वैंफब्रिज, मॉस: हार्वड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- जमील, वी. 1985, रेस्पोंडिंग टू स्टूडेंट राइटिंग, टी. ई. एस. ओ. एल. त्रौमासिक, 19.1
- इस वेबसाइट को जरूर देखें : http//www.languageindia.com

10.13 Essay type questions

1. What do you mean by functional English? Elaborate in your words.
2. What basic rules for good written English is required? Explain.
3. Explain in detail the four language skills.

इकाई -11

औद्योगिक संघ और अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाऐं- आईएलओ वर्ल्ड बैंक, एफआईसीसीआई, एएसएस ओसीएचएएम, CII और एनएसडीएस

Industry Associations and International Bodies ILO, WORLD BANK, FICCI , ASSOCHAM, CII and NSDS

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्योग संघ की भूमिका

11.1 उद्देश्य

11.2 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (**ILO**)

11.2.1 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (**ILO**) की संरचना

11.2.2 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (**ILO**) के कार्य

11.2.3 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (**ILO**)उद्देश्य

11.2.4 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (**ILO**) के मुख्य मुद्दे

11.3 विश्व बैंक (**World Bank**)

11.3.1 विश्व बैंक (**World Bank**) की संरचना

11.3.2 विश्व बैंक के पूँजी संसाधन (**Capital Resources of World Bank)**

11.3.3 विश्व बैंक (**World Bank**) के उद्देश्य

11.3.4 विश्व बैंक (**World Bank**) के कार्य

11.3.5 विश्व बैंक (**World Bank**) की आलोचना

11.4 एफआईसीसीआई (फिक्की)

11.4.1 एफआईसीसीआई (फिक्की) की संरचना

11.4.2 एफआईसीसीआई (**FICCI**) के उद्देश्य

11.4.3 एफआईसीसीआई (**FICCI**) के कार्य

11.5 एएसएसओसीएचएएम (**ASSOCHAM)**

11.5.1 एएसएसओसीएचएएम (**ASSOCHAM)** के कार्य

11.6 भारतीय उद्योग परिसंघ (**CII**) की भूमिका

11.6.1 भारतीय उद्योग परिसंघ (**CII**) की संरचना

11.6.2 भारतीय उद्योग परिसंघ (**CII**) के सहयोगी सदस्य

11.6.3 भारतीय उद्योग परिसंघ (**CII**) के कार्य

11.7 एनएसडीएस (**NSDS)**

11.7.1 एनएसडीएस (**NSDS**) डिजाइन की प्रक्रिया
11.8 सारांश
11.9 अभ्यास प्रश्न
11.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

11.0 उद्योग संघ की भूमिका

भारत में युद्व के बाद से अब तक नियोक्ताओं ओर व्यापार संघों औद्योगिक और वाणिज्य क्षेत्र में आर्थिक प्रदर्शन, अनुसंधान और विकास शिक्षा और प्रशिक्षण का उल्लेख नहीं किया गया है। इसी को ध्यान में रखते हुये उद्योग संघ द्वारा व्यापार एवं सरकार के सम्बन्धो में मध्यस्थ के रूप में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। और एक ही बाजार या क्षेत्र में संचालित व्यापार संघो का गठन कर आम हितों के साथ संगठनों और कम्पनियों को नम्बर एक बनाने में योगदान दिया है।

उद्योग संघ अपने सदस्यों के हितों को बढ़ावा देने और व्यवसायों के लिए सामूहिक सेवाऐं प्रदान करने के लिए सदैव तैयार रहता है। कई सक्रिय संगठन ब्रिटेन में कार्य कर रहे हैं। इसके अलावा भी छोटे - छोटे संगठन ओर भी बहुत हैं जो बिना पूर्णकालिक कर्मचारियों एवं उद्देश्यों के कार्य कर रहे है।

व्यापार संघ आमतौर पर औद्योगिक हितों को बढ़ावा देने के लिए Forum 1 के अनुसार कार्य कर रहे हैं जो उनकी सवाओं में शामिल है। जैसे लगातार काम कर रहे सदस्यों और क्षैत्रों में लाभप्रदता व प्रतिस्पर्धा में सुधार करने के लिए विधायी और विनियामक प्रक्रिया के सभी स्तरों पर हितों की जानकारी व आपूर्ति की सलाह सदस्यों को उपलब्ध कराने के लिए प्रयास करते हैं।

इसके अन्तर्गत सदस्यों को आवश्यक सलाह भी समय - समय पर देते रहते हैं जो निम्न हैं -

- जनसम्पर्क और संचार।
- बाजार के अवसरों को बढ़ावा देने के लिए प्रशिक्षण और शिक्षा।
- मानकों को बढ़ावा और सेवा की गुणवत्ता का ज्ञान देना।
- नवाचार और प्रौद्यौगिकी हस्तान्तरण को बढ़ावा देना।
- व्यवसायिक लाभ की पेषकष।

उद्योग संघों के लिए ट्रेडमार्क नम्बरों की अनिवार्य विशेषता रही है जो 20032 है। यह सदस्यों पर आधारित संगठन है जिसमें व्यवसाय से जुडे लोग ही सदस्य बनते हैं ना कि व्यक्तिगत सदस्य। इसके प्रबन्ध निकाय में इसके सदस्यों में से ही पदाधिकरी बनोये जाते हैं जो इसके सम्बन्ध में निर्णय करते है जिनकी सभी की सोच साझा हितों पर आधारित होती है।

आमतौर पर सरकारी विभागों व ऐजेन्सियों और नियामकों के लिए मिडिया और अन्य राय वाले सदस्यों के लिए संयुक्त प्रयासों से संगठन द्वारा कार्य किया जाता है। जिसकी सूचना सभी सदस्यों को भेजी जाती है।

व्यापार संघों द्वारा आमतौर पर सदस्य लिमिटेड कम्पनियों को गारन्टी के साथ- साथ वित व कर्मचारियों की सुविधा भी दी जाती है। किन्तु अब मॉडल बदल रहा है संघो द्वारा सदस्यों से काम के बदले राशि ली जाती है किन्तु लाभ के रूप में नहीं। संघ को आगे बढ़ाने व रेवन्यु कैसे प्राप्त की जाये इसके बारे में विचार किया जाता है।

एतिहासिक रूप से उच्च स्तर पर वैश्विक बेरोजगारी के साथ आर्थिक और सामाजिक नितियों के केन्द्र में रोजगार के लिए अच्छी नौकरियॉं आदि की जरूरतों को रेखांकित करता है। इसी आवश्यकता को मद्देनजर रख कर अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा समाज हित में कार्य किये जाते है। आज के इस वैश्वीकरण के युग में उद्योग जगत और विभिन्न विदेशी संस्थाओं द्वारा किस प्रकार से कार्य किया जाता है इसको हम निम्न उद्देश्यों की सहायता से समझ सकेंगे

11.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

- उद्योग संघ के बारे में जान सकेंगे।
- आईएलओ के बारे में जान सकेंगे।
- वर्ल्ड बैंक के बारे में जान सकेंगे।
- एफआईसीसी आई के बारे में जान सकेंगे।
- एएसएसओसीएचएएम के बारे में जान सकेंगे।
- CII के बारे में जान सकेंगे।
- एनएसडीएस के बारे में जान सकेंगे।

11.2 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO)

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) की अनूठी त्रिपक्षीय संरचना हे जो सामाजिक भागीदारी के विचारों को बारीकी से श्रम मानकों में नितियों और कार्यक्रमों को आकार देने में परिलक्षित हैं। यह पुरूष और महिला कर्मचारियों, नियोक्ताओं और सरकारों के लिए एक अच्छा मंच तैयार कर एक समान कार्य करते हैं। सभी के हक के लिए आवाज उठाते हैं। इसका कार्यालय जमैका में है यह सामाजिक न्याय पर आधारित सार्वभौमिक एवं स्थायी शान्ति के लिए इसकी स्थापना 1919 में संयुक्त राष्ट्र में की गई थी जिसे 1946 में पहली विशेष ऐजेन्सी का दर्जा प्राप्त हुआ। वर्तमान में इसके 185 देश सदस्य है। इसके महानिदेशक जुआन सोमाविआ हैं। इसके कुछ उद्देश्य व मुद्दे हैं जो आगे बताये गये है।

11.2.1 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) की संरचना

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) सरकार, नियोक्ता और कर्मचारी प्रतिनिधियों के साथ ही त्रीपक्षीय संयुक्त राष्ट्र ऐजेन्सी है। इस अनूठी त्रिपक्षीय संरचना में स्वतंत्र रूप में खुले तौर पर 185 सदस्य देश है। जिनका अनुठा मंच, विस्तृत मानकों और नितियों के तहत आता है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) का कार्यालय जिनेवा में है। जिसके परिचालन के लिए मुख्यालय में स्थायी सचिवालय है। जिसका प्रशासन एवं प्रबन्धन महानिदेशक के नेतृत्व में 40 से अधिक देशों में क्षेत्रिय

कार्यालय कार्य कर रहे हैं। महानिदेशक शासी निकाय द्वारा पॉच वर्ष के लिए चुने जाते है। जो शासी निकाय के निर्देशों के अधिन रहते हुये कार्य करते हैं। महानिदेशक अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय व अन्य कर्तव्यों के कुशल संचान के लिए जिम्मेदार होता है। प्रशासनिक अधिकरण के अनत्रगत अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय के अधिकारियों द्वारा अपने अधिकार क्षेत्रों में अन्य अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठनों के रोजगार से सम्बन्धित शिकायतों की जॉच को मान्यता दी है वर्तमान में सेवारत एवं 60 से अधिक पूर्व अधिकारी है। यह लगभग 46,000 अन्तर्राष्ट्रीय सिविल सेवकों के लिए खुला है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) सार्वभौमिक काम की दूनिया पर ज्ञान का एक अधिकारिक स्त्रोत के रूप में जाना जाता है।

11.2.2 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) **के कार्य**

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) के कार्य निम्न लिखित है -

1- अन्तर्निहित सामाजिक और आर्थिक प्रगति को बढ़ावा देने के लिए सरकार, नियोक्ता और कर्मचारियों के मध्य सहयोग करना ।
2- श्रम मानकों पर स्थापित नितियों को लागू करना।
3- श्रमिकों, नियोक्ताओं और सरकारों के साथ अपने विचार - विमर्श करना ।
4- समाजिक भागीदारों के विचारों को बारीकी से आइएलओ श्रम मानकों , नितियॉ और कार्यक्रमों को सुनिश्चित करना।
5- व्यवसायिक प्रशिक्षण, प्रबन्धन विकास, व्यवसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य, युवा कार्यकर्ताओं की विशेष समस्याओं का समाधान अपने विशेषज्ञों द्वारा करवाना।
6- सदस्य राज्यों की क्षैत्रिय बैठकों का आयोजन करवाना।
7- श्रम मामलों की जॉच करवाना।
8- अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन आयोजित करवाना।
9- कार्यक्रम व बजट तैयार करना।
10- अनुसंधान केन्द्र एवं पब्लिशिंगग हाउस की देखरेख करना।
11- विभिन्न शाखायें खोलना।

11.2.3 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) **उद्देश्य**

आई एल ओ का मुख्य उद्देश्य जो निम्नलिखित है-

1- **काम पर अधिकरों को बढ़ावा देना :-** वैश्विक अर्थव्यवस्था में अच्छे काम के लक्ष्य को हासिल करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्यवाही की आवश्यकता है। विश्व समूदाय व्यापार,, वित, पर्यावरण, मानवाधिकार और श्रम पर अन्तर्राष्ट्रीय कानूनी उपकरणों के विकास के हिस्से में इस चुनौति का जवाब है। इसके विस्तार आर्थिक वृद्धि और विकास के अच्छे काम साथ-साथ चलते हैं।
2- **सामाजिक सुरक्षा को बढ़ावा देना :-** व्यापक रूप से एक व्यापक पैमाने पर मानव कल्याण और सामाजिक आम सहमति को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्रतिस्पर्धा में योगदान देकर निष्पक्ष विकास, सामाजिक स्थिरता और आर्थिक प्रदर्शन के लिए अनुकूलन और अपरिहार्य माना जाता है। आज दुनिया की आबादी का केवल 20 फिसदी पर्याप्त सामाजिक सुरक्षा कवरेज किया है और आधे से ज्यादा कवरेज की कमी है।

कार्यस्थल पर गरीब या न के बराबर पेंशन और स्वास्थ्य बिमा कवरेज में खतरों का सामना सामाजिक सुरक्षा के द्वारा ही सम्भव है।

3- **समाजिक संरक्षण :-** सामाजिक सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय नितियॉं को लागू कराने के लिए सामाजिक संवाद को बढ़ावा देने के लिए सदस्य राज्यों को प्रोत्साहित करता है। यह सरकारों, नियोक्ताओं और मजदूरों के संगठनों, और ध्वनि श्रम सम्बन्धों की स्थापना के व सामाजिक जरूरतों को पूरा करने और श्रम प्रशासन में सुधार के लिए श्रम कानूनों को अनुकूलित करने में मदद करता है और उन्हे संरक्षण प्रदान करता है।

4- **अच्छे रोजगार के अवसरों के लिए प्रोत्साहित करना :-** कोई भी रिक्तियों को भरने में सर्वोपरि विचार योग्यता, क्षमता और अखण्डता के उच्चतम मानकों को एक कर्मचारी को प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। विस्तृत भौगोलिक आधार पर चयनित एक कर्मचारी को उसके लिंग व उम्र के कारणों पर विचार कर महत्वपूर्ण निर्णय लिया जाता है। इस पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना अधिकारियों द्वारा उम्र, जाति, लिंग, धर्म, रंग, राष्ट्रीय , सामाजिक मूल, वैवाहिक स्थिति, गर्भावस्था पारिवारिक जिम्मेदारियों, यौन वरियता, विकलांगता, संघ की सदस्यता, या राजनीतिक दृढ़ विस्वास के आधार पर भेदभाव के बिना चयन किया जाएगा।

5- **कार्य से सम्बन्धित बातचीत का मजबूत पक्ष रखना :-** यह मजदूरों एवं नियोक्ताओं और सरकारों के बीच उनके कार्यो को कानून के तहत करने के लिए प्रोत्साहित करता है उनको द्वारा किये गये कार्यों का उचित मानदेय और सुविधायें मिल सके और कार्यों से सम्बन्धित बातचीत का मजबूत पक्ष रखता है।जिससे किसी को भी कोई असुविधा नहीं होती है।

11.2.4 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) के मुख्य मुद्दे

- ✓ युवाओं को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना तथा प्रोत्साहन देना।
- ✓ 2015 के बाद के विकास का मुद्दा।
- ✓ समाजिक संरक्षण प्रदान करना।

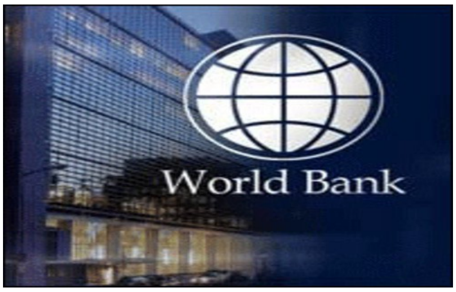

11.3 विश्व बैंक (World Bank)

विश्व बैंक की स्थापना सन 1944 में आज से लगभग 70 वर्ष पूर्व जॉन मेनार्ड कीन्स एवं हैरी डक्सटर व्हाइट द्वारा की गई थी। जिसका मुख्यालय वाषिंगटन डीसी, संयुक्त राज्य अमेरिका में है। विश्व बैंक को मुख्य उद्देश्य सम्पूर्ण विश्व में गरीबों के लिए नि:शुल्क कार्य करना है। यह एक प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक वित्तिय, कानून सम्बन्धि स्थिति का संगठन है। इसकी सदस्य संख्या

पूरे विश्व में 188 देशों ने ले रखी है। विश्व बैंक एक संयुक्त राष्ट्र वित्तिय संस्थान है। जो विकासशील देशों के लिए ऋण प्रदान करता है। यह संयुक्त राष्ट्र विकास समूह का एक सदस्य है। यह दुनिया के सबसे गरीब विकासशील देशों के लिए गरीबी उन्मूलन की रणनितियों के आधार पर सहायता की योजना बनाते है। सदस्य देश की सरकारे तो केवल गरीबी में कमी लाने के लिए देश की प्राथमिकताओं और लक्ष्यों की पहचान करती है और विश्व बैंक तदनुसार अपनी सहायता के प्रयास करता है। ''दुनिया के सबसे गरीब देशों के लिए सहयता'' में अस्सी गरीब देशों को ऋण वितरित करता है। जो विश्व बैंक अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ (आईडीए) के लिए चला जाता है।

11.3.1 विश्व बैंक (World Bank) की संरचना

विश्व बैंक समूह, संयुक्त राष्ट्र आर्थिक व सामाजिक परिषद के सदस्य हैं। जो गरीब देशों के लिए लीवरेज्ड ऋण देते हैं। इसके अध्यक्ष पूरे विश्व बैंक समूह के अध्यक्ष है। वर्तमान में **जिम योंग किम** अध्यक्ष हैं जो निदेशक मण्डल की बैठकों की अध्यक्षता के साथ-साथ समग्र प्रबन्धन के लिए जिम्मेदार हैं। परम्परानुसार बैंक का अध्यक्ष हमेशा संयुक्त राज्य अमेरिका से होता है जो कि यहॉं का सबसे बड़ा शेयर धारक होता है। नामांकित व्यक्ति पॉच वर्ष के लिए कार्यपालक निदेशक मण्डल द्वारा पुष्टि के अधीन नामित किया जाता है। विश्व बैंक निदेशक मण्डल समूह के अध्यक्ष व 25 कार्यकारी निदेशकों से मिलकर बनता है। राष्ट्रपति पीठासीन अधिकारी होता है जो आमतौर पर एक समान विभाजन के मामले में एक निर्णायक वोट डाल सकता है। कार्यकारी निदेशक अपनी किसी भी शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकते ना ही बिना अनुमति के किसी भी बैंक का प्रतिनिधित्व कर सकते हैं। ये पॉच अन्तर्राष्ट्रीय संघो से मिलकर बना है। जो निम्न है-

1- पुनर्निर्माण और विकास के लिए अन्तर्राष्ट्रीय बैंक (आईबीआरडी)

International Bank for Reconstruction and Development(IBRD)

2- अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ (आईडीए)

International Development Association(IDA)

3- अन्तर्राष्ट्रीय वित्त निगम (आईएफसी)

International Finance Corporation (IFC)

4- बहुपक्षीय निवेश गारन्टी ऐजेन्सी (एमआईजीए)

Multilateral Investment Guarantee Agency (MIGA)

5- निवेश विवादों को निपटाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सेन्टर (आईसीएसआईडी)

International Centre for Settlement of Investment Disputes (ICSID) जो

11.3.2 विश्व बैंक के पूँजी संसाधन (Capital Resources of World Bank)

विश्व बैंक की प्रारम्भिक अधिकृत पूँजी $ 10000 मिलियन थी जिसे $ 1 लाख प्रत्येक के 1 लाख शेयरों में विभाजित किया गया था। बैंक की अधिकृत पूँजी सदस्य देशों के अनुमोदन के साथ समय - समय पर बढ़ा दी गई है। अमेरिका के संयुक्त राज्य अमेरिका का सबसे बड़ा ग्राहक है।
30 जून 1996 को बैंक की अधिकृत पूँजी $ 188 करोड थी सिमे से $ 180.6 करोड (कुल अधिकृत पूँजी का 96%) शेयरों के रूप में सदस्य देशों के लिए जारी किया गया था।

सदस्य देश निम्न तरीको से विश्व बैंक की शेयर राशि वापस चुकायेंगे -

1- 2 % सोना, अमेरिकी डालर या विशेष अहारण अधिकारों के तहत।
2- प्रत्येक सदस्य देश अपनी मुद्रा में शेयर पूँजी का 18 प्रतिशत तक राशि चुकाने के लिए स्वतंत्र हैं।
3- शेष 80 प्रतिशत राशि विश्व बैंक के मांगने पर सदस्य देशों द्वारा लौटाई जायेगी।

11.3.3 विश्व बैंक (World Bank) **के उद्देश्य**

विश्व बैंक के उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1- आर्थिक पुनर्निर्माण और विकास के लिए सदस्य देशों को लम्बे समय के लिए पूँजी प्रदान करना।
2- लम्बे समय के लिए दिया गया बकाया भुगतान बीओपी सन्तुलन और व्यापार के सन्तुलित विकास के लिए दिया जाता है।
3- छोटी व बड़ी इकाईयों और सदस्य देशों की अन्य परियोजनाओं के लिए दिये गये ऋण की गारन्टी प्रदान करते हैं।
4- युद्ध और शान्ति अर्थव्यवस्था के समय सफल विकास परियोजनाओं के कार्यान्वियन को सुनिश्चित करना।
5- निम्न तरीको से पूँजी निवेश को बढ़ावा देना -

(क) निजी ऋण या पूँजी निवेश पर गारन्टी प्रदान करते हैं।

(ख) निवेश गारन्टी के बाद भी यदि प्रस्तावित पूँजी प्राप्त नहीं होती है तो (आईबीआरडी) उत्पादक गतिविधियों पर विचारशीलता के बाद ऋण प्रदान करता है।

11.3.4 विश्व बैंक (World Bank) **के कार्य**

विश्व बैंक विशेष रूप से अविकसित देशों को विकास कार्यों के लिए ऋण उपलब्ध कराने की मुख्य भूमिका निभा रहा है। विश्व बैंक 5-20 वर्ष तक की लम्बी अवधि की विभिन्न विकास योजनाओं के लिए ऋण प्रदान करता है। भारत अकेला देश है जिसने व्यक्तिगत रूप से सबसे ज्यादा ऋण लिया है।

उपरोक्त के अलावा भी निम्नलिखित कार्य विश्व बैंक के द्वारा किये जाते हैं-

1- युद्ध से तबाह देशों के पुनर्निर्माण के लिए ऋण देना।
2- अविकसित देशों के विकास के लिए ऋण उपलब्ध कराना।
3- कृषि, सिंचाई,बिजली, परिवहन, जल आपूर्ति, शिक्षा, स्वाथ्य आदि के लिए सरकारों को ऋण उपलब्ध कराना।
4- निदिष्ट परियोजनाओं के लिए निजी संस्थाओं को ऋण उपलब्ध कराना।
5- अन्य संगठनों के माध्यम ऋण गारन्टी द्वारा विदेशी निवेश को बढ़ावा देना।
6- विशिष्ट परियोजनाओं के लिए सदस्य देशों को तकनीकी, आर्थिक और मौद्रिक सलाह प्रदान करना।
7- आर्थिक सुधारों को बढ़ावा देकर अविकसित देशों के औद्योगिक विकास को बढ़ावा देना आदि कई कार्य करता हैं।

11.3.5 विश्व बैंक (World Bank) की आलोचना

विश्व बैंक के द्वारा विभिन्न सेक्टर्स में कार्य करने के पष्चात भी आलोचना की गई है जिसके बिन्दु निम्नानुसार है:-

1. ऋणों पर ब्याज की दर अधिक होना। उदाहरण के लिए भारत के हाल ही के वर्षों में प्राप्त किये गये ऋण पर ब्याज की दर 1 प्रतिशत स्पेषल सेवा व कमीषन सहित 54.4 है।
2. वास्तव में स्वीकृत किया गया ऋण हस्तांतरण या चुकाने के लिए आलोचना का सामना करना पड़ता है। बैंक द्वारा किसी भी उधार लेने वाले देश की हस्तांतरण क्षमता से न्याय करने के लिए रूढ़िवादी मानकों को लागू नहीं किया जाना चाहिये।
3. बैंक द्वारा दी गई वित्तिय मदद की राशि विभिन्न विकास परियोजनाओं के लिए बड़े महासागर में एक बूंद के समान अर्थात न के बराबर होती है।

11.4 एफआईसीसीआई (फिक्की) Faderation of Indian Chambers of commerce and Industry (FICCI)

श्री जी डी बिड़ला और श्री पुरूशोत्तम दास ठाकुरदास द्वारा भारत के राष्ट्र पिता स्व0 श्री महात्मा गांधी की सलाह पर सन 1927 में स्थापित वाणिज्य और उद्योग भारतीय परिसंघ (फिक्की) भारत में व्यापार संगठनों का एक संघ है। यह भारत का सबसे बड़ा और पुराना तथा शीर्ष व्यवसायिक संगठन है।यह भारत के व्यापार तथा उद्योगों की आवाज है। यह नीतिगत मुद्दों और दक्षता एवं प्रतिस्पर्धा बढ़ाने और विशिष्ट सेवाओं तथा वैश्विक सम्बन्धों की एक श्रृखला के माध्यम से उद्योग के लिए व्यापार के अवसरों के विस्तार पर सरकार के साथ मिलकर कार्य करता है। स्वास्थ्य शिक्षा, आजीविका, प्रशासन, कौशल, विकास, आदि को दुनिया भर के देशों के साथ साझेदारी को आगे ले जाने के लिए कार्य करता है।

फिक्की के मिडिया और मनोरंजन डिवीजन इस जीवन्त क्षेत्र में मनोरंजन उद्योग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय और वैश्विक हितों के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी में कार्य करता है।

11.4.1 एफआईसीसीआई (फिक्की) की संरचना Fadration of Indian Chambers of commerce and Industry (FICCI)

फिक्की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तन के मामले में सबसे आगे है। जो नितिगत बहस में प्रमुख भूमिका निभाता है। अपने 400 पेषेवरों के माध्यम से अर्थव्यवस्था के 38 क्षेत्रों में

सक्रिय है। नीति के मुद्दों पर फिक्की के थिंक टेंक द्वारा सरकारों और शिक्षा पर बात की है। यह एक गैर सरकारी संघ है जिसका उद्देश्य लाभ कमाना नही है।

फिक्की की सदस्या (एसएमई और एमएनसीएस) कार्पोरेट व बहुराष्ट्रीय कम्पनियों सहित निजी व सार्वजनिक दोनों को प्रदान की जाती है। विभिन्न क्षैत्रों में कार्यरत लगभग 2,50,000 से अधिक कम्पनियॉं अप्रत्यक्ष रूप से चैंबर ऑफ कॉमर्स की सदस्य हैं। यह आई टी, विशिष्ट व्यापार नीति बनाने और नेटवर्किंग के सेक्टर में सर्वसम्मति बनाने में शामिल है।यह भारत के 12 राज्यों एवं दुनियाभर के 8 देशों में हैं। इसका मुख्यालय भारत की राजधानी नई दिल्ली में है।

फिक्की के पधाधिकारीयों की सूची

अध्यक्ष -	डॉ0 ज्योत्यना सूरी
वशिष्ठ उपाध्यक्ष -	हर्षवर्धन निवोटिया
उपाध्यक्ष -	पंकज पटेल
प्रधान सचिव -	डॉ0 एल्विन दीदार सिंह
महानिदेशक -	डॉ0 अरविन्द प्रसाद

वर्तमान में फिक्की की अध्यक्ष डॉ0 ज्योत्यना सूरी हैं जो भारत होटल की अध्यक्ष और प्रबन्ध निदेशक है जो ललित सूरी हॉस्पिटिलिटी ग्रुप के अन्तर्गत होटल, महल और रिसार्ट श्रृंखला चलाता है।

फिक्की के उपाध्यक्ष पंकज आर पटेल व महासचिव एल्विन दीदार सिंह हैं। डॉ0 अरविन्द प्रसाद फिक्की के महानिदेशक हैं जो फिक्की से पहले वशिष्ठ सलाहकार पावर और उर्जा उडीसा एवं पश्चिमी बंगाल में योजना आयोग के राज्य सलाहकार थे।

फिक्की के मित्र संगठन (Allied Organisations)

1- भारतीय खाद्य व्यापार और उद्योग परिसंघ
   Confederation of Indian Food Trade and Industry (CIFTI)
2- फिक्की पंचाट और सुलह ट्ररिब्युनल
   Arbitration and Concillition Tribunal (FACT)
3- कन्जूमर केयर वास्ते फिक्की एलायन्स
   Alliance and Consumer Care(FACC)
4- फिक्की महिला संघ
   Ladies Organisation
5- आदित्य बिरला केन्द्र
   Aditya Birla CSR Centre for Excellence
6- सुक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग परिसंघ
   Confederation of Micra, Small and Medium Enterprises
7- फिक्की झरना
   Committee Against Smuggling and Counterfeiting Destroying Economy (CASCADE)

11.4.2 एफआईसीसीआई (FICCI) के उद्देश्य

फिक्की के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं :-

1- व्यापार, समुदाय और सरकार के बीच स्वस्थ वातावरण पैदा करता है।
2- अर्थ व्यवस्था को बढ़ावा देने के लिए प्रशासनिक एवं अन्य नियन्त्रण में ढ़ील देने के लिए सरकार को राजी करना।
3- अर्थव्यवस्था के वैश्वीकरण के लिए परिस्थितियों का निर्माण करना।
4- निर्यात को बढ़ावा देने, आधुनिकीकरण, गुणवत्ता नियन्त्रण, प्रदूषण नियन्त्रण आदि में सदस्यों को सहायता प्रदान करना।
5- गरीबी दूर करने, रोजगार के अवसर बढ़ाने, सामाजिक आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त करने में सरकार की सहायता करना।
6- वैज्ञानिक अनुसंधान, आयात प्रतिस्थापन, और राष्ट्रीय संसाधनों के उपयोग को बढ़ावा देना।
7- फिक्की का उद्देश्य लाभ कमाना नहीं है।

11.4.3 एफआईसीसीआई (FICCI) के कार्य

फिक्की व्यवसायिक हितों के संरक्षण और संवर्धन के लिए निर्यात को बढ़ावा देने, वाणिज्यिक मध्यस्थता, व्यापार कानून, अनुसंधान, ढ़ांचागत विकास के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान कर रहा है। फिर भी कई कार्य ऐसे हैं जो फिक्की द्वारा किये जाते हैं वह निम्नानुसार है।

फिक्की के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं :-

1- आर्थिक अनुसंधान और उद्योग तथा वाणिज्य के विकास के लिए उपयोगी अनुसंधान को प्रोत्साहित करना।
2- व्यवसायिक शिक्षा व तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था करना।
3- व्यापार समुदाय की उपयोगी जानकारी के प्रसार के लिए पत्रिकाऐं प्रकाशित करना।
4- सदस्यों के लिए पुस्तकालय की सुविधा प्रदान करना।
5- भारतीय उद्योग की प्रतिस्पर्धा शक्ति में सुधार के लिए प्रबन्धन, गुणवत्ता सुधार पर सलाह व सुझाव देना।
6- व्यापार समुदाय के महत्व के विषयों पर संगोष्ठियों , सममेलनों और कार्यशालाओं की व्यवस्था करना।
7- विदेश में निवेश का पता लगाने के लिए व्यापारी प्रतिनिधि मण्डलों को विदेश में भेजना तथा द्विपक्षीय व्यापार समझौते पर बातचीत में सहायता प्रदान करना।
8- मध्यस्थता के माध्यम से सदस्यों के बीच मतभेदों और विवादों का निराकरण करना।

ASSOCHAM

11.5 एएसएसओसीएचएएम (ASSOCHAM)

कॉर्पोरेट इण्डिया का ज्ञान वास्तुकार

एसोचैम भारत के सभी क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रमोटर मण्डलों द्वारा 1920 में स्थापित किया गया था। इसका प्रधान कार्यालय नई दिल्ली में तथा क्षेत्रिय कार्यालय अहमदाबाद बैंगलोर एवं कोलकत्ता में स्थित हैं। वर्तमान में इसके अन्तर्गत 400 से अधिक व्यापार मण्डल और व्यापार संघ है। यह सम्पूर्ण भारत में 4,50,000 सदस्यों को सेवाऐं दे रहा है। यह गवाह है भारतीय अर्थ व्यवस्था की उथल पुथल के साथ ही साथ व्यापार, वाणिज्य और देश के औद्योगिक वातावरण को आकार देने में उत्प्रेरक की भूमिका निभा काफी योगदान दिया है।

आज ''ज्ञान आधारित आर्थव्यवस्था'' की प्राद्यौगिकी संचालित साइबर युग में वृद्धि और विकास की गतिशीलता को फिर से परिभाषित करने के लिए काम में लिया गया है जो भारतीय उद्योग के लिए ज्ञान की जड़ के रूप् में उभरा है। एसोचैम व्यापार की नई दुनिया में कॉर्पोरेट भारत की आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए स्वयं को पूर्ण करने के लिए एक शसक्त, सक्रिय संस्था के रूप में देखा जाता है। एसोचैम विश्व स्तर पर प्रतिस्पर्धा करने के लिए भारतीय व्यापार के अनुकूल माहौल बनाने की दिशा में कार्य कर रहा है।

एसाचैम देश भर में फैले इसके प्रमोटर/क्षेत्रिय मण्ड़लों में अपनी ताकत के रूप में उभरा है। एसोचैम सदस्यों के लिए बातचीत का एक इंटरैक्टिव मंच प्रदान करते हैं और आर्थिक, सामाजिक और औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने के लिए नीतिगत सिफारशें तैयार करने में सहायता प्रदान करता है। इसके अन्तर्गत 59 विशेषज्ञ समितियॉ चल रही है। यह संघ अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा देने में विशेष भूमिका अदा करता है। ऐसोचैम व्यापार के लिए मूल प्रमाणपत्र व व्यापार वीजा की सिफारिश करने के लिए भारत सरकार द्वारा अधिकृत है।

इसके सदस्य निम्नलिखित क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते है-

1. व्यापार (राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय)
2. इन्डस्ट्री (घरेलू और अन्तर्राष्ट्रीय)
3. पेशेवर (जैसे : सीए, वकील, सलाहकार)
4. व्यापार और उद्योग संघों और वाणिज्य के अन्य मण्डल

11.5.1 एएसएसओसीएचएएम (ASSOCHAM) के कार्य

ऐसोचैम के मुख्य कार्य निम्न प्रकार है **:-**

1- शैक्षिक, सामाजिक, और आर्थिक पहलूओं के बारे में देश के गरीब और पिछड़े तब्के के उत्थान के लिए परियोजनाओं, कार्यक्रमों और याजनाओं में सहायता करना।

2- अच्छी कॉर्पोरेट नागरिकता के सहयोग के लिए अन्य राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय साझेंदारों और हितधारकों के साथ रणनीति को बढ़ावा देना।

3- ऐसोचैम फाउन्डेषन के हितों के क्षेत्र में निगमितसंस्थाओं और व्यक्तियों द्वारा उत्कृष्ट कार्य के सम्मान में पुरस्कार के लिए सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करना।

4- अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति तथा अन्य कमजोर वर्ग के स्वामित्व और पदोन्नत कॉर्पोरेट व उद्यमों के बीच व्यापार साझेदारी के निर्माण की सुविधा तथा कुछ सामाजिक दायित्व तथा गतिविधियों का प्रबन्धन करना।

5- अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति तथा अन्य कमजोर वर्ग तथा पिछड़े लोगों को प्रषिक्षित करने के लिए तथा उनकी सहायता के लिए खुली व्यवस्था और संगोष्टियों सम्मेलनों का आयोजन करना।

6- अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति तथा अन्य कमजोर वर्ग तथा पिछड़े लोगो के विकास तथा कौशलों / शिक्षा प्रदान संस्थानों या अनुसंधान केन्द्रों की स्थापना के लिए पाठ्यक्रमों का संचालन करने के लिए निगमित सामाजिक दायित्व की पहल और कार्यक्रमों के विकास के लिए रचनात्मक नीतियों के निर्माण में ऐजेन्सी बनाने में सहायता करना।

7- मुख्य रूप से उद्योग व कॉर्पोरेट सेक्टर के विषय में वृहद्व आर्थिक मुद्दों पर अनुसंधान में लगे लोगों के थिंक टेंक की स्थापना करना।

8- किसी भी उद्योग, व्यापार, वाणिज्य, न्यासियों तथा दूसरों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों से सम्बन्धित कार्य और अनुसंधान के निश्कशोर् व कार्य अनुकूलन का कार्य करने में सहायता प्रदान करना।

9- वादा करने के लिए तैयार पत्रिकाऐं प्रकाशित करना, पुस्तकालय बनाना तथा प्रदर्शनियों में भाग लेना आदि कार्य किये जोते हैं।

11.6 भारतीय उद्योग परिसंघ (CII) की भूमिका

भारतीय उद्योग परिसंघ (CII) के प्राथमिक लक्ष्य भारतीय उद्योग को सम्पूर्ण रूप से विकसित करने के लिए सरकार और समाज के बीच मध्यस्ता करना हैं। व्यक्ति और सरकार दोनों को ही उद्योग /व्यापार की जरूरत है और देश की भलाई में योगदान के लिए कार्य करता है।

विश्व व्यापार जगत में देश की पहचान बनाने एवं देश के आर्थिक विकास में उद्योग की भूमिका को मजबूत करने के लिए तथा भारतीय उद्योग की वृद्धि और विकास के बारे में प्रतिबद्धता को सुदृढ़ बनाने में एक उत्प्रेरक के रूप में कार्य करना।

भारतीय उद्योग और सरकार को वास्तविक डेटा प्रदान करने के लिए , जागरूकता, गुणवत्ता, पर्यावरण, उर्जा प्रबन्धन पर समर्थन, उद्योग के प्रयासों और उपभोक्ता संरक्षण बनाने के लिए छोटे - छोटे क्षेत्रों की विशेष जरूरतों की पहचान और पते पइ इसको और अधिक प्रतिस्पर्धी बनाने के लिए समकक्ष संगठनों के साथ सहयोग को बढ़ावा देना।

विश्व अर्थव्यवस्था में भारतीय उद्योगजगत और एकीकरण को वैश्विकरण की दिशा में काम करने के लिए विभिन्न राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दों पर सरकार के साथ एक सक्रिय और भागीदारी

दृष्टिकोण अपनाना। समाज के सभी वर्गो के साथ व्यापक बातचीत आयोजित करना इत्यादि महत्वपूर्ण कार्य कर देश की उन्नति करना है।

11.6.1 भारतीय उद्योग परिसंघ (CII) की संरचना

भारतीय उद्योग परिसंघ (CII) देश में उद्योग के विकास के लिए अनुकूल वातावरण बनाने के लिए कार्य करता है। जो भारतीय कारोबार का एक संघ है।

भारतीय उद्योग परिसंघ सलाहकार और परामर्ष पक्रियाओं के माध्यम से उद्योग, सरकार और नागरिक समाज, साझेदारी और भारत के विकास के लिए अनुकूल माहौल बनाये रखने के लिए कार्य करता है।

यह लाभ के लिए कार्य नहीं करने वाला एक गैर सरकारी संध है जो उद्योग के नेतृत्व और भारत के विकास की प्रक्रिया में एक सक्रिय भूमिका निभा रहा है। इसकी स्थापना 1895 में की गई थी। इसका कार्यालय नई दिल्ली में स्थित है। भारत के प्रमुख व्यापार संघ एसएमई और बहुराष्ट्रीय कम्पनियॉ एवं लगभग 250 राष्ट्रीय और क्षैत्रिय उद्योग निकायों से 10,000 से अधिक अप्रत्यक्ष सदस्यता सहित निजी व सार्वजनिक क्षेत्रों से 7,400 से अधिक सदस्य हैं।

CII नितिगत मुद्दों पर सरकार के साथ मिलकर काम कर रहे विद्वान नेताओं के साथ आमना - सामना और विशिष्ट सेवाओं व सामरिक वैश्विक संबन्धों की एक श्रृंखला के माध्यम से उद्योग के लिए दक्षता प्रतिस्पर्धा और व्यापार के अवसरों को बढ़ाने के लिए कार्य करता है।

CII भी महत्वपूर्ण मुद्दों पर आम सहमति के निर्माण और नेटवर्किंग के लिए एक मंच प्रदान करता है। व्यापार से परे ऐजेण्ड़े का विस्तार करना व कॉर्पोरेट नागरिकता कार्यक्रमों पर अमल करने के लिए सहायता करना ही इसकी पहचान है।

नागरिक सामाजिक संगठनों के साथ साझेदारी के लिए कुछ नाम जो इस प्रकार हैं - स्वास्थ्य शिक्षा, आजिविका, विविधता प्रबन्धन, कौशल विकास,महिलाओं के लिए सशक्तिकरण और पानी के लिए विभिन्न डोमेन में एकिकृत और समावेशी विकास के लिए कम्पनी को पहल करना।

राष्ट्र की सेवा के अपने 120 वें वर्ष में CII का मुख्य विषय ‘‘ भारत का निर्माण - विकास, एक साझा जिम्मेदारी में निवेश’’ राष्ट्रीय विकास में एक भागीदारी के रूप में उद्योग की भूमिका और जिम्मेदारी को दोहराती है। मानव पूँजी के विकास और सामाजिक विकास को प्रोत्साहित करने, बुनियादी ढांचे में निवेश को बढ़ावा देने को सुविधाजनक बनाने के विकास और प्रतिस्पर्धा पर फोकस के चार महत्वपूर्ण समर्थक हैं।

106 देशों में 300 समकक्ष संगठनों के साथ 9 उत्कृष्टता के केन्द्र भारत में और आस्ट्रेलिया, चीन, मिस्त्र, फ्रांस, सिंगापुर, ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका में 7 विदेशी कार्यालयों सहित 64 कार्यालय हैं। साथ ही संस्थागत भागीदारी के साथ एक CII के रूप में कार्य करता है।

CII भारतीय उद्योग जगत और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार समूह के लिए सन्दर्भ बिन्दू के रूप में कार्य करता है।

11.6.2 भारतीय उद्योग परिसंघ (CII) के सहयोगी सदस्य

1- 1895 - इन्जिनीयरिंग एवं आयरन ट्रेड एसोशियशन
2- 1912 - भारतीय इन्जिनीयरिंग एसोशियशन।
3- 1942 - भारत के इन्जिनीयरिंग एसोशियशन।
4- 1974 - भारतीय इन्जिनीयरिंग उद्योग के संघ।

5- 1986 - भारतीय उद्योग परिसंघ।

6- 1992 - भारतीय उद्योग परिसंघ (CII)

11.6.3 भारतीय उद्योग परिसंघ (CII) के कार्य

यह एक बहुत ही पेशेवर संगठन है । यह उद्योग और सरकार को सलाह, सूचनायें एवं प्रतिनिधित्व सेवाऐं प्रदान करता है।

इस रूप में इसके मुख्य कार्य निम्नलिखित है :-

1- उत्पादकता, गुणवत्ता और मानव संसाधनों में सुधार करने के लिए तकनीकी अनुसंधान को प्रोत्साहित करना।

2- व्यवसायिक शिक्षा व तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था करना।

3- व्यापार समुदाय की उपयोगी जानकारी के प्रसार के लिए पत्रिकाऐं प्रकाशित करना।

4- वाणिज्य को बढ़ावा देने के लिए व्यापार मेलों और प्रदर्शनीयों का आयोजन करना।

5- सरकार को रचनात्मक सहयोग प्रदान करना

6- व्यापार समुदाय के महत्व के विषयों पर संगोष्ठियों, सम्मेलनों और कार्यशालाओं की व्यवस्था करना।

7- विदेश में निवेश का पता लगाने के लिए व्यापारी प्रतिनिधि मण्डलों को विदेश में भेजना ।

8- सरकार जो नीतियॉं बना रही है उसमें व्यापार समूदाय का प्रतिनिधित्व करना।

11.7 एनएसडीएस (NSDS)

मौजूदा डिजाइनों को लागू करने और सांख्यिकी प्रक्रिया के विकास में राष्ट्रीय नीति के प्रबन्धन के लिए सभी आवश्यक तत्व दिशा निर्देशों उपस्थित थे। 2013 तक लगभग 100 विकासशील देशों में एनएसडीएस प्रक्रिया में काफी अनुभव प्राप्त किया है। इस अनुभव को साझा किया और अधिक सुलभ बनाया गया ।

एक बदलते सन्दर्भ के लिए सांख्यिकी पर्यावरण विकसित किया गया है। और अन्तर्राष्ट्रीय सांख्यिकीय पहल की एक सार्थक संख्या राष्ट्रीय सांख्यिकी प्रणाली सांख्यिकी (NSS) रणनीतिक प्रबन्धन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। सांख्यिकी के क्षेत्र में कई अन्तर्राष्ट्रीय पहल उत्तरोत्तर एनएसएस(NSS, MDDS, SDDs, NQAF, DQAF, SNA 2008, IPC, लिंग, कृषि, वैश्विक रणनीति है ध्यान में रखा जाना चाहिए जबकि नये नियमों और मानकों को अपनाया गया है।) भी धन ऑकडों के लिए उभरती राष्ट्रीय विकास ऐजेण्डे का जिक्र उनकी उपेक्षा ना करें। यह देश एक दूसरे या यहॉं तक की एक तिहायी रणनीति को लागू कर रहें हैं।

आमतौर पर शब्द ''ऑकडे'' का अर्थ आबादी के मानक सांख्यिकी सूचनाओं और मात्रा तथा उपयोगिता, अनुमानित का प्रतिनिधित्व या जानकारी का मतलब है। राज्य स्तर पर पहचान होने के

कारण इसका उपयोग अथवा इस्तेमाल किया जाता है। और सांख्यिकीय प्रणाली के रूप में सरकारी आंकडों को परिभाषित करता है। सरकारी ऑंकडों के संयुक्त राष्ट्र संघ के मौलिक सिद्धान्तों का एक लोकतान्त्रिक समाज की सूचना प्रणाली में एक अनिवार्य तत्व प्रदान करता है।

आर्थिक, जनसांख्यिकीय, सामाजिक और पर्यावरणीय स्थिति के बारे में ऑंकडों के साथ सरकार अर्थव्यवस्था और जनता की सेवा के रूप में अधिकारिक ऑंकडें वर्णन करता है।

राष्ट्रीय सांख्यिकी प्रणाली ओईसीडी के अनुसार राष्ट्रीय सांख्यिकी प्रणाली (NSS) संयुक्त रूप से इक्कट्टी प्रक्रिया और राष्ट्रीय सरकार की ओर से सरकारी ऑंकडों का प्रसार है कि एक देश के भीतर सांख्यिकी संगठनों और इकाईयों का पहनावा है राष्ट्रीय सरकार की ओर से जनता के किसी भी पैसे का उपयोग और उत्पादन किसी भी ऑंकडें में शॉमिल हो सकता है। सांख्यिकी का उपयोग कानून, नियमों और उपायों को सार्वजनिक किये जाने के लिए कर रहे हैं।

सांख्यिकी कम्पनियॉं सांख्यिकी ऑंकडों का संग्रहण, प्रसंस्करण, भण्डारण और प्रस्तुति के लिए तरीकों और प्रक्रियाओं पर वैशानिक सिद्धान्तों व व्यवसायिक नैतिकता सहित शक्ति से, पेशेवर कारणों से तय किये जाने की जरूरत है।

11.7.1 एनएसडीएस (NSDS) डिजाइन की प्रक्रिया

यह एक रणनीति पर अमल करने की क्षमता रणनीति की गुणवत्ता से अधिक तहत्वपूर्ण है कि निष्कर्ष निकाला गया था क्योंकि कई प्रभावी ढंग से तैयार की गई रणनीति भी असफल हो जाती है। इसलिए यह रणनीति डिजाइन निशपादित और पूरी तरह से लोगों के प्राथमिक महत्व का है। प्रक्रिया की गुणवत्ता तो सफलता की एक महत्वपूर्ण शर्त है

एक परिणाम के रूप में यह है कि इन दिशा निर्देशों NSSs आयोजन या प्रबन्धन में किसी भी अच्छी या सर्वोत्तम प्रथाओं की सलाह देते हुये उचित नहीं लग रहा है। फिर भी प्रासंगिक दस्तावेज का भण्डार से दस्तावेजों को व्यवस्थित ढंग से किया गया है।

11.8 सारांश

आज के इस वैश्विकरण के युग में प्रतिस्पर्धा का महत्व बढ़ गया है। प्रत्येक देश अपने विकास को नये आयाम दे ने जा रहा है किन्तु इसमें सबसे बड़ी समस्या पूँजी की आती है। इस समस्या से निपटने के लिए सम्पूर्ण विश्व जगत एक होकर विभिन्न संघों के माध्यम से कार्यकर रहा है । इसमें औद्योगिक संघ और अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाऐं- आईएलओ वर्ल्ड बैंक, एफआईसीसीआई, एएसएसओसीएचएएम, CII और एनएसडीएस की भूमिका महत्वपूर्ण रही है जिसमें सभी संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य विश्व में गरीबी को दूर करने एवं विकासशील देशों को आगे बढ़ाने का प्रयास किया गया है। उपरोक्तानुसार गरीबी उन्मूलन कार्य, व्यवसाय एवं रोजगार गारन्टी अनुसूचित जाति/अनुसूचित जन जातियों को आगे बढ़ाना अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नीतियॉं बनाकर कार्य करना। व्यापार जगत को एक दूसरे का सहयोग प्राप्त होना। पुनर्स्थापन के लिए ऋण देना इत्यादि महत्वपूर्ण कार्य किये जाते हैं जिसमे सभी के समान उद्देश्य हैं। जो अपने आप में एक सराहनीय कार्य है।

11.9 अभ्यास प्रश्न

निम्न लिखित कथन के आगे सही और गलत अंकित करें -

1- फिक्की की स्थापना कौनसे सन 1927 में की गई थी। ( )

2- उद्योग संघ के जनसंख्या पर रोक लगाते हैं। ( )

3- वर्ल्ड बैंक का मुख्यालय भारत में स्थित है। ( )

4- फिक्की की अध्यक्ष डॉ0 ज्योत्सना सूरी है। ( )

5- CII भारतीय उद्योग जगत और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार समूह के लिए सन्दर्भ बिन्दू के रूप में कार्य करता है। ( )

उत्तर **:- 1.** सही **2.** गलत **3.** गलत **4.** सही **5.** सही

निबन्धात्मक प्रश्न

1- उद्योग संघ की भूमिका का विस्तार से वर्णन कीजिए ?

2- विश्व बैंक के उद्देश्य एवं कार्यों को बताईये तथा आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए ?

3- एफआईसीसीआई के मित्र संगठन कौन - कौन से हैं तथा कार्यों का उल्लेख कीजिए?

4- CII क्या है ? सविस्तार समझाईये ?

एनएसडीएस डिजाइन की प्रक्रिया समझाइये ?

11.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- 1996-2015 अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन एक लेख
- www.worldbank.org
- www.assocham.org
- Nsdsguidelines.paris21.org
- www.bpesa.org.za
- www.aicci.in
- www.cii.in

इकाई - 12

व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण से सम्बंधित नीतियाँ

Policies related to VET

इकाई की रुपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 व्यावसायिक शिक्षा का अर्थ

12.4 व्यावसायिक शिक्षा का भारत में सिंहावलोकन

12.5 व्यावसायिक शिक्षा के निहितार्थ

12.6 विभिन आयोगों की व्यवसायीकरण पर संस्तुतियाँ

12.7 व्यावसायिक शिक्षा सम्बन्धी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 व 1992 में निर्देश

12.8 व्यावसायिक शिक्षा शिक्षा के विकास के लिए चार सूत्री कार्यक्रम

12.9 शिक्षा के व्यवस्यीकरण की प्रक्रिया को दृढ़ करने हेतु सुझाव

12.10 वर्तमान में व्यावसायिक शिक्षा हेतु कार्यक्रम

12.11 सारांश

12.12 अभ्यास प्रश्न

12.13 संदर्भ सूची

12.1 प्रस्तावना Introduction

गाँधी जि ने शिक्षा के अर्थ की व्याख्या करते हुए स्पष्ट किया है कि शिक्षा का अर्थ अक्षर ज्ञान नहीं हैं, शिक्षा एक साधन मात्र है | ज्ञान के साथ-साथ शरीर तथा आत्मा का विकास भी अत्यन्त आवश्यक है | गाँधी जी का मत है कि बुद्धि की सच्ची शिक्षा हाथ, पैर, आंख, कान, नाक आदि शरीर के अंगों के ठीक अभ्यास और प्रशिक्षण से हो सकती है | अर्थात इन्द्रियों के बुद्धिपूर्वक उपयोग से बालक की बुद्धि को विकसित करने का उत्तम और लघुत्तम मार्ग मिलता है | परन्तु जब मस्तिष्क और शरीर का विकास साथ-साथ न हो और उसी मात्रा में आत्मा की जाग्रति न होती रहे, तब तक केवल बुद्धि के एकाकी विकास से कुछ विशेष लाभ नहीं होगा |

आज की इस बदलते युग में जहाँ संचार के माध्यमों ने पूरे विश्व को एक वैश्विक गाँव में बदल दिया है, ऐसे में ab यह आवश्यक हो गया है कि प्रत्येक बालक कौशलपूर्ण हो, जिसे सम्पूर्ण तकनीकियों का ज्ञान हो तथा किसी एक में विद्धवता प्राप्त हो जिसे वह अपनी जिविकोपार्जन का साधन बना सके| वर्तमान समय में अधिकतर माता-पिता यह सोचते है की बालकों को शिक्षा इसलिए दिलवानी चाहिए ताकि वे कोई रोजगार पाने में सक्षम हो सके | सभी प्रकार के व्यावसायिक कार्यो या धंधो को करने के लिए सामान्य शिक्षा के साथ विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है | इस उद्देश्य पर आज के समय में अधिक जोर दिया जा रहा है, क्योंकि आधुनिक औद्यौगिक

युग में विभिन्न प्रकार के विशेषीकरण विकसित हो गये है | विशेष प्रकार के व्यावसाय या काम धंधो के लिए विशेष प्रकार का ज्ञान के प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है | अत: यह स्पष्ट है कि दो प्रकार की शिक्षाएँ होती है- एक जो, किसी एक पेशे को अपनाना सिखाये और दूसरी कैसे जीये, यह सिखाये |

12.2 उद्देश्य Objective

- विद्यार्थी व्यावासिक शिक्षा का अर्थ जान सकेंगे |
- विद्यार्थी भारत में व्यावसायिक शिक्षा की रूपरेखा को समझ सकेंगे |
- विद्यार्थी व्यावसायिक शिक्षा के निहितार्थ को समझ सकेंगे |
- विद्यार्थी विभिन आयोगों की व्यवसायीकरण पर संस्तुतियाँ को जान सकेंगे |
- विद्यार्थी व्यावसायिक शिक्षा सम्बन्धी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 व 1992 में दिए गये निर्देश को जान सकेंगे |
- विद्यार्थी व्यावसायिक शिक्षा शिक्षा के विकास के लिए चार सूत्री कार्यक्रम को समझ सकेंगे |
- विद्यार्थी शिक्षा के व्यवसायीकरण की प्रक्रिया को दृढ़ करने हेतु सुझाव को समझ सकेंगे |
- विद्यार्थी वर्तमान में व्यावसायिक शिक्षा हेतु कार्यक्रम के बारे में जानने में रूचि ले सकेंगे |
- विद्यार्थी व्यावसायिक शिक्षा की महत्वत्ता को जान कर उससे प्राप्त करने के लिए प्रयास करेंगे |

12.3 व्यावसायिक शिक्षा का अर्थ (Meaning of Vocationalization of Education)

शिक्षा के व्यावसायीकरण से तात्पर्य व्यावसायिक विषयों के अध्ययन की व्यवस्था करना जिनका अध्ययन करके तथा सम्बंधित प्रशिक्षण प्राप्त कर विद्यार्थी किसी रोजगार के योग्य बन सके | व्यावसायिक शिक्षा के अंतर्गत व्यापार औद्योगिकी, कृषि आदि से सम्बंधित विषय तथा कार्यक्रम सम्मिलित है | व्यवसायीकरण एक विस्तृत प्रत्यय, इसमें अनेक छोटे-बड़े व्यवसाय आते है |

शिक्षा आयोग, 1964-66 ने व्यावसायिक शिक्षा का अर्थ इस प्रकार बताया है "हमारी यह कल्पना है कि भविष्य में स्कूली शिक्षा की प्रवृत्ति सामान्य एवं व्यावसायिक शिक्षा के लाभदायक मिश्रण की ओर होगी | सामान्य शिक्षा में पूर्व- व्यावसायिक शिक्षा एवं तकनीकी शिक्षा के कुछ तत्त्व सम्मिलित होंगे और इसी प्रकार व्यावसायिक शिक्षा में सामान्य शिक्षा के कुछ तत्त्व सम्मिलित होंगे |"

12.1.1 व्यावसायिक क्षमता का अर्थ – व्यावसायिक क्षमता का अर्थ है –

(i) कार्य के प्रति नई भावना को जन्म देना जिससे विद्यार्थी कार्य के महत्त्व को समझ सकें

(ii) विद्यार्थियों को अनुभव कराना कि देश की समृद्धि इस बात पर निर्भर है कि हम जिस कार्य को आरम्भ करें उसे यथाशक्ति सफल और सुंदर बनाएँ

(iii) सभी शिक्षक इस बात का प्रयत्न करें कि यह बात पाठशाला में विद्यार्थियों के व्यवहार में स्पष्ट रूप से दिखाई दे और

(iv) शिक्षा के सभी स्तरों पर व्यावसायिक क्षमता का विकास हो जिससे औद्योगिक और तकनीकी क्षेत्र में कुशल व अनुभवी व्यक्ति मिल सकें |

12.1.2 शिक्षा के व्यवसायीकरण की आवश्यकता (Need of Vocationalization of Education)

आधुनिक औद्योगिक समाज की आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए तथा भावी नागरिकों को तदनुरूप उद्पादक मूलक शिक्षा प्रदान करने के लिए शिक्षा का व्यवसायीकरण न केवल आवश्यक है अपितु अनिवार्य हो गया है | विद्यार्थी को रोजगार प्राप्त करने, उन्हें स्वरोजगार के कार्य स्थापित करने तथा उचित कौशल निर्माण करने के लिए व्यावसायिक शिक्षा का विशेष योगदान है | देश में बढते हुये पढ़े-लिखे बेरोजगारों की संख्या घटाने की, उनकी क्षमताओं एवं योग्यताओं का उचित उपयोग करने का केवल एक ही मार्ग है और वह है शिक्षा का व्यवसायीकरण |

12.1.3 शिक्षा का व्यवसायीकरण के कारण

शिक्षा का व्यवसायीकरण निम्न कारणों से महत्त्वपूर्ण है -

1) ***विद्यार्थियों की विभिन्न योग्यताओं एवं अभिरुचियों का विकास*** - स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा में बहुत विस्तार हुआ है | विभिन्न योग्यताओं तथा अभिरुचियों वाले विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त प्राप्त करने के लिए स्कूल में प्रवेश पाने लगे | सभी विद्यार्थियों को एक ही प्रकार की शिक्षा देना उनके प्रति अन्याय है | आवश्यकता इस बात की है कि विभिन्न कोर्सों की व्यवस्था करके उनकी योग्यताओं तथा रुचियों को उचित दिशा में विकसित होने के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान किये जाएँ | शिक्षा का व्यवसायीकरण ऐसे अवसर प्रदान करने की ओर महत्त्वपूर्ण कदम है |

2) ***बेरोजगारी की समस्या का समाधान*** – वर्तमान समय में शिक्षितों को बेरोजगारी की समस्या का सामना करना पड़ रहा है | शिक्षा के विकास के साथ-साथ बेरोजगारों को संख्या में भी वृद्धि हो रही है | इसका एक कारण है कि शिक्षा विद्यार्थी को रोजगार के लिए तैयार नहीं कराती है | इसका एक कारण है कि शिक्षा विद्यार्थियों को रोजगार के लिए तैयार नहीं करती | आज तक जो स्कूली शिक्षा चली आ रही है वह केवल क्लर्क ही तैयार करती है | शिक्षित उमीदवारों की संख्या बढती जा रही है परन्तु क्लर्कों के पद उस मात्रा में उपलब्ध नहीं है अत: यह आवश्यक है कि शिक्षा का व्यवसायीकरण किया जाये कि वे अपने पांव पर खड़े हो सके |

3) ***देश की उत्पादकता बढाना*** – कोठारी आयोग ने उत्पादकता के विकास को शिक्षा का महत्त्वपूर्ण अंग माना है | यह एक सर्वमान्य सत्य है कि किसी भी देश की प्रगति उसकी उत्पादन क्षमता पर निर्भर होती है | लोग जितना उत्पादक कार्यों में लगेंगे, देश उतना ही समृद्ध होगा | शिक्षा का व्यवसायीकरण विद्यार्थियों को उत्पादकता की ओर अग्रसर करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है | शिक्षा का व्यवसायीकरण के महत्त्व को दर्शाते हुए कोठारी आयोग ने कहा है , "देश में उपेदयता बढ़ाने के लिए माध्यमिक शिक्षा को प्रबल व्यवसायीकरण रूप देना आवश्यक है |"

4) ***देश का तेज गति से आर्थिक विकास*** – देश में आर्थिक विकास निहित प्राकृतिक साधनों की कमी नहीं परन्तु उनका उचित प्रयोग न होने के कारण वे व्यर्थ जा रहे है | इसी कारण हमारी आर्थिक स्थिती कमजोर है | हमारा देश औद्योगीकरण की ओर अग्रसर है परन्तु कुशल कारीगरों उचित प्रकार के प्रशिक्षित व्यक्तियों के आभाव में उतनी तेजी से प्रगति नहीं कर पा रहा है | इसका मुख्य कारण हमरी शिक्षा पद्यति है जो पुस्तकीय ज्ञान पर

आधारित है साथ ही अव्यवहारिक और अव्यवसायिक है | देश की तीव्र आर्थिक गति तभी हो सकती है जब विभिन्न क्षेत्रो के लिए उचित ढंग से प्रशिक्षित कर्मचारी मिल सकेंगे |

5) ***नैतिक मूल्यों का विकास*** – प्रायः ये देखा गया है कि बेरोजगारी अपराध प्रवृत्ति को बढावा देती है क्योंकि "खली दिमाग शैतान का घर होता है" | अत: व्यक्ति को इस प्रकार का प्रशिक्षण मिलना चाहिए जिससे वह सम्मान पूर्वक जीवन व्यतीत कर सके | व्यवसायिक शिक्षा व्यक्ति को जीवन निर्वाह के लिए सक्षम बनाना कर उसका नैतिक विकास भी कर सकती है |

6) ***शिक्षा प्रक्रिया को उद्देश्यपूर्ण बनाना*** – रटने रटाने की शिक्षा का कोई उद्देश्य नहीं होता | व्यक्ति किसी व्यवसाय के योग्य न होने के कारण पढाई करता चला जाता है और ऐसी शिक्षा प्राप्त करता है जिसका जीवन में कोई अर्थ नहीं होता | अत: शिक्षा को उद्देश्य पूर्ण बनाने के लिए व्यवासियक मोड़ देना आवश्यक है |

7) ***आनंद की प्राप्ति*** – व्यक्ति को सच्चा आनंद उस समय प्राप्त होता है जब उसे अपनी रूचि का व्यवसाय मिल जाता है | शिक्षा का व्यवसायीकरण करने से व्यक्तियों को उनकी विशिष्ट योग्यताओं के विकास के अवसर प्रदान किये जा सकते है | वैसे आनंद की प्राप्ति कई कारकों पर निर्भर है |

8) ***उचित व्यक्तियों के लिए उचित स्थान***- शिक्षा का व्यवसायीकरण उचित व्यक्तियों को उचित स्थान तथा उचित कार्य प्राप्त करने में सहायता देता है तथा मानवीय प्रतिभा और साधनों के अपव्य को रोकता है |

12.4 व्यावसायिक शिक्षा का भारत में सिंहावलोकन (Overview of vocational education in India)

माध्यमिक स्कूलों के विद्यार्थियों के लिए व्यावसायिक शिक्षा को आरंभ करने की सिफारिश सबसे पहले 1882 में हंटर कमीशन अथवा शिक्षा आयोग 1882 ने की | उसके बाद शिक्षा का व्यवसायीकरणकरने के पक्ष में अनेक कमेटियों तथा आयोगों ने सुझाव दिए | वह निम्न है- कलकत्ता विश्वविद्यालय कमीशन 1917, हर्टाग कमेटी 1929, सप्रू आयोग 1934, बेसिक शिक्षा समिति 1937, वुडऐबट रिपोर्ट 1936, माध्यमिक शिक्षा आयोग 1936 -37, शिक्षा आयोग 1964-66, 10+2 कमेटी रिपोर्ट 1937 (10+2), राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986, आदिशेषय्या राष्ट्रीय शिक्षा समिति 1987 ने देश में शिक्षा का व्यवसायीकरण की एक विस्तृत योजना बनाई है |

12.5 व्यावसायिक शिक्षा के निहितार्थ (Implications of Vocationalization of Education)

व्यावसायिक शिक्षा के प्रभावी विकास के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक है –

1) उचित व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का प्रावधान |

2) उचित सामग्री का प्रावधान |

3) उचित निर्देशन तथा परामर्श का प्रावधान |

4) आर्थिक विकास के संदर्भ में मानव संसाधनों की पूर्ति |

12.6 विभिन आयोगों की व्यवसायीकरण पर संस्तुतियाँ (Recommendations of various commissions on Vocationalization of education)

I माध्यमिक शिक्षा आयोग, 1952-53 तथा शिक्षा का व्यावसायीकरण (Secondary Education Commission, 1952-53 and Vocationalization of Education)–

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अनुभव किया कि शीघ्र परिवर्तित होते देश के सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक ढाँचे में मैकाँले की चलाई हुई शिक्षा-पद्धति बेकार-सी हो गई है और आज की परिस्थिति में यह मेल नहीं खाती है | स्वतंत्र भारत में जन-कल्याण का लक्ष्य सामने रखा गया है, अत: इसकी प्राप्ति के लिए शिक्षा का नवीन ढांचा ही सहायक सिद्ध हो सकता है | यह सर्वादित है कि टैक्निकल क्षेत्र में कार्य करने वालों की अत्यंत कमी है | हमारे बहुत से ऐसे उद्योग व धंधे है जिनको चलने के लिए निपुण कारीगर नहीं मिलते है तथा इस आभाव में ये उद्योग व धंधे उन्नति नहीं कर सकते | दूसरी ओर पुस्तकीय विषय पढ़कर महाविद्यालयों से निकलने वाले विद्यार्थियों की कोई कमी नहीं, बिना कम के हजारों शिक्षित घूमते दिखाई देते है जो कोई कार्य नहीं करते और समाज के लिए एक प्रकार का 'अभिशाप' बन गए है | आज के समय में आवश्यकता इस बात की है कि भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वाले युवक व युवतियों को कौश्लात्मक ढंग से प्रशिक्षित कर तैयार किया जाये ताकि वह अपने अपने क्षेत्र में सक्रिय भूमिका निभाएँ |

आयोग ने कहा है- "छात्रों में श्रमनिष्ठा की मनोवृत्ति के निर्माण के साथ-साथ शिक्षा के सभी स्तरों पर प्राविधिक कौशल एवं योग्यता को विकसित किया जाना चाहिए जिससे देश में औद्योगिक विकास हो सके |" आयोग ने प्रस्ताव किया है – "हस्तकला एवं उत्पादन कार्य पर सभी विद्यालयों में पर्याप्त बल दिया जाना चाहिए | साथ ही माध्यमिक स्तर पर विभिन्न पाठ्यक्रम आरम्भ किए जाएँ जैसे- कृषि, प्राविधिक, व्यापारिक एवं अन्य व्यावहारिक पाठ्यक्रम |"

माध्यमिक शिक्षा आयोग की व्यावसायिक शिक्षा सम्बन्धी सिफारिशें निम्नलिखित है-

बहुउददेशीय विद्यालयों की स्थापना - आयोग ने संस्तुति की कि एक ही स्कूल में कई प्रकार के पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जाए | व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को चलाने के लिए उद्योग-धंधो से तालमेल स्थापित किया जाए | विद्यार्थियों के मार्गदर्शन के लिए शैक्षिक एवं व्यावसायिक मार्गदर्शन सेवाएँ उपलब्ध कराई जाएँ | इन विद्यार्थियों ने इस प्रकार के पाठ्यक्रम सफलतापूर्ण कर लिया हों, उन्हें पोलीटेक्निक अथवा टेक्नोलाजिकल कालेजों में उच्च विशेष पाठ्यक्रम लेने का अवसर दिया जाए |

- कृषि शिक्षा-सभी राज्य देहाती स्कूलों में खेतीबाड़ी की शिक्षा की विशेष सुविधा का प्रबन्ध करे तथा इस प्रकार के पाठ्यक्रम में हार्टीकल्चर की शिक्षा सम्मिलित हो |
- पोलीटैक्निकों में पूर्णकालिक अध्ययन की सुविधाओं के विस्तार के अलावा इस स्तर पर सैंडविच या पत्राचार के पाठ्यक्रम द्वारा व्यवस्थित किए गए अंशकालिक व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का विकास किया जाए |

- कृषि तथा इंजीनियरी पोलीटैक्निकों को जो रोजगार में लग गए है, उन लोगों की प्रवीणता को उन्नत करने के लिए या जो पहले से ही योग्यता प्राप्त कर चुके है उनकी योग्यता बनाए रखने या उनको पुनः शिक्षित करने के लिए छोटे-छोटे संक्षिप्त रूप में बनाए गए स्तर पाठ्यक्रम चलाने चाहिए |
- औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में पढाए जाने वाले बहुँत-से पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए कक्षा 10 पूरा करने की योग्यता की अपेक्षा की जाती है | इन सुविधाओं का तेजी से विस्तार किया जाए |
- स्वास्थ्य, वाणिज्य, प्रशासन, छोटे पैमाने के उद्योगों और सभी सेवाओं में तरह-तरह के दूसरे पाठ्यक्रम विकसित किए जाने चाहिए, जिनकी अवधि प्रमाण-पत्र या डिप्लोमा की योग्यता के लिए छ:महीने से तीन साल तक की हो सकती है | ये पहले से ही रोजगार में लगे लोगों को अंशकालिक या पत्राचार के आधार पर भी पढाएं जा सकते है |

  "कार्यक्रम के महत्त्व और भरी पैमाने पर उसके चलाए जाने की दृष्टि में यह अत्यावश्यक है कि राज्य शिक्षा विभागों में शिक्षा अनुभाग खोले जाएँ और उसको इस तरह के पूर्णकालिक या अंशकालिक पाठ्यक्रमों को आयोजित करने पर पूरा-पूरा प्रभार सौंपा जाए | ऐसे कार्यक्रम को आयोजित करने से अनुभवों को जनशक्ति की जरूरतों को ध्यान रखना चाहिए और व्यावसायिक मार्गदर्शन के तंत्र और सामान्यत: उद्योगों और मालिकों के साथ निकट का सहयोग रखते हुए कम करना चाहिए |"

स्कूल स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा के विकास के लिए केन्द्रीय अनुदान – केंद्र सरकार राज्य सरकारों को केंद्र आयोजित क्षेत्र में विशेष अनुदान देने की व्यवस्था करे | माध्यमिक स्कूलों में व्यावसायीकरण के लिए दिए गए अनुदानों ने ही संयुक्त राज्य अमेरिका में माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण को प्रेरणा दी थी और यह अनुभव भारत के लिए महत्त्वपूर्ण पाठ देने वाला है |

1) **अंशकालिक व्यावसायिक शिक्षा** – आयोग ने विभिन्न स्तरों पर अंशकालिक व्यावसायिक शिक्षा पर बल दिया |
2) **लड़कियों के लिए विशेष शिक्षा** - जो लडकियाँ 14 वर्ष की आयु के आस पास स्कूल छोड़ देती है, उनके लिए गृह विज्ञान या सिलाई, कला और शिल्प, मुर्गी-पालन, दुधशाला, आदि जैसे घरेलू उद्योगों में पूर्णकालिक या अंशकालिक पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जाए | ये पाठ्यक्रम अल्पकालीन, पूरे समय के लिए या अंशकालिक और लम्बे समय अरसे तक चलने वाले हो सकता है |
3) **तकनीकी शिक्षा** – मल्टीपरपज स्कूल के पास एक भाग के रूप में अथवा अलग से तकनीकी स्कूल पर्याप्त संख्या में स्थापित किए जाये |

   बड़े-बड़े शहरों में केन्द्रीय तकनीकी संस्थाएँ खोली जाएँ जो कि स्थानीय स्कूलों की आवश्यकता को पूरी करे |

   जहाँ तक संभव हो तकनीकी स्कूल सम्बंधित उद्योग के निकट स्थित हों तथा सम्बंधित उद्योग के सहयोग से कार्य करें |

   'औद्योगिक शिक्षा कर' के नाम से उद्योगों पर कुछ कर लगाया जाना चाहिए तथा इस प्रकार प्राप्त आय को तकनीकी शिक्षा के विकास में लगाना चाहिए |

II कोठारी शिक्षा आयोग तथा माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा (Kothari commission on Vocationalization at the Secondary Stage) –

कोठारी आयोग ने देश में उत्पादन बढाने के लिए माध्यमिक शिक्षा को प्रबल व्यावसायिक मोड़ देना आवश्यक समझा | साथ ही विश्वविद्यालय स्तर पर कृषि और शिल्प शिक्षा पर अधिक जोर देने की संस्तुति की | आयोग का विचार था कि वर्तमान भारतीय परिस्थिति में शिक्षा का व्यावसायीकरण का विशेष महत्त्व है क्योंकि प्रचलित शिक्षा प्रणाली युवकों को सरकारी नौकरियों तथा बाबूगिरी पेशे के लिए तैयार करती है |

व्यावसायिक शिक्षा का आयोजन (Organization of vocational Education)

1. लोवर माध्यमिक स्तर (Lower Secondary Stage) –

(i) औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में ऐसे पाठ्यक्रम हैं, जिनमें प्राथमिक स्कूल को पूरा कर लेने वाले विद्यार्थी जा सकते हैं | यदि इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश की आयु बढाकर 14 कर दी जाए, तो जो विद्यार्थी प्राथमिक स्कूलों को पूरा कर चुके हैं, उनमें से बहुँत से औद्योगिक प्रशिक्षण के इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश ले सकेंगे |

(ii) उद्योगों में नौकरी के लिए विद्यार्थी को तैयार करने वाली तकनीकी स्कूलों में कार्यक्रमों की जो व्यवस्था हैं, वे इस स्तर पर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को दूसरी श्रेणी बन जाते है |

(iii) कक्षा 7 या कक्षा 8 के बाद जो जो बहुत से विद्यार्थी स्कूल छोड़ देते है, वे घर के कारोबार में लग जाएँ और कुछ छोटे पैमाने पर अपना ही उद्योग या व्यापार शुरू करने के विचार से स्कूल छोड़ देंगे | उनको योग्यता प्राप्त करने या अपनी प्रवीणता बढाने के अंशकालिक आधार पर बहुत सारे पाठ्यक्रम उपलब्ध होने चाहिए |

(iv) देहाती लड़कों का बहुत बड़ा अनुपात परिवार के खेत में कम करने चला जाएगा | उनके लिए आगे शिक्षा की व्यवस्था करनी होगी, जो उनको अपने पेशे की अपनी कार्यकुशलता और सामान्य समर्थ बनाएगी |

(v) लड़कियों का बहुत बड़ा अनुपात परिवार तो तुरंत ही या कुछ समय के बाद स्कूल छोड़ देगा और शादी कर लेगा | उनको गृह-विज्ञान और सामान्य शिक्षा में आगे शिक्षा दी जनि चाहिए |

2. उच्चतर माध्यमिक स्तर (Higher Secondary Stage) –

इस स्तर पर तरह-तरह के व्यावसायिक पाठ्यक्रम उपलब्ध है |

व्यावसायिक शिक्षा के निर्धारित लक्ष्य – आयोग ने 1966 में सुझाव दिया कि 1986 तक निम्न माध्यमिक स्तर पर पढने वाले 20 प्रतिशत विद्यार्थी और कक्षा 11 और 12 में पढने वाले 50 प्रतिशत विद्यार्थी अवश्य ही व्यावसायिक पाठ्यक्रम को अपनाएँ |

III आदिशेषय्या राष्ट्रीय समीक्षा समिति 1978 (Adiseshiah Report)

शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार ने अक्टूबर 1977 में श्री एस. आदिशेषय्या, उपकुलपति, मद्रास विश्वविद्यालय की अध्यक्षता में इस समिति का गठन किया | इस राष्ट्रीय शिक्षा समिति ने अपनी रिपोर्ट 'सीखना-करने को-सीखते हुए तथा कार्यरत समाज के लिए' (Learning to Do- Towards a Learning Society) शीर्षक से मार्च 1978 में भारत को प्रस्तुत की |

इस समिति का कार्यक्षेत्र 10+2 पाठ्यक्रम के सुधार हेतु विशेषकर उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण हेतु समस्याओं का अध्ययन करके सुझाव देना था |

+2 समीक्षा समिति की महत्त्वपूर्ण सिफारिशें

उच्चतर माध्यमिक शिक्षा का महत्त्व – इस स्तर की शिक्षा का महत्त्व है क्योंकि विद्यार्थी की लगभग आधी संख्या के लिए औपचारिक शिक्षा का यह अंतिम बिंदु है | इस स्तर पर सीखने के अनुभव विद्यार्थियों की जीविका के लिए और उनके जीवन के ध्येय निर्माण में विशेष महत्त्व रखते है| यह स्तर विद्यार्थी के व्यक्तित्व के निर्माण हेतु स्कूली शिक्षा एवं महाविद्यालय के बीच सेतु का काम देता है | यह किशोर अवस्था , बाल्यावस्था तथा प्रौढ़ काल के बीच का समय है | संभवतः यही ऐसी अवस्था है जिसमे अनेक प्रकार के क्षेत्रों- आध्यात्मिक एवं बौद्धिक विकास के मार्ग खुलते है | व्यक्तित्व की विशेष रुचियों, क्षमताओं आदि का सृजन एवं दमन होता है |

उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के लक्ष्य – राष्ट्रीय विकास में योगदान के लिए इस स्तर के निम्नलिखित उद्देश्य है- बेरोजगारी को रोकने में सहायता देना | ग्रामीण विकास में सहायता देना | प्रौढ़-साक्षरता में सहायता देना |

उच्चार माध्यमिक शिक्षा के दो प्रकार के पाठ्यक्रम –

(i) सामान्य शिक्षा पाठ्यक्रम और (ii) व्यावहारिक पाठ्यक्रम |

(i) सामान्य शिक्षा पाठ्यक्रम – इसमें निम्नलिखित विषय होंगें-

विषय	समय
भाषाएँ	15 %
सामाजिक दृष्टि से लाभदायक उत्पादन कार्य	15 %
वैकल्पिक विषय (तीन)	70 %

सामाजिक दृष्टि से लाभदायक उत्पादन कार्य - +2 समिति ने इस पर बहुत बल दिया क्योंकि यह क्रियात्मक है | इसेस्थानीय आवश्यकतानुसार अपनाने की संस्तुति की है | यह भी कहा है कि उसे पाठ्यक्रमों के विषयों से जोड़ा जाए और यह कार्य उचित निर्देशन में योजनानुसार किया जाए |

(ii) व्यावहारिक पाठ्यक्रम - समय विभाजन इस प्रकार होगा –

पाठ्य-विवरण	समय
सामान्य आधार पाठ्य-विवरण	15 %
भाषा (भाषाएँ)	15 %
वैकल्पिक विषय (व्यावसायिक)	70%

सामान्य आधार पाठ्य-विवरण – इन पाठ्य-विवरणों के निम्नलिखित लक्ष्य हैं-

1. विद्यार्थियों को ग्राम विकास तथा स्वंय रोजगार की आवश्यकता का अनुभव करना |
2. विद्यार्थियों को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्त्व की जानकारी देना |
3. विद्यार्थियों में लधु तथा कुटीर उद्योगों के चलाने की कुशलताओं एवं प्रबंधकीय योग्यताओं का विकास करना |
4. बेरोजगार, क्षमता से निम्न रोजगार, अविकसित तथा आर्थिक अवस्था में विद्यार्थी की अंतर्दृष्टि बढाने हेतु योग्य बनाना |

वैकल्पिक विषय (व्यावसायिक) – निम्नलिखित विशेष बातों पर बल देने के लिए कहा गया है –

1. प्रयोगात्मक कार्य पर लगभग आधा समय लगाया जाए |
2. स्वंय रोजगार तत्त्व पर विशेष ध्यान दिया जाए |
3. कृषि तथा इससे सम्बंधित व्यवसायों के पाठ्यक्रम बनाए जाएँ |

4. व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का समय साधारणत: दो वर्ष होना चाहिए |

शिक्षा के व्यावसायीकरण करने की प्रक्रिया को प्रबल बनाने के लिए सुझाव –

1. व्यावसायिक सर्वेक्षण करना |
2. ग्रामीण क्षेत्रों में व्यावसायिक स्कूलों की स्थापना करना |
3. वर्तमान व्यावसायिक पाठ्यक्रमों तथा संस्थाओं से पूरा लाभ उठाना |
4. शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन एवं परामर्श की उचित व्यवस्था करना |
5. शिक्षकों के उचित प्रशिक्षण का प्रबंध करना |
6. उचित पाठ्य-पुस्तकों का निर्माण |
7. राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा परिषद् का गठन करना |
8. अप्रेरिन्ट्स शिक्षण की उचित व्यवस्था करना |

12.7 व्यावसायिक शिक्षा सम्बन्धी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 व 1992 में निर्देश (Directions of NPE,1986 AND 1992 on vocational Education)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) – पैरा 5.16 – शिक्षा के प्रस्तावित पुनर्गठन में व्यवस्थित और सुनियोजित व्यावसायिक शिक्षा के कार्यक्रम को दृढ़ता से क्रियान्वित करना बहुत ही जरुरी है | इससे व्यक्तियों के रोजगार पाने की क्षमता बढेगी, आजकल कुशल कर्मचारियों की माँग और आपूर्ति में जो असंतुलन है, वह समाप्त होगा और ऐसे विद्यार्थियों को एक वैकल्पिक मार्ग मिल सकेगा जो इस समय बिना किसी विशेष रूचि या उद्देश्य के उच्च शिक्षा की पढाई किए जाते है |

संशोधित (1992)- पैरा 5-16 – प्रस्तावित शैक्षिक पुर्नगठन में व्यावसायिक शिक्षा के सुव्यावस्थित, सुनियोजित और कडाई से कार्यान्वित कि ये जाने वाले कार्यक्रमों का लागू किया जाना अत्याधिक महत्त्वपूर्ण है | इन तत्त्वों से विद्यार्थियों में कार्य और जीवन के प्रति एक स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित होगा, प्रत्येक विद्यार्थी के रोजगार पाने की क्षमता बढगी, कुशल जनशक्ति की माँग और आपूर्ति के बीच असंतुलन कम होगा और बिना विशेष रूचि अथवा प्रयोजन के उच्चतर अध्ययन जारी रखने वाले विद्यार्थियों के लिए एक विकल्प उपलब्ध हो जाएगा | उच्च माध्यमिक स्तर पर बच्चों को ऐसे व्यापक व्यावसायिक पाठ्यक्रम प्रदान करने का प्रयास किया जाएगा जो कि व्यवसाय-विशेष की श्रेणी में न आकर बहुविध व्यावसायिक क्षेत्रों से जुडे हुए हों |

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) – पैरा 5-17 – व्यावसायिक शिक्षा अपने में शिक्षा की एक विशिष्ट धारा होगी जीशा उद्देश्य कई क्षेत्रों के चुने गए कामधंधो के लिए विद्यार्थियों को तैयार करना होगा | ये कोर्स आमतौर पर सेकेंडरी शिक्षा के बाद दिए जाएँगें लेकिन इस योजना को लचीला रखा जाएगा ताकि आठवीं कक्षा के बाद भी विद्यार्थी ऐसे कोर्स ले सके | औद्योगिक प्रशिक्षण संसथान भी बड़ी व्यावसायिक शिक्षा के ढाँचे के अनुसार चलेंगे ताकि इनमें प्राप्त सुविधाओं का पूरा लाभ उ ठाया जा सके |

संशोधित (1992)- पैरा 5-17 – व्यावसायिक शिक्षा एक भिन्न धारा भी होगी जिसका उद्देश्य विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार के क्रियाकलापों से जुड़े हुए निर्धारित व्यवसायों के लिए तैयार करना है | ये पाठ्यक्रम साधारणत: माध्यामिक स्तर के बाद प्रदान किये जाएँगे, किन्तु इस योजना को लचीला रखते हुए वे कक्षा VIII के बाद भी उपलब्ध कराए जा सकते है |

पैरा 5-18 – स्वास्थ्य आयोजना और स्वास्थ्य सेवा प्रबंध को स्वास्थ्य से सम्बंधित व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के माध्यम से स्वास्थ्य जनशक्ति की उपयुक्त श्रेणियों की शिक्षा और प्रशिक्षण के साथ स्पष्ट रूप से जोड़ा जाना चाहिए | प्राथमिक और माध्यमिक स्तरों पर स्वास्थ्य शिक्षा व्यक्ति के परिवार और सामुदायिक स्वास्थ्य के प्रति वचनबद्धता को सुनिश्चित करेगी और उच्च माध्यमिक शिक्षा +2 स्तर पर स्वास्थ्य से सम्बंधित व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की ओर अग्रसर होगा | कृषि, विपणन और सामाजिक सेवाओं आदि पर आधारित ऐसे ही व्यावसायिक पाठ्यक्रम तैयार करने के प्रयास किए जाएँगें | व्यावसायिक शिक्षा में स्वरोजगार, उद्यमियों के लिए दक्षता और ज्ञान रुझान के बिकास पर भी जोर दिया जाएगा |

पैरा 5-19 – व्यावसायिक पाठ्यक्रमों या संस्थानों की स्थापना सार्वजानिक तथा निजी क्षेत्रों के कर्मचारियों की होगी तथापि सरकार महिलाओं, ग्रामीण तथा जनजाति के क्षेत्रो और समाज के वांछित वर्गों की आवशयकता पूरी करने के लिए विशेष कदम उठाएगी | विकलांगों के लिए भी कार्यक्रम शुरू किये जाएँगे |

पैरा 5-20 – व्यावसायिक पाठ्यक्रम के स्नातकों पूर्व निर्धारित शर्तों के अंतर्गत व्यावसायिक विकास, वृति का सुधार और बाद में समुचित सेतु के पाठ्यक्रम के माध्यम से सामान्य सामाजिक तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा के पाठ्यक्रमों में दाखिला दिया जाऐगा |

पैरा 5-21 - अनौपचारिक, लचीले अवश्याताओं पर आधारित व्यावसायिक कार्यक्रम भी नवसिखुओं, युवकों जिन्होंने प्राथमिक शिक्षा पूरी की है, स्कूल छोड़ गए है, और किसी कार्य में लगे हुए है और बेरोजगार है या वे व्यक्ति जो आंशिक रूप में रोजगारयुक्त हैं, के लिए उपलब्ध किये जाएँगे | इस सम्बन्ध में महिलाओं की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा |

पैरा 5-22 – जो विद्यार्थी शिक्षा के उच्च माध्यमिक पाठ्यक्रमों में स्नातक बनते है और उन्हें व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की भी जरुरत हो सकती है , उनके लिए शिक्षा का तृतीय स्तर के पाठ्यक्रम आयोजित किए जाएँगें |

पैरा 5-23 – यह प्रस्ताव है की उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों का दस प्रतिशत 1990 तक और 25 प्रतिशत 1995 तक व्यावसायिक पाठ्यक्रम में आ जाए | इस बात के लिए कदम उठाए जाएँगें कि व्यावसायिक शिक्षा पाकर निकले हुए विद्यार्थियों में से अधिकतर को या तो नौकरी मिले या वे अपना रोजगार स्वंय कर सके | व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का पुनरीक्षण नियमित रूप से किया जाएगा | माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रमों के विविधीकरण को बढावा देने के लिए सरकार अपने अधीन की जाने वाली भर्ती की नीति पर भी पुनः विचार करेगी |

संशोधित (1992) : पैरा 5- 23 – यह प्रस्ताव किया जाता है कि व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में 1995 तक उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को 10 प्रतिशत और 2000 अंक 25 प्रतिशित विद्यार्थियों को सम्मिलित किया जाए | यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाए जाएँगे कि व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में सफलता पाने वाले विद्यार्थियों का काफ़ी बड़ा प्रतिशत रोजगार अथवा स्वरोजगार पर लग जाता है | लागू किए गए पाठ्यक्रमों को नियमित रूप से समीक्षा की जाएगी | माध्यमिक स्तर पर विविधता को बढावा देने के लिए सरकार अपनी भर्ती-नीति की भी समीक्षा करेगी |

12.8 व्यावसायिक शिक्षा शिक्षा के विकास के लिए चार सूत्री कार्यक्रम (Four fold programme for the development of vocational Education)

नई शिक्षा निति में व्यावसायीकरण के महत्त्व को देखते हुए चार सूत्री कार्यक्रम प्रस्तावित किया गया–

व्यावसायिक शिक्षा शिक्षा के विकास के लिए चार सूत्री कार्यक्रम

(i) प्रणाली का विकास (Development of The System)

(ii) व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम (Vocational Education Programme)

(iii) विशेष वर्गों तथा स्कूलों से बाहर समुदाय के लिए कार्यक्रम (Vocational Programme for the Special Groups)

(iv) लक्ष्य तथा विकास के लिए तैयारी (Targets and Preparation for the Development)

(i) प्रणाली का विकास (Development of the System):-

1. मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा व्यावसायिक शिक्षा की संयुक्त परिषद (Joint Council for Vocational Education-JCVE) तथा व्यावसायिक शिक्षा ब्यूरों (Bureau of Vocational Education-BVE)का गठन किया गया |
2. अनुसन्धान विकास ,मॉनिटरिंग तथा मूल्यांकन कार्य करने के लिए रा.शै.अनु.परि. के अंतर्गत एक केन्द्रीय व्यावसायिक शिक्षा संस्थान (CIVE)का गठन किया गया |

3. आवश्यकतानुसार राज्य सरकारों द्वारा राज्य व्यावसायिक शिक्षा परिषद (SCVE),राज्य व्यावसायिक शिक्षा संस्थान (SIVE),व्यावसायिक शिक्षा विभाग(DVE),जिला स्तरीय समन्वय समिति (DCC) आदि का गठन किया जाये |
4. व्यासायिक शिक्षा के विकास के लिए NCERT ,CIVE,RIE,SCERT,SIVE,TTTI आदि की क्षमता में वृद्धि की जाये |
5. SCVE द्वारा व्यावसायिक सर्वेक्षण द्वारा जिलेवार व्यावसायिक मानव शक्ति की आवश्यकताओं का अध्ययन किया जाये |
6. SIVE तथा SCERT में व्यावसायिक पाठ्यक्रम सेल स्थापित किया जाये |
7. NCERT द्वारा मॉडल पाठ्यक्रम तथा मार्गदर्शक रेखाएं तैयार की जाये |
8. NCERT/CIVE अथवा SIVES/NCERT के सहयोग से व्यावसायिक शिक्षा सूचना प्रणाली को विकसित किया जाये |
9. NCERT द्वारा विभिन्न व्यावसायिक संगठनों के कार्यक्षेत्र का निर्धारण किया जाये |
10. मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा विभिन्न संस्थाओं के बीच तालमेल सम्बन्धी निर्देश दिए जाये
11. व्यावसायिक शिक्षा संगठनों ,नियुक्तिकर्ताओं व स्वयंसेवी संगठनों के बीच तालमेल हेतु निर्देश दिए जाये |

(ii) व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम (Vocational Education Programme):- इसके अंतर्गत निम्नलिखित कार्यक्रम प्रस्तावित है –

1. 8+ छात्रों के लिए विभिन्न राज्यों के व्यावसायिक शिक्षा विभागों द्वारा सीमित स्तर पर प्रयोगात्मक आधार पर व्यावसायिक शिक्षा पाठ्यक्रम शुरू किया जाए |
2. SCERTs तथा SIVEs द्वारा 10+ स्तर पर पाठ्यक्रम का उपलब्ध साधनों के सन्दर्भ में निर्धारण किया जाए |
3. इंजीनियरिंग तथा टेक्नोलॉजी में 10+ व्यावसायिक पाठ्यक्रम के छात्रों के लिए और अवसर प्रदान करने के लिए नए व्यावसायिक संस्थान स्थापित किये जाए |
4. JCVE द्वारा व्यावसायिक धारा +2 के 70% छात्रों के लिए एप्रेंटीस ट्रेनिग के लिए छात्रवृति की व्यवस्था की जाए |
5. व्यावसायिक शिक्षा द्वारा छात्रों में स्वरोजगार दक्षताओं का विकास किया जाए |
6. जिला स्तर पर जीविका कार्य दर्शन सेल गठित किया जाए |
7. विभिन्न व्यावसायिक संस्थाओं द्वारा सेतु पाठ्यक्रमों का निर्माण किया जाए |

(iii) विशेष वर्गो तथा स्कूलों से बाहर समुदाय के लिए कार्यक्रम (Vocational Programme for the Special Groups):-

1. JCVE द्वारा उपयुक्त प्रोत्साहनों के माध्यम से व्यावसायिक शिक्षा में सार्वजनिक निजी क्षेत्र के उद्योगों को शामिल किया जाए |
2. महिलाओं ,जनजातियों ,अपंग तथा विकलांग आदि जैसे विशेष वर्गों की व्यावसायिक शिक्षा में कार्यरत स्वैच्छिक संगठनों की पहचान करके सहायता प्रदान करना |

3. सभी पोलिटेक्निक संस्थाये ,औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान ,अन्य व्यावसायिक तथा तकनीकी प्रशिक्षण संस्थान उच्चतर माध्यमिक स्कूल कॉलेज तथा विशेष संस्थानों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जाये |
4. चुनिन्दा इंजीनियर कॉलेज ,पोलिटेक्निक ,औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान तथा अन्य तकनीकी प्रशिक्षण संस्थानों में विशेष वर्गों के बालकों के लिए व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जाये |
5. महिलाओं ,जनजातीय तथा समाज के अन्य कमजोर वर्गों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए राज्य व्यावसायिक शिक्षा विभागो द्वारा विशेष व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जाये |

(iv) लक्ष्य तथा विकास के लिए तैयारी (Targets and Preparation for the Development):-

साधनों की उपलब्धता का अनुमान लगाकर उसके अनुसार लक्ष्य निर्धारित किए जाए | लक्ष्य बहुत ऊँचे निर्धारित किये जाते है परन्तु उनकी पूर्ति नहीं हो पाती है | उपयुक्त साधन उसी मात्रा में नहीं मिल पाते तो परिणामस्वरूप निराशा होती है और व्यावसायिकरण की योजना को भी धक्का लगता है |

12.9 शिक्षा के व्यवस्यीकरण की प्रक्रिया को दृढ़ करने हेतु सुझाव (Suggestions for consolidating Vocationalization)

1. व्यावसायिक शिक्षा को शिक्षा का अभिन्न अंग माना जाए |
2. अनौपचारिक व्यावसायिक शिक्षा की उचित व्यवस्था की जाये |
3. व्यावसायिक शिक्षा को घटिया शिक्षा न माना जाये |
4. व्यावसायिक शिक्षा के लिए न्यूनतम व्यय का अनुमान तथा उसकी उपलब्धि आवश्यक है|
5. स्कूलों में छात्रों के लिए व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जाये |
6. व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त छात्रों के लिए सतत शिक्षा के प्रशिक्षण की सुविधा प्रदान की जाये|
7. विद्यालयों में एसी व्यावसायिक शिक्षा होनी चाहिए जो छात्रों को स्वयं के रोजगार के योग्य बना सके |

विशेष वर्गो तथा समुदाय के लिए व्यावसायिक शिक्षा :-

1. JCVI द्वारा उपयुक्त प्रोत्साहनों ,पुरस्कारों के माध्यम से व्यावसायिक शिक्षा में सार्जनिक निजी क्षेत्र के उद्योगों को शामिल करने की योजना बनायी जाये |
2. महिलाओं ,जनजातीय एवं अपंग व्यक्तियों के लिए विशेष व्यावसायिक शिक्षा का प्रबन्ध किया जाये |
3. आईटीआई कॉलेजों एवं पोलिटेक्निक कॉलेजों में व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को रोजगार के योग्य बनाया जाये|
4. जनजातीय महिलाओं के लिए विशेष व्यावसायिक प्रशिक्षणों की व्यवस्था की जाये |

12.10 वर्तमान में व्यावसायिक शिक्षा/व्यवसाय हेतु कार्यक्रम

वर्तमान समय में युवा उद्यमियों को अपनी पसंद का व्यापार करने वह उन्हें जमीनी स्तर पर इसका लाभ प्राप्त करने हेतु सरकार के द्वारा 'स्टार्टअप कार्यक्रम' शुरू किया गया है | इस कार्य को करने के लिए उद्यमियों ने कुशल नेतृत्व अहम भूमिका निभाता है | आये जाने स्टार्टअप कार्यक्रम के बारे में कि यह क्या है ?

'स्टार्टअप इंडिया' का शुभारम्भ 16 जनवरी 2016 किया गया, जिसका लाभ देश के करोड़ो लोगों को मिलेगा | स्टार्टअप के महत्त्वपूर्ण जरूरत है नए आइडिया की, नई सोच की जो प्रचलित न हो, कुछ अलग हटकर, औरों से हटकर जिसे आप सर्विस या प्रोडक्ट के क्षेत्र में लागू कर सके | आपका कम और कम करने का तरीका ऐसा होना चाहिए कि लोगों (ग्राहकों) को इस बारे में यह जानने का उत्साह होकर कि आखिर यह क्या है| स्टार्टअप शरू करते समय एक बात यह भी ध्यान रखने चाहिए कि आपके नये कम से कितने लोगों की समस्याएं हल हो सकती है | स्टार्टअप का दूसरा अहम पहेलू है बाजार | आपने जिस उत्पाद या सर्विस के लिए नया काम शुरू किया है उसके लिए क्या बाजार अनुकूल है या नहीं इस बात का जानना बहुत जरुरी है |

कैसे करे स्टार्टअप की शुरुआत –

स्टार्टअप की शुरुआत होती है प्लान (योजना) से, क्या करना है ? शुरू कहाँ से करना है ? प्रोडक्ट को कैसे आगे बढाएंगे ? आदि | इसके लिए पहले ब्लूप्रिंट तैयार करना पड़ेगा इसके साथ ही काम को जायदा स्मार्ट कैसे बनाया जा सकता है इस बारे में ये भी काम करना पड़ेगा |फाइनेंस और इन्फ्रास्ट्रक्चर भी इसका अभिन्न हिस्सा है | जिसके बारे में हमें साफ तौर पर क्लियर (स्पष्ट) होने की आवश्यकता है |

स्टार्टअप में लीडरशिप क्या ?

नेतृत्व कुशलता एक कला है | जो भी व्यक्ति एक होनहार नेतृत्वकर्ता होगा वह जटिल और असंभव से दिखने वाले कार्यों को भी आसानी और सरलता से पूरा करने की क्षमता रखता है|आमतौर पर स्टार्टअप में ज्यादातर भागीदारी युवाओं की रहती है, साथ ही इस तरह के नए व छोटे व्यवसाय में कर्मचारियों की संख्या भी कम रहती है | ऐसे में एक ही व्यक्ति को कई भूमिकाएं निभानी पड़ती हैं, जैसे कभी-कभी कंपनी के संस्थापक को ही अकाउंटेंट, पीआर और बैंक ऑफिस का काम संभलना पड़ता है |

स्टार्टअप में इसलिए जरुरी है लीडरशिप का हुनर –

चूंकि ज्यदातर स्टार्टअप छोटे स्तर से शुरू होते है | ऐसे में यदि उन्हें सही दिशा निर्देश नहीं मिले तो वह जल्द विचलित हो जाता है | इसकी पूरी जानकारी और योजना तो होनी ही चाहिए साथ में उसमें एक ऐसा हुनरमंद व्यक्ति चाहिए जो वहां काम कर सके और अन्य लोगों से काम करवा सके | इसमें center की भूमिका अहम होती है | आपको बड़ो के ज्ञान और अनुभव का प्रयोग नई तकनीक के साथ अच्छे से करना आना चाहिए | इसलिए जरुरी है कि आप अपने गुरु, मित्र, अभिभावक या अन्य किसी को अपना मेंटर बनाते हुए काम के दौरान उनसे बात करते रहे | व्यापार के दौरान मानसिक दवाब भी बहुत ज्यादा बनता है ऐसे में खुद को शांत रखते हुए ठंडे दिमाग से काम करना चाहिए नहीं तो आप अपना नुकसान कर बैठेंगे | व्यापार का प्रचार करने से बचना चाहिए क्योंकि जिन भावनाओं से आप काम से जुड़े हैं हो सकता है वह उतने प्रभावी ढंग से न जुड़ा हो | आपको

self ब्रांडिंग करनी भी बेहतर तरीके से करना आना चाहिए | अत: व्यापारी में एक अच्छे लीडरशिप के गुण होने आवश्यक है |

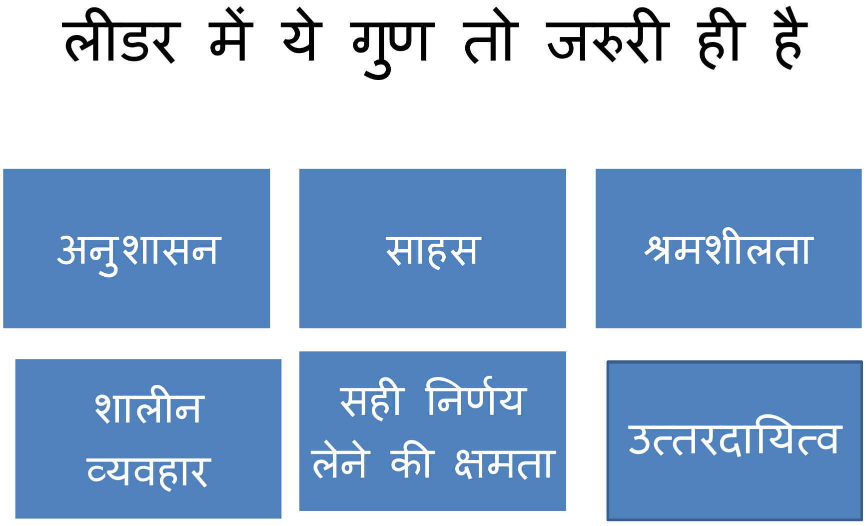

12.11 सारांश Summary

कोठारी आयोग ने शिक्षा के पांच सूत्री कार्यक्रम की व्याख्या की है जिसमे उन्होंने इस बात पर बल दिया है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति का निर्माण किया जाना चाहिए | शिक्षा ही समाज में परिवर्तन लेन का मुख्य आधार है | अत: कोठारी आयोग ने राष्ट्रीय विकास हेतु 5 कार्यक्रम प्रस्तुत किये - खाद्य सामग्री की आत्मनिर्भरता, आर्थिक विकास एवं रोजगार, सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकता, राजनीतिक विकास और मानव संबंधो एव स्त्रोतों के विकास पर बल | किन्तु आज के समय में मात्र शिक्षा प्राप्त कर डिग्री लेना ही शिक्षा ग्रहण करने का उदेश्य नहीं है | इस आधुनिकरण के युग में जहाँ शिक्षा प्रोद्योगिकी , नवीनकरण , नवाचार और कंप्यूटर आधरित शिक्षा अपना फैलाव विभिन्न क्षेत्रो में कर रही है वंहा डिग्री धारी शिक्षा के अपेक्षा व्यावसायिक या कौशालात्मक शिक्षा की आवश्यकता जो व्यक्ति को स्वरोजगार के अवसर प्रदान करे | विभिन्न आयोगों ने इस सम्बन्ध में अपनी अपनी बात रखी है जिसकी हम उपर चर्चा कर चुके है | माध्यमिक शिक्षा की विविधता, इसके व्यवसायीकरण की आवश्यकता तथा महत्त्व को जानते हुए मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा बहुत सी गतिविधियाँ शुरू की है किन्तु इसके बावजूद, शिक्षा - व्यवसयिकर्ण की योजना ने अभि पर्याप्त गति नहीं पकड़ी है | माध्यमिक शिक्षा की व्यावसायीकरण योजना की धीमी गति के कारण है- 1. सम्बंधित प्रबंध समिति का आभाव 2. व्यावसायिक प्राप्त विद्यार्थियों के लिए रोजगार की समस्याएँ 3. व्यावसायिक क्षेत्रों में रोजगार माँग तथा पूर्ति में सामंजस्य न होना 4. समाज द्वारा व्यावसायिकता की अवधारणा के प्रति उदासीनता 5. व्यावसायिक क्षेत्रों में व्यावसायिक वृद्धि के उचित अवसरों तथा उन्नति की कमी 6. व्यावसायिक सम्बन्धी संगठन का आभाव 7. व्यवसाय संबधी उपाधियों को उचित स्थान न देना 8. परम्परागत धारणा के अनुसार व्यावसायिक शिक्षा को

घटिया शिक्षा मानना | यदि व्यावसायिक शिक्षा को डिग्री शिक्षा की अपेक्षा अधिक महत्त्व दिया जाये तो निश्चित रूप से यह हमारे लिए वरदान सिद्ध हो सकती है |

12.12 अभ्यास प्रश्न

1. माध्यमिक स्कूलों के विद्यार्थियों के लिए व्यावसायिक शिक्षा को आरंभ करने की सिफारिश सबसे पहले किसने दी-
   अ) 1882 में हंटर कमीशन ने   ब) शिक्षा आयोग 1882 ने
   स) दोनों ने   द) किसी ने नहीं
2. भारत में कौनसा वर्ग अधिक है-
   अ) शिक्षित   ब) बेरोजगार   स) शिक्षित बेरोजगार   द) सभी
3. 'देश की उपादेयता बढाने के लिए माध्यमिक शिक्षा को प्रबल व्यवसायीकरण रूप देना अत्यंत आवश्यक है' किसने कहा है –
   अ) माध्यमिक शिक्षा आयोग   ब) कोठारी आयोग
   स) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986   द) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1992
4. शिक्षा के व्यवसायीकरण का अर्थ लिखें ?
5. व्यावसायिक क्षमता से क्या तात्पर्य है ?
6. शिक्षा के व्यवसायीकरण की आवश्यकता क्यों है ?
7. शिक्षा के व्यवसायीकरण करने की प्रक्रिया को प्रबल बनाने के लिए कौन-कौनसे सुझाव दिए गये है ?
8. व्यवसायीकरण के धीमी गति के कारण क्या है ?
9. व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम के अंतर्गत कौनसे कार्यक्रम प्रस्तावित है ?
10. शिक्षा के व्यवसायीकरण की दृढ़ कैसे बनाया जा सकता है ?
11. निम्न के पूरे नाम क्या है- JCVE, CIVE, NCERT, RIE, SCERT, DVE, DCC और TTTI |

12.13 संदर्भ सूची

- डॉ.यादव सियाराम : पाठ्यक्रम विकास ,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा |
- डॉ. अवधेश किशोर : कला शिक्षण एवं कार्यानुभव ,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा |
- प्रो. रूहेला एस.पी.: शिक्षा के दार्शनिक तथा समाजशास्त्रीय आधार ,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा |
- डॉ. पाण्डेय रामशक्ल : शिक्षा के दार्शनिक तथा समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि ,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा |
- डॉ.माथुर एस.एस.: शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार ,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा |
- डॉ. भारद्वाज डी.सी.: पाठशाला प्रबन्ध ,सामुदायिक संगठन एवं स्वास्थ्य शिक्षा ,अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा |
- डॉ.एकरा जेकब : शिक्षा का समाजशास्त्र ,आई सी एस एस आर नई दिल्ली |

- शर्मा आर.के, दुबे श्रीकृष्ण ,डॉ.बरीलिया : शिक्षा सिद्धांत एवं आधुनिक भारत में शिक्षा ,राधा प्रकाशन मंदिर, आगरा |
- गुरसरन दस त्यागी , 2002 : भारत में शिक्षा का विकास , विनोद पुस्तक मंदिर , आगरा |
- www.google.com

1	भारत में व्यावसायिक शिक्षा का इतिहास : व्यावसायिक शिक्षा से संबंधित नीतियॉ	1
2	व्यावसायिक शिक्षा : प्रकृति, अर्थ, आवश्यकता तथा महत्व	14
3	शिक्षा और कार्य, वैश्वीकरण, कार्य और ज्ञान, जेंडर एवं विकलांगता संबंधित मुद्दे	26
4	कार्य एवं पाठ्यक्रम, शिक्षा में कार्य के प्रकार , क्षेत्रीय अनुभवों से सीखना/अधिगम ,सामुदायिक कार्य और सामाजिक सहभागिता	37
5	सम्प्रेषण एवं कोमल कौशल	50
6	श्रवण कौशल	66
7	प्रबंधन के मूलाधार	80
8	स्व प्रबंधन एवं समय प्रबन्धन	105
9	व्यक्तित्व का विकास	112
10	Functional English	123
11	औद्योगिक संघ और अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाऐं- आईएलओ वर्ल्ड बैंक, एफआईसीसीआई, एएसएस ओसीएचएएम, CII और एनएसडीएस	142
12	व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण से सम्बंधित नीतियाँ	157